महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण :
पुनर्मूल्यांकन

महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण : पुनर्मूल्यांकन

सपादक

डॉ. दयाकृष्ण विजय



प्रथम संस्करण — १९९० ई

मूल्य — ५०.०० रु
पचास रुपया मात्र

प्रकाशक — राजस्थान साहित्य अकादमी
हिरणमगरी सेक्टर–४
उदयपुर–३१३ ००१

मुद्रक — महावीर प्रिंटिंग प्रेस
चेतक मार्ग उदयपुर



प्रकाशकीय

वीर रसावतार महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण बहु भाषाविद् विविध कलाओं शास्त्रों तथा विद्याओं के ज्ञाता असाधारण प्रतिभासम्पन्न और यशस्वी कवि थे। सूर्यमल्लजी रससिद्ध कवि ही नहीं प्रमुख इतिहासकार व युगद्रष्टा भी थे। सूर्यमल्लजी द्वारा सृजित साहित्य में प्रमुख हैं-- चम्पू महाकाव्य वंश भास्कर, वीर सतसई, बलवद् विलास रामरजाट, बलवंत चरित धातु रूपावली स्फुट गीत, सवैया आदि। वंश भास्कर और वीर सतसई उनकी सुप्रसिद्ध रचनाएं हैं। वीर सतसई तो इस युग का सर्वश्रेष्ठ वीर रसात्मक काव्य माना जा सकता है।

सूर्यमल्लजी विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न थे। आठ पंडितों को अपने समक्ष बिठाकर व आठ प्रकार के भिन्न भिन्न छन्द उन्हें लिखवा सकते थे। उनकी वाणी वीरत्व और ओज से परिपूर्ण थी। अंग्रेजों के विरुद्ध उनके क्रान्तिकारी तेवर थे। विदेशियों की दासता से मुक्ति अपनी धरती के लिए मर मिटने का गायन उन्होंने किया। सृजन, राष्ट्रीय चेतना और जन जागृति की दृष्टि से वे हिन्दी साहित्य के अग्रणी रचनाकारों की पंक्ति में हैं। उनका रचनाक्रम व काव्यकौशल अद्वितीय है।

अकादमी ने महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण के व्यक्तित्व और कृतित्व पर मधुमती' का विशेषांक प्रकाशित किया है और अब वही सामग्री स्वतन्त्र पुस्तकाकार रूप में प्रस्तुत है। प्रस्तुत सामग्री में महाकवि के सृजन क्रम और उपलब्धियों को रेखांकित करने और पुनर्मूल्यांकित करने का प्रयास किया गया है। विद्वानों ने महाकवि के सृजन के विविध पक्षों पर प्रकाश डाला है। अकादमी-अध्यक्ष तथा लब्ध प्रतिष्ठ साहित्यकार डा० दया-कृष्ण विजय ने यह मानद् सम्पादन-कार्य निष्पादित किया है। वस्तुत अल्पावधि में यह आयोजन उन्हीं के श्रम साध्य प्रयासों का परिणाम है। इस संकलन के रचनाकारों के हम अत्यन्त आभारी हैं।

आशा है, सुधिजन इस प्रयास का स्वागत करेंगे।

२० नवम्बर, '६०

डॉ० लक्ष्मीनारायण नन्दवाना
सचिव
राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर

अनुक्रम

सम्पादकीय

स्वातन्त्र्य प्रेमी महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण

जिन्हें चारण लेखकों ने 'रसवीर मुनि उद्दण्ड मय छ गिरा निधान सुकवि रविमल्ल' कह कर सम्बोधित किया ऐसे काव्य गुणों एवं शास्त्रों के तलस्पर्शी विद्वान इतिहास एवं तत्वबोध के मूर्तिमान स्वरूप चौदह विद्या एवं चौसठ कलाओं के निष्णात ममज्ञ महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने कार्तिक कृष्ण संवत् १८७२ को बून्दी की कीर्तिमती धरा पर भावना की शोभा तथा चण्डीदान के घर में साहित्य के आंगन में जन्म लिया। यह वह काल था जब उर्दू फारसी के कवि गालिब दिल्ली आगरा में धूम मचाये थे। ग्वाल और पद्माकर जैसे रससिद्ध कवि ब्रज माधुरी से जन मानस को रसाप्लावित किये थे तथा प्रसिद्धि के शिखर पर थे। सुदूरपूर्व में बंगाली भाषा के माइकेल मधुसूदन दत्त एवं कवीन्द्र रवीन्द्र और काशी में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ब्रज और हिन्दी की शब्दावली की शलाका से देश के लोचनों में स्वातन्त्र्य एवं समाज सुधार का अंजन आंज रहे थे। यह साहित्य की प्रौढता एवं परिपक्वता का समय था तथा चारण काव्य परम्परा का अन्तिम चरण कह सकते हैं इस भाषा कवि को विकास की पूर्वपीठिका स्वरूप साहित्य की बड़ी पुष्ट भावभूमि विरासत में मिली थी।

सूर्यमल्ल मिश्रण राज्याश्रयी चारण काव्य परम्परा में लोक भाषा के सर्वाधिक सशक्त हस्ताक्षर माने जाते हैं। उनके काव्यों में चारणी कल्पना तथा प्रज्ञा का पूर्व विकसित स्वरूप देखने को मिलता है। सूर्यमल्ल जन्मजात कवि थे। वे स्वभाव से उग्र थे तो हृदय से विनम्र भी थे। उनकी लेखनी प्रचण्ड थी। शारदा उनके जिह्वाग्र पर लक्ष्मी पादाब्ज पर तो दुर्गा उनके शब्दाथ में विराजमान थी। वे निर्भीक तथा स्वाभिमानी थे। राज्याश्रयी होकर भी कभी राजा की पराभूत मनोवृत्ति से उन्होंने समझौता नहीं किया। उन्हें अपनी लेखनी की शक्ति पर विश्वास था। चाहते थे रानियां जौहर रचती रहें राजाओं के शीश युद्ध करते हुए घोड़ों की टापों में लुढकते रहें और वे उन्हें अपनी काव्यांजली से अमर करते रहें। वे लिखते हैं—

रण खेती रजपूत री, वीर न भूले बाल।
बारह बरसा बाप रा लहै वैर सकाल ॥

एसी ही एक कथा है, भिणाय की महारानी ने कवि के पास मूल्य प्राकने हेतु चूनरी भिजवाई। तब इस कवि ने एक हो बात कहलाई कि वह इस चूनरी का मोल तभी आकेगा जब वे उसे पहनकर अपने पति के साथ सती होंगी। हम जानते हैं, कवि ने महारानी के सती होने पर उन्ही की स्मृति में सती चरित्र लिखा।

राजा रामसिंह के लिए वे शकर से प्रार्थना किया करते थे कि हे शकर किसी दिन हमारे महाराजा का सिर घोड़े की टापो की ठोकर खाता दिख। ऐसा सूयमल्ल जसा वीर भावापन्न स्वाभिमानी तथा आत्मविश्वासी कवि ही कह सकता था।

उन्हे वे प्रिय नही थे जिनमे न तो पौरुष था, न स्वातन्त्र्य कामना। स्वकेन्द्रित व्यक्तित्व उन्हे कभी नही भाया। वे स्वतन्त्र प्रकृति के अलमस्त व्यक्ति थे। हवेली मे उगी इमली पर बने मचान पर बठकर वे कभी सितार बजाते तो कभी तूलिका से चित्र रचते। उनके सितार प्रेम को देखकर ही नट नागर विनोद के रचयिता राजा रत्नसिंह ने उन्हे दो सितार भेंट किये थे।

सुन्दर सतारी पठाई रतनसे जू,
बज ते पचबान की कमान कसनोसी है।

सगीत के इतने प्रेमी थे कि अपने व्यक्तित्व को भूल के तीज मे गीत गाती महिलाओ के आगे सितार बजाने लग जाते थे। छ रानियो के बीच पली एकमेव आत्मजा को खिलाने के बहाने इतना उछाला इतना उछाला कि उसके प्राण ही चले गये। पत्नी की शवयात्रा के समय सिर पर मोड बाधकर दूल्हा बन गये। रास्ते मे मिले अम्बालाल चौबे, भाई जयलाल बहादुर कलावन्त सगीतज्ञ से उनकी सारगी लेकर श्मशान मे शव के आगे बैठ गाने लगे —

लाडी जी घूघट तो खोलो,
म्हाने देखबा को चाव छ।

सगीत साहित्य कला मे डूबने के बाद उन्हे न अपनेपन की सुधि रहती थी न अपने परिवेश की वे उसी मे खो जाते थे।

महाकवि की काव्य प्रतिभा अद्वितीय थी। कल्पना नवो मेषिनी तथा सवेदना राष्ट्रभावापन्न थी। १० वर्ष की आयु मे तो उन्होने राम रजाट काव्य जिसमे राजा रामसिंह के दोनों विवाहो का विस्तार मे वर्णन है लिख दिया था। यह रामरजाट, चन्द के पृथ्वीराज रासो की टक्कर की कृति है। छन्दो मयूख तथा 'धातु रूपावली' उनके व्याकरण एव शब्द शास्त्र के ज्ञान की दुंदुभी बजा रही हैं। बलवद्विलास रतलाम के राजा बलवन्तसिंह की स्मृति मे लिखा गया है। इससे लगता है भिणाय व रतलाम भी महाकवि को उसी प्रकार प्रिय थे जिस प्रकार बूदी। महाकवि की यशस्विता की पताका थाम ग्रन्थ हैं— 'वश भास्कर' और वीर सतसई, एक महाग्रन्थ है तो दूसरा निता त स्फुट काव्य एक वर्णात्मक है तो दूसरा भावनात्मक। वश भास्कर को राजस्थान का महाभारत भी कहा जाता है। यह रघुवश की शैली मे षडभाषा सस्कृत, अपभ्रश शौरसेनी मागधी पशाची तथा प्राकृत, मे लिखा चम्पू काव्य है। यह छन्दों

की विपुलता, शब्दों की ध्वन्यात्मकता तथा अर्थ की गहनता को समेटे ऐसा महाकाव्य है जिसमें कहीं राजा को दी जाने वाली शिक्षा है तो कहीं पंडितों का दिया जाने वाला शास्त्र ज्ञान। साहित्यिकों के लिए इसमें कला और साहित्य की नई सामग्री भी उपलब्ध होती है। इसमें इतिहास व काव्य दोनों समाविष्ट है। इसकी भाषा पाण्डित्यपूर्ण तथा भाव अर्थपूर्ण हैं। इसके लेखन के पीछे भी एक कथा है। दरबार में यह बात आई कि महाभारत सा कोई ग्रन्थ लिखा जावे। महाकवि ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। फिर क्या था। कहते हैं सूर्यमल्ल आठ आठ लिपिकों को एक साथ बिठा धाराप्रवाह लिखाते चलते थे। लिखने वाले भी साधारण नहीं, उस समय के प्रसिद्ध कवि अम्बालाल दाइमा, डूंगा दाइमा, भवरजी गूजरगौड जैसे नामधारी व्यक्ति थे।

वंश भास्कर का लेखन महाकवि ने संवत् १८९७ के बैसाख माह में प्रारम्भ किया था। यह ग्रन्थ पूरा नहीं हो सका इसका एकमात्र कारण था राजा मानसिंह की पराभूत मानसिकता जिससे कवि का तालमेल नहीं हो सकता था। कवि को वही राजा प्रिय था जो देश को पराधीनता से मुक्त कराने हेतु लड़ रहे स्वतन्त्रता सेनानियों का सहयोग करता था। उन्हें नहीं जचा तो वामबाडा से बारात से लौट आये। रतलाम के राजा बलवन्तसिंह के २५००० रु की जागीर के प्रस्ताव को छोड बूंदी लौट आये।

महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने देशी रजवाडों के क्रान्तिकारियों को सहयोग देने हेतु बहुत पत्र लिखे। उनके पत्रों से स्पष्ट है कि महाकवि समय से जुड़े थे तथा उनके मन में देश को स्वतंत्र देखने की महती लालसा थी। समय की पुकार पर ही 'वंश भास्कर' को छोड़ वीर भाव जगाना अभीष्ट मान उन्होंने वीर सतसई लिखना प्रारम्भ किया। 'वीर सतसई' को स्वतन्त्रता-काल का ऊर्जस्वित स्तवक कहा जा सकता है। यह एक अनूठी कृति है। यदि महाकवि ने कुछ और न भी लिखा होता तो भी उन्हें अमर करने के लिये यह पर्याप्त है। भले ही इसके २८८ दूहे ही लिखे जा सके हों। यह रचना अपने भावों के विस्तार के कारण पूरी सतसई है। उनकी 'वंश भास्कर' तथा 'वीर सतसई' जैसी अधूरी कृतियां उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालने में पूरी तरह सक्षम हैं। 'वीर सतसई' वीर भावों को जगाने वाली, देश पर सर्वस्व बलिदान करने की प्रेरणा देने वाली तथा अपनी संस्कृति के प्रति अटूट प्रेम जगाने वाली कृति है। इसी कारण इसके दोहे आज भी जन-जन की जिव्हा पर हैं।

जैसे —

इला न देणी आपणी, हालरिया हुलराय,
पूत सिखावे पालणे मरण बडाई माय।

× × ×

जिण बन भूल न जावता गैंद गवय गिडराज
तिण बन जंबुक ताखडा ऊधम मंडे आज।

× × ×

इण वेला रजपूत वे गाजण गुण रजाट
सुमिरण लागा वीर सब वीरा रो कुल वाट।

ऐसी उक्तिया न केवल सारे राजपूत समाज को अपितु पूरे देश को जगा कर खड़ा कर देने की शक्ति रखती हैं।

वे ब्रिटिश शासन के प्रबल विरोधी थे। उनके राजाओं और जमींदारों को लिखे पत्र इस के साक्षी हैं। जब उन्हें लगा कि राजा नवाब उनके इतने प्रयत्नों और लिखन के बाद भी स्वतन्त्रता आन्दोलन से नहीं जुड़ रहे है और अंग्रेजों के गुलाम बन रहे है तो उन्हें अपने पर और अपने कृतित्व पर इतना रोष आया कि वे अपने निज साहित्य को, अग्नि में स्वाहा करने को उद्यत हो गये। जब लोगों ने देखा कि वे वीर सतसई के पृष्ठों को जलाने के लिये फाड़ रहे हैं तो उन्होंने दौड़ कर उन्हें ऐसा करने से रोका। इससे लगता है कि महाकवि का स्वतन्त्रता प्रेम कितना उग्र था।

मरु भारती के इस ओजस्वी कवि को जिनके वंश भास्कर तथा वीर सतसई पर कई भाषा लिखे जाने के बाद भी वंश भास्कर के कारण ठीक से पढ़ा तथा समझा नहीं जा सका यह दुर्भाग्य रहा। भाषा की कठिनता तथा कुछ विद्वानों ने घटनाओं तथा तिथियों की विश्वसनीयता पर प्रश्नचिन्ह लगाकर उन्हें विवादास्पद बना अलग थलग कर दिया। खड़ी बोली हिन्दी के आगमन ने मरुधरा के प्राचीन डिंगल भाषा साहित्य को जन समाज से दूर कर दिया। यह तो महाकवि की स्वातन्त्र्य एवं वीर भावनाएं ही थी जो स्वतन्त्रता के काल में फिर जी उठी तथा हमें महाकवि का स्मरण करने को विवश कर सके। सूर्य को बादल क्षण भर के लिए ढाकले परन्तु सूर्य सूर्य ही है। महाकवि सूर्यमल्ल सही अर्थों में सूर्य थे जिन्हें वंश भाषा तरंग के बादल ढाक कर भी नहीं ढक सके।

महाकवि पर भारत सरकार इसी १९ अक्टूबर को डाक टिकिट निकाल रही है। इससे पूर्व उनकी प्रतिमा बूंदी में स्थापित हो चुकी है। उनकी हवेली को शोध पीठ बनाने हेतु लिया जा चुका है। ऐसे भाषा कवि की स्मृति को स्थाई बनाने हेतु अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है। उनकी हवेली को एक वृहद् शोधपीठ का रूप दिया जाना अभीष्ट है।

मैं ऐसे स्वनामधन्य महाकवि को शत शत नमन करता हूं।

डॉ० दयाकृष्ण विजय



प्रथम स्वतन्त्रता सग्राम के उत्प्रेरक कवि सूर्यमल्ल मिश्रण

डा प्रेमचन्द विजयवर्गीय

सन् १८५७ में भारत ने पहली बार अग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध स्वतन्त्रता सग्राम छेडा था, राजपूताना और उसका एक अचल हाडोती भी उस सग्राम से अछूता नही रहा। कोटा ने उसमे सक्रिय भाग लिया तो बू दी मे महाकवि सूयमल्ल मिश्रण ने अपने काव्य के माध्यम से शखनाद किया और अप्रत्यक्ष रूप से लोगो को उस युद्ध' के लिए प्रेरित किया। सूयमल्ल के उत्प्रेरक शखना' के ये स्वर उनके वीर रसात्मक मुक्तक काव्य वीर सतसई मे स्पष्ट सुनाई पडते हैं। दूसरी ओर कुछ राजाओ, सामन्तो, जागीरदारा या ठाकुरो को सूयमल्ल द्वारा लिखे गये पत्रो से भी भारत की तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियो, पत्र लेखक की राष्ट्रीय भावना और उनकी आन्तरिक छटपटाहट का पता चलता है। तत्कालीन राजपूत राजाओ मे शौय तो था पर मुगल शासन की केन्द्र म सुदृढ और अविचल स्थापना तथा उसकी निरन्तरता न न केवल मुगल शासकों को वरन् राजपूत राजाओ, उनके सामन्तो और जागीरदारो को भी निश्चिन्त विलासिकता म डुबो दिया था, परिणामस्वरूप वे भारत पर अग्रेजो के निरन्तर बढते पजो के प्रति बेखबर उदासीन और निश्चेष्ट हो गये। परिणाम यह हुआ कि जिन देशी शासको के राज्य मे बडे-बडे बलशाली आक्रमणकारी भी प्रवेश करने का साहस नही कर पाते थे उनमे मुट्ठी भर दुबल अग्रेज भी घुसकर उत्पात मचाने लगे। वीर सतसई मे सूयमल्ल मिश्रण ने इस स्थिति का लाक्षणिक ढग से इस प्रकार व्यजित किया है—

जिण वन भूल न जावता
गद गवय गिड राज
तिण वन जबुक ताखहा
ऊधम मड ग्राज[1]

तथा—

डोहै गिड वन ताडिया
द्रह ऊडा गज दोह
सीहण नह मफेर तो
सहेंल भुलाणो सीह।

दूसरा दोहा लाक्षणिक ढग म इसी बात को पुष्ट कर रहा है कि देशी शासको के प्रणय भवर मे फस जान क कारण ही विदेशी शक्ति शोला होन हुए भी, यहा उत्पात मचा रही थी और विनाश लीला रच रही थी। एक शौय पूर्ण नतृत्व क प्रभाव म छोटे माटे राजा, सामन्त और जागीरदार विदेशी शक्ति के प्रहार क सामन घबरा कर तितर बितर हो गय थ।

ऐसे समय मे आवश्यकता थी एस कवि की जा आत्मोत्सग की महिमा बखान हुए देशवासियो को विशेषत राजपूतो को स्वतन्त्रता की प्रेरणा द सके। सूयमल्लजी ने इसी आवश्यकता की पूर्ति की। वीर सतसई क प्रारम्भ म उन्होने सब प्रथम चारणो का ही युद्ध मे चलने के लिए आह्वान किया ताकि व वहा वीर जसी करनी करें उसका बखान कर सकें क्योंकि यह काम युद्ध भूमि— अप्रत्यक्ष रूप स प्रथम स्वतन्त्रता सग्राम की कम स्थली स दूर रहन म नही बन सकता—

रण हालीज चारणा, चाह अब लग चन
करे सुहड जिसडी कहा विध सो दूर बण न।

लम्बे समय स चारणों को अपना परम्परागत कत्तव्य करन का अवसर नही मिला था और वे आराम का जीवन जी रहे थ, अब उस प्रथम स्वतन्त्रता सग्राम के समय उनके सामने अपना चारणी दायित्व निभान का फिर अवसर आया था, अत सूयमल्ल जी उनसे कहते हैं कि ऐस समय म दूर क्यो, आग क्यो नही आते।[1] इसी प्रकार ढोलियो स उन्होने कहा कि रगमहल मे गान बजाने और बारात की जवनार मे जीमन के लिए तो तुम आगे बढकर आते हो अब युद्ध भूमि (स्वतन्त्रता सग्राम-भूमि) से दूर क्यो रहते हो? युद्ध भूमि मे गिरते समय कौन वीर दूर स तुम्हारे सिन्धुराग को सुन सकगा?[2] उधर ढोलिन भी ढोली को प्रेरित करती हुई कहती है—उतावल होकर चलो देखो सवक योद्धा का घोडे को कस रहा है और स्वामी कवच को कस रहा है। वीर युद्ध मे जान को तयार हो रहा है, हमे भी उस प्रोत्साहित करन क लिए जल्दी

---

१ वीर सतसई छन्द ११
२ वीर सतसई छन्द १४

पहुच जाना चाहिए।[3] इन छन्दो मे चारणो और ढोलियो को प्रेरणा देने के माध्यम से कवि ने वस्तुत स्वतन्त्रता सग्राम के योद्धाओ के प्रेरक कवियो को ही अपनी ओर से प्रेरित किया है क्योकि उस समय प्रेरक कवियो की वाणी भी मौन धारण किये हुए थी।

कवियो का प्रेरणा देने के पश्चात् सूर्यमल्ल ने स्वतन्त्रता सग्राम के सेनानियो को वीरोचित महान सीधे प्रेरणा देना आरम्भ किया। सर्वप्रथम उन्होने उन लोगो को कोसा जो अपने स्थान और घर के मोह मे उस स्वतन्त्रता सग्राम से दूर रहकर घर मे बैठे रहे उन्होने कहा—

सोयो बैं घर मे अवट, कायर अबुक काम,
मीहा केहा देसडा जेय रहे मो धाम।[4]

उन्होने कहा कि घर के भीतर मरना यम के नरको मे ले जाता है, और उपयुक्त अवसर पर आकर मरने से इस लोक मे सुन्दर कीर्ति और परलोक मे प्रभुता की प्राप्ति होती है।[5] फिर कहा कि सरदारो दीनो को दीनता के साथ बिताने से सिंह नही कहलाओगे।[6] सूर्यमल्ल 'वीर भोग्या वसुन्धरा' के सत्य मे विश्वास करते थे, इसीलिए उस युग के सरदारो को उन्होने कहा कि कुल की अर्जित (स्वदेश) की भूमि को गवा देने वाले घर-घर मे नीद मे सोये रहते हैं परन्तु हे सरदारो! यह भूमि कुमारी कन्या (के समान) है। जो वीर है वही उसका वर है—

रसा कवारी रावता! वीर तिको ही बीद।[7]

सूर्यमल्ल वीर के शरीर का जीते जी दुर्ग से निकलना और जीव का शरीर से निकलना एक समान मानते थे दूसरे शब्दो मे वे कायरता को मृत्यु के समान मानते थे। इसीलिए उन्होने क्षत्रियो (स्वतन्त्रता के रक्षको) से कहा—युद्ध करते हुए मरकर ही, शव के रूप मे दुर्ग (सग्राम स्थल) से बाहर निकलो प्राणो के रहते दुर्ग को छोडकर न भागो तभी पीछे नेक नामी रहेगी।[8]

अनेक स्थलो पर सूर्यमल्ल ने स्वय प्रेरणा न देकर पत्नियो से प्रेरणा दिलाई है क्योकि वे नारी को प्रेरिका शक्ति मानते थे। वीर सतसई मे ऐसी ही पत्नियो की प्रतिनिधि एक पत्नी अपने पति को उद्बोधन देती हुई कहती है—हे पति! जागो, युद्ध का हुजार [illegible] का शब्द हो रहा है। अनाहूत अतिथि (शत्रु) बाहर भेंट करने

---

३ वीर सतसई, छद १५
४ वीर सतसई छद १६
५ वीर सतसई, छद २६
६ वीर सतसई, छद ३४
७ वीर सतसई, छद ३७
८ वीर सतसई, छद ७५

के लिए तुम्हें बुला रहे हैं।[9] शत्रु प्रतीक्षा कर रहे हैं। (भक्ष्य के लिए मांस प्राप्ति की आशा में) गिद्ध आकाश में उड़ रहे हैं। वीरों के कटोरों में अफीम उफन रहा है (वे उसे पान करने के लिए उद्यत हो रहे हैं)। हे पति ! नेत्रों में निद्रा को दूर करो—जागो और युद्ध में जाओ !—

पथ निहारै पाहुणा गीध निहारै गग
अमल कचोला ऊफणै नींद विछोड़ो नैंण।[10]

भारत की विशेषतः राजस्थान की वीर पत्नी जानती है कि उसके वीर पति ने स्वाभाविक रूप से होने वाले युद्ध के हल्ले को सुनकर कभी उठने में देर नहीं की इसलिए वह नींद में सोए हुए पति को प्रेरणा देती हुई कहती है कि— 'नीदाळू अब छोड़णो भीडाणो थुव पीव'।[11]

जब देश की स्वतन्त्रता खतरे में हो तो देश का नहीं प्रत्येक देशवासी का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह उसकी रक्षा करे। इसी कारण सूर्यमल्ल की वीर नारी इतने में सन्तुष्ट नहीं कि दूसरे देशभक्त जाग उठे हैं वह तो यह चाहती है कि उसका पति भी जागे इसलिए वह अपने पति से कहती है कि दूसरों के जगने में क्या लाभ ? हे लड़ने वाले सिंह तू जाग क्योंकि स्वतन्त्रता का यह युद्ध तुम्हारे ही बल पर हो रहा है।[12] जब शत्रु सामने खड़ा तब वह है अपने पति को गल-बाह छोड़ने की प्रेरणा क्यों न दे ?[13]

स्वातन्त्र्य-संग्राम के लिए सूर्यमल्ल ने पत्नियों से पतियों को ये प्रेरक वचन कहलवाये हैं। वे स्वयं भी अपने देश की स्वतन्त्रता का अपहरण करने आने वाले फिरंगियों को ललकारते हुए कहते हैं कि—इस घर पर आक्रमण करने को आना हो तो यमराज को विदाकर—अपनी मृत्यु को सिर पर लेकर आना क्योंकि हमारी स्वतन्त्रता को छीनना लोहे के चने चबाना है और लोहे के चने चबाने वाले के तो दांत टूटेंगे ही।[14] सूर्यमल्ल ने भारत की स्वतन्त्रता पर आक्रमण करने वाले फिरंगियों को साफ-साफ बता दिया था कि भारत के रक्षक वीर सेनानी को ललकारना वैसा ही है जैसा यमराज की मूछों को खींचना अथवा अपने शरीर में स्वयं आग लगा लेना। हे भोले लोगों ! यदि वह जागकर क्रुद्ध हो उठा तो तुम एक भी नहीं बचोगे !—

---

९ वीर सतसई छन्द १२८
१० वीर सतसई छन्द १२९
११ वीर सतसई छन्द १३१
१२ वीर सतसई छन्द १३२
१३ वीर सतसई छन्द १८३
१४ वीर सतसई, छन्द २१६

जम री मूछा तागवो, घन लगावो घाग
घेर न भोला ! ऊरगो ज खोजाणा जाग ।[15]

लगभग ऐसी ही बात स्वतन्त्रता मनानी की पत्नी भी फिरंगियो स कहती है। वह उन्हें सावधान करती हुई कहती है कि मेरे पति को मत छेड़ना। उस पिटारे में बैठा काला नाग ही समझना, और यह भी ध्यान म रखना कि इस साँप के जहर से बढ़कर मम का दर्द दूसरा क्या हो सकता है ?[16] अन्य स्वतन्त्रता मनानियो के उत्साह और शौर्य के बल पर ही सूर्यमल्ल फिरंगियो को चेतावनी देने और दिलाने म समर्थ हुए थे। एक नहीं अनेक वा इसी तेह की चेतावनियाँ दी और लिखवाई हैं। देश को सोया हुआ समझकर ही अंग्रेजो ने भारत की स्वतन्त्रता का अपहरण करने का दुस्साहस किया था पर सूर्यमल्ल ने वीर-पत्नी से उन्हें सावधान करते हुए कहलवाया कि मेरे पति को सोया हुआ समझकर मत छेड़ो यहाँ से चल दो। घर लौट कर पार्वती की पूजा कराओ जिससे तुम्हारी प्रियाओ का सुहाग अमर बना रहे।[17] इसी क्रम म वह देश की स्वतन्त्रता पर आक्रमण करने वाले फिरंगियो को कहती जाती है कि हे भोले लोगो ! जब तक जीवन है तब तक घर म पत्नियो के साथ आकर जीवित रहो। किन के बहकाये हुए लूट की उमंग म इस घर पर चढ़ आये हो ? जान पड़ता है दूसरो के बहकावे म आकर तुम्हारी बुद्धि मारी गयी है तभी तो तुम यहाँ चढ़कर आये हो। तुम्हारी यहाँ मृत्यु निश्चित है। इससे तुम्हारे शरीरो को अग्निदाह सहन करना होगा और तुम्हारे घर मे रोना ही शेष रह जाएगा। इसलिए तुम भूलकर भी आग के ऊपर पैर मत देना उसमे जलने पर राख ही बाकी बचती है। काले नाग के फन पर अगर पाप मारे तो उससे नाग के फन का क्या बिगड़ेगा ? हम चाहे गरीब हैं झोपड़ियों वाले हैं पर झोपड़ियो को लूटने म प्राणो का मोल चुकाना होता है इस बात को ध्यान म रखना ! इस कारण समझदारी अपना कर अपने घर (देश) को लौट जाओ, अन्यथा इस झोपड़ (देश) को लूटना तुम्हे बहुत महँगा पड़ेगा— तुम्हे प्राण देने पड़ेंगे।[18]

देश की स्वतन्त्रता पर आक्रमण करने वालो को ललकारने वाले और उनसे प्रतिशोध लेने वाले ऐसे ही वीर सूर्यमल्ल के लिए वरेण्य रहे है, क्योंकि ऐसे वीरो का नाम लेकर ही वीर लोग युद्ध के लिए तैयार होते है ऐसे ही वीर समस्त वीरो के प्रातःस्मरणीय बनते हैं। यही कारण है कि सूर्यमल्ल ने वीर सतसई म स्वयं की ओर से प्रेरणा देने के अतिरिक्त वीरो की पहिचान पर शत-शत छन्द लिख डाले हैं। ऐसे वीरो म नर और नारी दोनो हैं। नरो म वीर बालक, वीर पुत्र, वीर पिता, वीर पति, वीर देवर, वीर जेठ सम्मिलित हैं तो वीर नारी मे वीर माता वीर पुत्री, वीर बहिन, वीर भाभी, वीर पत्नी और वीर सास सम्मिलित हैं। वीर नारी का वीरत्व-प्रेम अन्य किसी काव्य

१५ वीर सतसई छद २१७
१६ वीर सतसई, छन्द २१८
१७ वीर सतसई छन्द २१९
१८ वीर सतसई, छद २२० से २२९

म इतना मुखरित नही हुआ है जितना वीर सतसई मे। यहाँ तक कि वीर पति की कायरता पर वीर पत्नी की और वीर मात्र की कायरता पर रणरजन, गधिन सुनारिन आदि की व्यथा-व्यजना जिस प्रकार इस काव्य म व्यजित हुई है वसी अन्यत्र दुलभ है।[19] युद्ध से पलायन करने वाला के प्रति तिरस्कार की भावना और व्यग्योक्तियाँ भी इस काव्य म अनेक स्थानो पर व्यक्त हुई है।[20]

भारत के प्रथम स्वतत्रता सग्राम म कूद पड़ने की प्रेरणा देने के लिए सूयमल्ल ने वीर सतसई मे कई युक्तियाँ अपनायी है। इसके लिए जहाँ उन्होने वीर नर और वीर नारी की उनके विविध रूपो म, पहिचान बताई है उनके वीर भव्य और स्वातन्त्र्य प्रेम की व्यजना की है आत्मोत्सग की महिमा बतायी है वहीं कायरो के प्रति व्यग्य के माध्यम से शौय, साहस और स्वतत्रता के लिए आत्म बलिदान के लिए अप्रत्यक्ष प्रेरणा भी दी है। कायर क्षत्रियो को सम्बोधित करते हुए उन्होने लिखा कि स्वामी (देश) के नमक का तिरस्कार कर भागो मत। मृत्यु के उपरात जब यम-यातना भोगोगे तब तुम्हे पता चलेगा कि तुमने कितना बुरा काम किया था।[21] वे कुलटा के पुत्र होत हैं जो पृथ्वी का नमक खाकर उसका कज नही चुकाते। अरे भोले! किस डर के मारे युद्ध भूमि से भाग चले? क्या मृत्यु के भय से? इस प्रकार भागने से भी क्या वह तुम तक नही आ पहुँचेगी? यो भागकर क्या मौत से बच जाओगे? तुम तो मौत स नही बच सकोगे पर ऊँचे कुल की वधू-तुम्हारी पत्नी-जब दूसरी स्त्रियो को देखगी, जिनके पति युद्ध से नही भागे हैं तब वह शम के मारे मर ही जाएगी।[22]

कायरो पर अपनी ओर से व्यग्य करने और उनकी भत्सना करने के अतिरिक्त कवि ने माता से अपने कायर पुत्र की और पत्नी से अपने कायर पति की भत्सना भी करवाई है। वीर माता तो अपने कायर पुत्र से कहती है— हे पुत्र! मैंने तुझे अपने शरीर को क्षीण करने वाला स्तन पान कराकर तुझे बडे कष्ट के साथ पाला था। पालते समय मुझे यह मालूम न था कि तू जनमदानी माता के दूध को लज्जित करके युद्ध भूमि से भाग आवेगा—

पूत! महा दुख पालियो वय-खोवण थण पाय
मैं न जाणी, आवसी जामण दूध लजाय।[23]

पत्नी द्वारा कायर पति की भत्सना पर तो सूयमल्ल ने आठ छद लिखे है जिनम बडे तीखे व्यग्य है। युद्ध म भागे हुए अपने पति को फटकारती हुई वीर पत्नी कहती है— हे पति! युद्ध भूमि से घर कसे लौट आये? क्या तलवारो के घने भय से?

---

१९ वीर सतसई छद २८२ २७३, २७६ २७७ और २७८
२० वीर सतसई छद २६२ २६३ २६४ २६५ २६६, २६७
२१ वीर सतसई छद २६२
२२ वीर सतसई छद २६४
२३ वीर सतसई, छद २६५

यदि एसा है तो मेरे लहगे मे घुस कर छिप जाइय। शत्रु का कोई भरोसा नही, कही यहाँ घर मे भी न ग्रा पहुँचे—

> कत ! घरे किम ग्राविया तेगा रो घण त्रास ?
> लहँगे मुझ लुकीजिये वैरी रा न विसास।[२४]

ग्रन्य व्यग्योक्तियो मे वीर पत्नी कायर पति से कहती है— हे पति अच्छा हुग्रा तुम (जीवित) घर लौट ग्राये ग्रव यह मेरा वेश पहनलो। तुम्हारी इस प्रिया का सुहाग तो लज्जित हो गया ग्रव तो तुमसे दूसरे जन्म मे ही मिलूगी— इस जन्म मे तो ग्रब तुमसे मेरा कोई सम्बध नही। ग्रब यह मेरा गहना ग्रौर मेरा वेश ग्राप पहन लीजिये, मैं तो जोगिन बन रही हू ग्रौर योगिन तुम्हारे किस काम की ? ग्रच्छा हुग्रा, तुम्हारा चूडियों का खर्च मिट जाएगा— ग्रब तुम्हे मेरे लिए चूडियाँ लाने की ग्रावश्यकता नही रहगी—

> कत ! भला घर ग्राविया पहरीजे मो वेस
> ग्रब धण लाजी चूडियाँ, भव दूजे मेंटेस।
> ग्रो ताहरगा, ग्रो वेस ग्रव, कीजे धारण कत !
> हू जोगण किण काम–री, चूडा खरच मिटत।[२५]

युद्ध भूमि से पलायन करने पर, वह ग्रपनी प्रतिक्रियात्मक वेदना ग्रौर लज्जा को व्यक्त करते हुए कायर पति से कहती है— युद्ध भूमि से भागकर ग्रौर इस प्रकार ग्रपने जीवन को बचाकर तुमने ग्रपने जीवन को व्यय कर दिया, तुम्हारी इस कायरता से मेरा तो मन मर गया है। ग्रब ग्राधी बाहो की चाली मे ग्रपने हाथ दिखाते हुए— सबके सामने सधवा वेश पहनते हुए मुझे बडी लज्जा होती है। तुम्हारे सिर के केश सफेद हो गये वृद्धावस्था ग्रा गयी, उसको देखते हुए ग्रब ग्रधिक जीने की कौनसी ग्राशा है, जिसके कारण तुमने मेरे स्तन पर रहने वाले हाथ से घास लेकर मुह मे डाला— शत्रु के सामने दीन होकर प्राणो की रक्षा की भीख माँगी।[२६] वस्तुत कायरता मे घृणा करने वाली पत्नी ने यहाँ पति से यही कहना चाहा है कि मौत सिर पर ग्रा पहुँची है, फिर भी प्राणो का इतना मोह है कि शत्रु के सामने दीनता दिखाते हो ! धिक्कार है तुम्हें !! इसी क्रम मे ग्रागे चलकर वह कहती है— हे पति ! तुम्हारे पौत्रो के पुत्र हो गये ग्रौर घर मे सतान का जाल खूब बढ गया है। देखो काल तुम पर लुभा चुका है— वह तुम्हे लेने ग्राने ही वाला है मौत निकट ग्रागयी है, ग्रब तो युद्ध से भागना छोड दो।[२७]

सूर्यमल्ल ने कायर पति के प्रति उसकी पत्नी के व्यग्य ग्रौर भत्सना भरे शब्द ही नही कहलाये हैं पति के पलायन पर ग्रपनी मार्मिक वेदना भी उससे व्यक्त करवाई

---

२४ वीर सतसई छद २६६
२५ वही छद २६७ २६८
२६ वही छद २६६ २७०
२७ वीर सतसई छद २७१

है। ऐसे पलायनकर्ता पति की पत्नी मनिहारिन से कहती है— मनिहारिन मेरे लिए लायी हुई शृंगार की यह सामग्री लेकर तू चली जा, अब फिर मेरे महल में न आना। मेरे पति चूंकि युद्ध से भाग आये हैं अतः मेरी दृष्टि में तो वे मर चुके हैं। ऐसी स्थिति में मैं विधवा भला क्या शृंगार करूंगी—

> मणिहारी जा री ! परी अब न हवेली आव
> पीव मूवा घर आविया विधवा कवण बणाव ?[२८]

इन समस्त उपर्युक्त व्यंग्य वक्रोक्तियों के माध्यम से विपरीत व्यंजना के द्वारा सूर्यमल्ल ने वस्तुतः प्रथम स्वातंत्र्य संग्राम के लिए शौर्य साहस और देशहित आत्मोत्सर्ग की ही प्रेरणा दी है। इसी उद्देश्य से उन्होंने ऐसे पति की प्रशंसा उसकी पत्नी से कराई है जो शत्रुओं की छाती पर सेना को चढ़ाकर आड़े भाले से ही उन्हें रोकता हुआ उन्हें अपनी सीमा के बाहर निकाल आता है[२९]—व्यंजना में विदेशियों को देश की सीमा से बाहर निकालकर वास्तविक या सम्भावित पराधीनता से देश को मुक्त करा लेना है।

उपर्युक्त सभी विधियों का उपयोग करते हुए सूर्यमल्ल ने वीर सतसई को भारत के प्रथम स्वतन्त्रता-संग्राम के लिए प्रेरणा का अन्यतम और अजस्र स्रोत बना दिया है— विशेषतः ऐसे समय में जबकि ईस्ट इंडिया कम्पनी का एकछत्र आधिपत्य देखकर भारत के शूरवीर अपने कुल के स्वभाव को भूल गये हों और अंग्रेजों के पराधीन हो गये हों तथा आलस्य और भोग विलास में जीवन को व्यर्थ गवां दिया हो।[३०]

'वीर सतसई' स्वातन्त्र्य-प्रेरणा की एक ऐसी दुधारी तलवार है जो एक ओर वीरों को तो दूसरी ओर कायरों को प्रेरित करती है। वह एक ऐसा द्विस्वरी शंखनाद है जो वीरों को युयुत्सु और कायरों को युद्धोद्यत बनाता है। वह ऐसी दीप शिखा है जो वीरों और कायरों दोनों के घर आंगन को आलोकित करती है। वीर सतसई का यह प्रेरणास्पद रूप स्वयं उसके कवि ने स्वीकारा है— किसी आत्मश्लाघावश नहीं, एक उज्ज्वल सत्य की स्वीकारोक्ति के रूप में। उनके स्वयं के पद्यबद्ध शब्दों में यह सतसई एक ऐसी रचना है जो सुनने पर वीरों के प्राण लेने वाली है और कायरों को काटे की भांति चुभन वाली है जिसे सुनकर वीर युद्ध में प्राण दे देंगे और कायर लोग त्रस्त हो उठेंगे। जिन मनुष्यों में वीरता नहीं है और न पूरा जोश है वे भी इसको सुनने पर, पूरे वीरों के समान, न समाने वाले जोश से भर जाएंगे। जो धीर पितृकुल और मातृकुल दोनों पक्षों से उज्ज्वल हैं और जो युद्ध करने में पूरे वीर हैं वे वीर तो इसे सुनकर सौगुना वीरत्व प्रकट करने का बोध प्राप्त करेंगे।[३१]

---

२८ वही छन्द २७२
२९ वही, छन्द २०४
३० वीर सतसई छन्द ४
३१ वही छन्द ६ ७ ८



महाकवि सूर्यमल्ल और बलवद्विलास काव्य

सौभाग्यसिंह शेखावत

वीर रसावतार महाकवि सूयमल्ल मिश्रण राजस्थान के बूदी राज्य के राज कवि थे। राजस्थान और गुजरात के चारण समाज की दीघकालीन कवि परम्परा मे व नि सदेह यथा नाम तथा गुण थे। वे बहु भाषाविद् विविध शास्त्रो, विद्याओ और कलाओ के महान् अध्येयता और वाणी सिद्ध कवि थे। महाकवि सूयमल्ल के विविध भाषा और कलाओ से मण्डित महाकाव्य चम्पू महाकाव्य वशभास्कर के अतिरिक्त राजस्थान के शोध विद्वानो ने वीर सतसई, बलवद्विलास रामरजाट, छदो मयूख, सतीरासो, धातु रूपावली और स्फुट गीत सवैयो का उल्लेख किया है। किन्तु छदो मयूख सतीरासा जसी उनकी कोई स्वतत्र रचना किसी भी राजकीय तथा निजी सग्रह ग्रथागारो मे प्राप्त नहीं है। सतीरासो के लिये तो यह सभावना है कि बलवद्विलास मे भिनाय के राज व्यास ब्रज वल्लभ और महाराज बखतावरसिंह की पत्नियो के सती होने के छद हैं उन्ह ही विद्वानो ने सतीरासो का नाम देने की भूल की है। इन छदो

के अतिरिक्त अन्य कोई कृति नही है। उल्लेखित कृतियो के अतिरिक्त महाकवि प्रणीत राजा बलवतसिंह पर बलवत चरित' नामक १६ छदो की एक और कृति उपलब्ध है। यह रचना बलवद्विलास के बाद में लिखी गई थी। इस प्रकार सूयमल्ल सर्जित छोटी बडी पाच कृतिया है। इनम वश भास्कर और वीर सतसई जो अपूर्ण हैं और शेष तीन पूर्ण रचनाए हैं। य राज की वश भास्कर बलवद्विलास रामरजाट बलवन चरित तो ऐतिहासिक काव्य के अन्तगत मानी जाती है और वीर सतसई भी इमम अछूती नही है। यद्यपि वीर सतसई मे किसी वश वर्णो की गाथा अथवा यथा याद्वा विशेष का वर्णन नही है पर क्षात्र धर्म और राजपूत सस्कृति मे यह पूर्णत ओतप्रोत है। इसलिये यह भी आयुधजी क्षत्रिय जाति के जातिगत स्वभाव कत्तव्य आचरण, अधिकार और जीवन-दर्शन का ही अप्रत्यक्ष रूप मे वर्णन काव्य है।

बलवद्विलास और बलवत चरित दोनो ही कृतियो का काव्य नायक एतद कालीन अजमेर प्रात के भिनाय सस्थान का राठौड नामक राजा बलवतसिंह है। एक ही पात्र पर दो अलग अलग रचनाए रचने का कारण स्पष्टत यह माना जा सकता है कि राजा बलवतसिंह और सूयमल्ल म घनिष्ठ मैत्री-सम्बध था और बलवद्विलास लिखने के पश्चात भी कवि राजा बलवतसिंह के स्नेह और प्रीति स तृप्त नही हुआ और पुन सक्षिप्त ही सही परन्तु बलवत चरित की रचना कर अपनी प्रीति का प्रमाण दिया।

बलवत चरित मे मात्र १६ छन्द हैं और उसम चरित नायक की गुण गरिमा का स्वर है। वह बलवतसिंह को एक स्वधम पालक और असीम देश भक्त के रूप मे देखता है। बलवतसिंह अग्रेजो का विरोधी और स्वतन्त्र प्रकृति का राष्ट्रसेवी व्यक्ति था। बलवत चरित मे कवि राज ने इस कथन की निम्नाकित छन्द म साक्षी दी है—

लघन को परत् प्रताप पुहवी मैं पुर
　　धाम धाम अज्जन मुलाई छन धूती की।
तीनो ऐंचि धम समस्त सरकारन को
　　छिद्र दखिबे मे रयो दिलासा दढ दूती की॥
ऐसे घोर समय भनाय के अधीस अजो
　　तै निबाहि नीके मन मान मजबूती की।
राजन के काज बलवत नर राज एक
　　तेरे पर लूबी आज लाज रजपूती की॥

बलवद्विलास महाकवि सूयमल्ल मिश्रण कृत ५८३ छदो की ऐतिहासिक काव्य कृति है। यह कृति राजस्थान के अजमेर मेरवाडा भू भाग म स्थित भिनाय सस्थान के शासक राजा बलवतसिंह राठौड की अभ्यथना पर सर्जित है। राजा बलवतसिंह

जोधपुर के राजा चन्द्रसेन के ग्यारहवें उत्तराधिकारी थे। सूर्यमल्ल ने इस ग्रन्थ मे राजा बलवन्तसिंह के पूर्वजो का संक्षिप्त एतिहासिक महत्व अंकित करने के पश्चात् बलवन्तसिंह के जन्म, शिक्षा, विनोद भ्रातृस्नेह सती के प्रसंग पर अजमेर मे नियत ब्रिटिश रजीडेंट कनल सर सदरलैंड एवं कनल जाज सारेन्स की आपत्ति और फिर अंग्रेज अधिकारियो से मेल–मिलाप प्रभृति घटनाओ का वर्णन किया है। राजा बलवन्तसिंह के विवाह, उनके अनुज बख्तावरसिंह और जोरावरसिंह के पाणिग्रहण, उनकी संतति यथादि तीर्थों की यात्राएं बख्तावरसिंह के निधन और उसकी धर्मपत्नी के सहगमन का भी इसमे आलेखन है।

महाकवि ने इस ग्रन्थ के प्रारम्भ मे भारतीय काव्य–परम्परानुसार काव्य के दोषो के शमन और गुणो के उत्कर्ष के लिए गिवगिवा तनय आदि पूजित गणपति, सरस्वती महर्षि वेदव्यास, पतञ्जलि कपिल जैमिनी और गौतम की वन्दना की है। तदनन्तर विष्णु, कमला, शिव–पार्वती ब्रह्मा सावित्री, माता पिता और अपने गुरुदेव के प्रति कृतज्ञताज्ञापन कर ग्रन्थनायक के पूर्व–पुरुषो का क्रमागत संक्षिप्त वर्णन किया है। यह वर्णन कान्यकुब्ज का त्याग कर मरुदेश मे आने के पश्चात् का अधिक विस्तृत और एतिहासिक आधारों से पुष्ट है। यहा संक्षिप्त रूप मे ग्रन्थ का कथासार दिया जा रहा है। राजा कुशस्थल के उत्तराधिकारी राजा पुंज हुआ। उसके तेरह पुत्र उत्पन्न हुए जिनमे राठौडो की पुणवीर करहा, कफालिया, चन्देल भुगलाणा, जलखेड़िया जैवस, सूरमा, सूर वायहम अभैपुरा कमधज और बीरिया शाखाओ का प्रचलन हुआ। पुंज के धर्मवद्ध हुआ है जो अग्निदान देने के कारण दानेश्वर कहलाया। उसने अपनी स्वसा का विवाह हाडा नरेश रामदास के साथ किया। उसके अजयचंद्र हुआ। उसका पुत्र अभयचन्द्र और उसका विजयचन्द्र हुआ। विजयचन्द्र ने वन्दिजनो, कवियो और याचको का एक अरब राशि का दान दिया। उसका पुत्र जयचंद्र हुआ जो सेनाधिक्य के कारण 'दल पांगुला' के विरुद से विभूषित हुआ। जयचन्द्र का पुत्र बरदाईसेन और उसके सिंहा ने जन्म लिया। दिल्ली व कान्य कुब्ज यवनो के अधिकार मे चले जाने के कारण सिंहा ने कान्यकुब्ज देश का त्याग कर द्वारिकानाथ के दर्शनो की कामना से पश्चिम दिशा की ओर गमन किया। उसने सहपरिग्रह यात्रा कर धन्यवधरा मे पल्ली (पाली) नगर मे आकर विश्राम लिया। तब पल्ली बड़ा सम्पन्न नगर था। वहां के निवासी रात दिन दस्युदलो से भयाक्रान्त और असुरक्षित बने रहते थे। पल्लिवासियो ने सीहा को पराक्रमी जानकर उससे अपनी रक्षा की प्रार्थना की। उसने लोभित धाटिकों का उन्मूलन कर पाली निवासियो को अभय किया और द्वारिकानाथ की यात्रोपरान्त लौट कर स्थायी शांति व्यवस्था का वचन दिया।

राव सिन्हा के प्रताप से अभिभूत होकर खुजराजीपति ने अपनी राजकुमारी का उसके साथ परिणय किया और अपने शत्रु राजा लक्ष्यराज (लाखा) कच्छ नरेश का उन्मूलन करने का आग्रह किया। राव सिन्हा ने लक्ष्यराज को रणभूमि मे धाराशाही कर अपने संबंधी चावड नरेश को निरापद किया। तदनोपरान्त द्वारिका प्रस्थिति से

लौट कर पाली के परिजनों का जो घटिकों से त्रस्त थे प्रमय किया। और महपुर (महेवा) को विजय कर डावियो और मोहिल क्षत्रियो को राज्यच्युत किया। राव सिन्हा ने प्रति भट पुडीर पर आक्रमण किया और उसी युद्ध मे वह वीरगति को प्राप्त हुआ। उसके सिंहासन पर आस्थान प्रतिष्ठित हुआ। आस्थान के पश्चात् क्रमश राज्यपाल, कान्हड़, जलहन, छाडा, तीडा और राव सलखा उत्तराधिकारी हुए। राव सलखा के मल्लिनाथ, जैत्रमल और वीरमदेव तीन पुत्र हुए। मल्लिनाथ ने महवा का पट्ट प्राप्त किया। और जैत्रमल तथा वीरमदेव ने सीवाना तथा खेड प्रान्त को अधिकृत कर वहां का शासन किया।

राव मल्लिनाथ के जगमाल, भारमल, और रणमल नामक तीन पुत्र हुए। मल्लिनाथ की सतति का महेवा पर अधिकार रहने के कारण उनकी महवा शाखा की प्रसिद्धि हुई। रावल मल्लिनाथ के समय मे भाडगनेर का शासक जोहिया दल्ला परिग्रह सहित मल्लिनाथ की छत्रछाया मे आ रहा और रावल मल्लिनाथ को उपयान स्वरूप स्वर्ण के थाल दिए। दल्ला को धनाढ्य जान जगमाल ने कैतवतापूर्वक उसे मारकर द्रव्य हरण का आयोजन किया। किन्तु छलाभास हो जाने से दल्ला मल्लिनाथ का आश्रय त्याग कर उसके भ्राता राववीरमदेव के पास खेड जा रहा और वीरमदेव का प्रतिउपकार मे प्रसिद्धि प्राप्त अपनी समाव नामक श्रेष्ठ घोडी भेंट मे दी। इस पर कुमार जगमाल राव वीरमदेव पर क्रुद्ध हो उठा और वह घोडी उसे समर्पित करने की धमकी दी। राव वीरमदेव पारिवारिक कलह से भीत होकर अपने पुत्र देवराज गोगा देव, जयसिंह, विजयराज और अपनी पत्नी चावडी सहित खेड को त्यागकर सेनावा ग्राम मे आया और वहां के शासक राणगदेव की राजकुमारी के साथ विवाह किया। तदन्तर पटरानी चावडी और चारो राज पुत्रो को सेनावा मे रखकर स्वय नवप्रणीता रानी सहित दल्ला जोहिया के पास जागलू प्रदेश मे चला गया। जोहियो ने अपने पूर्व उपकार का स्मरण कर राववीरमदेव का हार्दिक स्वागत किया और जागलू का आधा भाग उसे दे दिया। जागलू मे वीरमदेव के पुत्र चुण्डा का जन्म हुआ। वीरमदेव ने जोहियो के उपकार का विस्मरण कर पुत्र जन्मोत्सव के व्याज से उनके कुलपूज्य वृक्ष फरास का उन्मूलन किया तथा सूकर के लोहू को वक्षो पर छिडक कर उनकी अवमानना का अगाह्य कार्य किया। और दल्ला के दामाद का वध कर उसके शासित ग्रामो पर आधिपत्य कर लिया। इस अनयता से कुपित होकर दल्ला के अवरोध करने पर भी राव वीरमदेव पर आक्रमण कर उसे मार डाला। तब राव वीरमदेव की पत्नी मागलियाणी अपने शिशु पुत्र चुण्डा सहित वहां से निकल कर कालाऊ ग्राम मे प्रच्छन्न रूप मे रहने लगी। आला बारहठ ने उनकी सहायता की।

चुण्डा के वयस्क होने पर ईदा क्षत्रियो ने उसके साथ अपनी कन्या का विवाह किया। और सन्निक सहायता देकर राजा हमीर पडिहार को परास्त कर मडोर पर चुण्डा को अधिष्ठित किया। राव चुण्डा के चतुर्दश पुत्र हुए जिनमें रणमल ने अपने अग्रज कानुगाल और उसके पुत्र नबद का सहार कर मडोर पर अधिकार कर लिया।

उसने सिपसवाटी के निपलो को पराजित कर उनके ३६० ग्रामों सहित मोजत भाग पर अपना स्वा स्थापित किया। राव रणमल के प्रतापराज करणसिंह चम्पतराय आदि मोर जोधराज प्रभृति प्रतापी २४ पुत्र हुए। जोधराज (जोधा) ने मदयराण से नागिल छीनकर मडौर पर अधिकार कर लिया और सवत् १५१५ वि० मे अपने नाम पर जोधपुर नगर का निर्माण कर उसे राजधानी का गौरव प्रदान किया।

राव जोधा के सूरजमल उदयराज दूदा कर्मसिंह रत्नसिंह विक्रमराज (बीका), बीदा आदि द्वादश पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हुए। राव सूरजमल 1) के बाघा और उसके गगादेव (गगा) तथा गगदेव के राव मानदेव ने जन्म लिया। राव मानदेव का सिंहासन राजा चन्द्रसेन ने प्राप्त किया। किन्तु राजा चन्द्रसेन के अनुज उदयसिंह ने बादशाह अकबर की सैन्य शक्ति प्राप्त कर चन्द्रसेन से जोधपुर छीन लिया। किन्तु राजा चन्द्रसेन अपनी स्वतत्र प्रकृति के कारण आजीवन शाही हुकूमत का विरोधी बना रहा।

राजा चन्द्रसेन के पुत्र उग्रसेन ने मदस (मादलिया) भील को मारकर भिनाय को अधिकृत किया। उग्रसेन का उत्तराधिकार राव कर्मसेन ने ग्रहण किया। कर्मसेन के साहस और वीरता की आख्यायिकाओं से प्रभावित होकर बादशाह ने उसे दिल्ली आमन्त्रित किया और आम दरबार का आयोजन कर माहिमरातिब के सम्मान से वद्धित किया और बलख विजय के लिए विदा किया। बलख से आगमन पर बादशाह ने हाथी, घोडा पखा छत्र सहित राजा की पदवी प्रदान कर कुण्डाना विजय पर भेजा। राजा कर्मसेन ने तोपो का घेरा डालकर कुण्डाना पर आक्रमण किया। उक्त युद्ध मे राजा कर्मसेन का अनुज अभयराज सिरच्छेदन के बाद भी शत्रुओ पर खड्गाघात करता हुआ वीर गति को प्राप्त हुआ। अनेक शत्रुओ का ध्वसन कर विजय प्राप्त की। तब बादशाह ने राजा कर्मसेन के पुत्र को कुण्डाना का सैनिक अधिकारी नियत किया। उदयभानु ने राजा छत्रपति शिवा को अधिकारच्युत कर वहा शाही व्यवस्था स्थापित की और फिर स्वदेश के लिए विदा प्राप्त की। उसके पश्चात् क्रमश केशरीसिंह जगतसिंह कर्णसिंह सालिमसिंह दलेलसिंह उदयभानु (द्वितीय) और सूरजभानु भिनाय के अधिपति बने। राजा सूरजभानु के चरित्रनायक बलवतसिंह बख्तावरसिंह और जोरावरसिंह तीन पुत्र उत्पन्न हुए। राजा बलवतसिंह का विक्रमाब्द १८७३ मे जन्म हुआ।

तदनन्तर ग्रथकार ने राजा बलवन्तसिंह के जन्मग्रहो का वर्णन किया है। जन्मकुण्डली के वर्णन मे कवि ने अपने ज्योतिष विद्या के ज्ञान का प्रकटन किया है। चरित्रनायक के जन्मग्रहण के समय मगल कार्य का उल्लेख करते हुए राजस्थान मे पुत्र जन्मोत्सव पर सम्पन्न किए जाने वाले रिवाज थाल बजाना, मधु और स्वर्ण शिशु के मुख मे देना नालच्छेदन, विप्रो को दान, यज्ञादि अनुष्ठान आदि का चित्रण किया है। इस प्रकार सांस्कृतिक अध्ययन के लिए इसमे पर्याप्त सामग्री है।

यहाँ कवि ने बलवन्तसिंह के द्वय लघु भ्राताओ का आयुक्रम भी प्रकट किया

है। बलवन्तसिंह को पितृसुख नहीं मिला। वि० स० १८८१ में उनके पिता राजा सूरजभानु कालधर्म को प्राप्त हुए और उनको भिणाय का सिंहासन मिला। वह विद्द्जनों की ससद से मत्रणा कर राज्य सचालन करने लगे। इसके अग्रिम वृत्तान्त में कवि ने वेदमत, जनमत और बौद्धमत का विवेचन किया है। ज्ञानखण्ड से अभिहित वर्णन में कवि ने योगमीमासा, उपासना, भक्ति आदि का आलेखन किया है।

धर्मधर्म का व्याख्यान करते हुए कवि ने आगे वर्ण उनके विहितकर्म, चारों आश्रमों तथा राजधर्म पर अधिक विस्तार के साथ प्रकाश डाला है। राजधर्म में कोश, सेना मत्रीपरिषद, उनके गुण भेद और कर्त्तव्यों, शत्रु मित्र दण्डनीति का वर्णन किया है। सेना मे गज अश्व, रथ, पदाति सेना, गजाश्वो की जातियाँ, उनके सामुद्रिक शुभा शुभ लक्षण और उन लक्षणों के गुणदोष बतलाये गये हैं।

राजा बलवन्तसिंह की दिनचर्या मे सध्या वन्दन समद शास्त्राध्ययन, शस्त्र सचालन अश्वारोहण, आखेट और सगीत नृत्य के आयोजनो पर भी विचार किया गया है।

पन्द्रह वर्ष की आयु मे बलवन्तसिंह द्वारा पितृश्राद्ध करने के लिए गयापुरी की यात्रा तथा मथुरा, वृन्दावन, गोकुल और गिरिराज यात्रा सम्पन्न कर लौटने का आलेखन है। कथित वय मे राजा बलवन्तसिंह का कछवाहो की खगारोत शाखा के पचवर सस्थान के स्वामी सुमेरसिंह की राजकुमारी अमरकुवरि के साथ विवाह करने का भी उल्लेख ग्रन्थ मे पाया जाता है।

सवत् १८८४ मे राजा बलवन्तसिंह के अनुज बख्तावरसिंह का मेवाड के धनोप ठिकाने के स्वामी राणावत देवीसिंह की कमलावती नामक राजकुमारी से पाणिग्रहण हुआ। उससे छोटे जोरावरसिंह ने दो विवाह किये। प्रथम कछवाहो की राजावत शाखा के भवानीसिंह की कन्या जडावकुवरि और द्वितीय कछवाहा जोरावरसिंह की पुत्री से पाणिग्रहण हुआ।

राजा बलवन्तसिंह ने तेवीस वर्ष की आयु प्राप्त होते ही अपने राज्य मे सूर्यदेव का मन्दिर निर्मित किया। आपने पिता की स्मृति मे छत्री बनवाई और प्रजा के सौख्य के लिए जलाशयो का निर्माण करवाया। आपने राज्य के प्रत्येक ग्राम मे केशवराय भगवान् के मदिरो का निर्माण कर अपने कोश से उनकी सेवा पूजा का प्रबन्ध किया। प्रजा के लिए धर्मार्थ प्याउएँ प्रारम्भ की।

इसी काल मे राजा बलवन्तसिंह के राज्य व्यास प० व्रजवल्लभ का निधन हो गया और उसकी सहधर्मिणी ने पति के शव के साथ आत्मदाह करने का निश्चय किया। उसके पारिवारिक जनो ने उसे ऐसा न करने लिए बहुतेरा समझाया पर वह अपने

निश्चय पर अडिग रही। तब यह समस्या राजा बलवन्तसिंह के समक्ष प्रस्तुत की गई। बलवन्तसिंह ने उसके कौटुम्बी जनों द्वारा उसे पुन अपना सहगमन का निर्णय त्यागने का प्रयत्न करवाया और शेष जीवन भागवत्भक्ति में व्यतीत करने के जीवनयापन की राज्य द्वारा व्यवस्था करने का आश्वासन दिया। किन्तु वह अपने आग्रह स जब नही हटी तब उसे सहगमन होने की स्वीकृति मिली। यह समाचार जब अजमेर स्थित अंग्रेज प्रशासक जाज लारेंस को गुप्तचरो से मिला तो वह बहुत ही रुष्ट हुआ और राजा बलवन्तसिंह को तत्परता से अजमेर बुलवाया। वह अपने दलबल सहित जार्ज लारेंस के पास गया और घटना का यथातथ्य वत्तान्त उसे कह सुनाया। रेजीडेन्ट जार्ज लारेन्स बलवन्तसिंह की साहस तथा निर्भीकता से स्तब्ध हो गया और उसने उसे दण्डित करने के स्थान पर अपनी मन्त्रणा परिषद का सदस्य नियुक्त कर सम्मान प्रदान किया।

इस अप्रिय प्रसग के पश्चात् ही राजा बलवन्तसिंह पर पुन एक भयकर दुखद विपत्ति को सहने के लिए उद्यत होना पडा। उनके प्रिय अनुज बख्तावरसिंह का असामयिक निधन हो गया और उनकी धर्मपत्नी कमलावती ने पति के साथ सहगमन की आकांक्षा की घोषणा की। उस समय अजमेर मे कर्नल सदरलैण्ड रेजीडेन्ट था। सती-प्रथा को कानूनन अवैध घोषित किया जा चुका था। राजस्थान के जयपुर, बीकानेर, जोधपुर और उदयपुर प्रभति सभी राज्यो के शासकों से समझौता हो चुका था कि यदि उनके शासित राज्य मे कही कोई सती होगी तो उस अपराध का दायित्व उन पर होगा। ऐसे विकट सकटकाल मे राजा बलवर्तसिंह के स्वय के घर मे हा मा बनी। पहिले तो राजा ने सती को अनेकविध समझाया किन्तु जब वह सहमत न हुई तब उसे दान-पुण्य कर सती हो जाने की स्वीकृति प्रदान की। इस वत्तान्त को श्रवण कर रेजीडेन्ट क्रुद्ध हो उठा। बलवन्तसिंह को अजमेर बुलवाया। किन्तु इस बार भी बलवन्तसिंह के प्रताप, सत्यवक्तत्व और साहस के समक्ष ब्रिटिश सत्ता को मौन ही ग्रहण करना पडा।

अन्त मे काव्यकार ने काव्यनायक की धर्मनिष्ठा, प्रजारजन, वदान्यता और न्यायप्रियता का वर्णन करते हुए ग्रथ का समापन किया है।

यह ग्रथ कवि ने वंश भास्कर के सजन के मध्य समय निकालकर रचा था। वह ग्रथ-निर्माण का स्पष्टीकरण करत हुए कहता है—

दोहा

मनि सिख नप राम सो, बुल्ल्यो कवि बलवत।
किय अभ्यर्थन तत्र कह सब पाटव जह सत॥

रहि मनाय तेरह दिवस, इम कवि बुद्धिय आइ।
ग्रम बलवतविलास, किय, हिय प्रियता हरखाइ॥

बलभास्कर मे बनत विष मवसर कछु वाहि।
बिय प्रबध यह मिहिर कवि कातिक मुहुर्त माहि ॥

इस प्रकार कवि की ग्रथ प्रणयन की उद्‌घोषणा म स्पष्ट है कि राजा बलवतसिंह की अभिकाक्षा पर इस ग्रथ का प्रणयन हुआ था। ग्रथ का निर्माण प्रारम्भ की सूचना म कवि ने सवत् १९१५ की राधाअष्टमी व्यक्त की है—

जहं सक विक्रम राज को, सर ससि नव भुग मान।
तीजो उज्जवल माघ तिथि इति प्रबध उत्थान ॥

बलवद्‌विलास का सृजन राजा बलवतसिंह की अभ्यर्थना पर हुआ है अतएव कवि ने इसम राजा बलवतसिंह के यशस्वी पूर्वजो का सक्षिप्त इतिवृत्त सन्निहित कर उनके स्वय के जीवन के कतिपय उल्लेख्य कार्यों का वर्णन किया है और मध्य-मध्य म कवि न ज्योतिष गणित, राजतत्र, योगशास्त्र, पाक विज्ञान, आयुर्वेद, युद्धकला, स्थापत्य कला, सगीत नृत्य और वाद्यकलाओ को भी वर्णन मे स्थान दिया है। सूर्यमल्ल अनेक भाषाओं तथा अनेक विषयो के उद्‌भट विद्वान थे। अत बलवद्‌विलास मे अनेक विषयो का वर्णन हुआ है।

राजा बलवतसिंह के उदय पर भिनाय म जो जन्मोत्सव मनाया गया उसका कवि ने कई पृष्ठो म वर्णन किया है। इसस विदित होता है कि कवि शास्त्रीय ज्ञान के साथ साथ व्यावहारिक ज्ञान का भी पूरा अध्ययता था शिशु के जन्मकाल पर सम्पन्न किये जाने वाले सस्कारो का वर्णन इस कथन की सार्थकता सिद्ध करते है—

वज्जिग थाल विसाल भूप बलवत लेत भव।
मिहिर भारु महिपाल अधिक मढिय विधि उत्सव ॥
नियति सिद्धि छिदिनाल मधुर हाटक मुख धरि मुख।
भूसुर मद्दन भोजि सत दिय धनु अमित सुख ॥
कविजन प्रसन्न सब रीति करि राज ग्रामन पूज प्रथित।
सविधान हवन जप पाठ सह कलित श्राद्ध नादिय कथित ॥

कवि न इस कृति म राजधर्म पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला है। वर्णाव्यवस्था म चारो वर्ण उनके कर्त्तव्य, त्याज्य और परिपालनीय गुणों का शास्त्र-सम्मत आलेखन किया है। विद्याध्ययन समाप्त कर गृहस्थाश्रम मे प्रवेश करने का वर्णन करते हुए कहा है—

इम गुरु गृह पढि आयु का अट चतुथ बिताइ।
गुरु अभीष्ट दै स्त्रीयगह उपयम बिरचहि आइ ॥

जो असपिडा जननि कुल, स्वक असगोत्रा सुद्ध ।
क्रम सवर्ण ऐसी कनी, व्याहैं पढ़ु सु प्रबुद्ध ॥

राजनीति म साम, दाम, दण्ड और भेद का अतीव महत्त्व व्यक्त किया है। मनुस्मृति याज्ञवल्क्यस्मृति और चाणक्यनीति ग्रथो मे दण्डनीति पर पुष्कल रूप मे वर्णन मिलता है। सूर्यमल्ल ने भी दण्डविधान का बलवद्विलास मे अच्छा विवेचन किया है। जहा भेद से कार्यसिद्धि न हो वहा दाम का प्रयोग करने का निर्देश मिलता है। राज नीति के कवि ने सोलह भेद अकित किए हैं—

सिद्धि जोन भेद सन जबहि उपदा प्रयोग जिम ।
सोलह विध नृप सोहु कहत क्रमतैं अभीष्ट इम ॥
देश्य प्राब्द कर द्विरद सप्ति निवसय परसासन ।
पुरट कनी पन नारि खानि वेसकर भूखन ॥
सोलहो भेद प्रति पत्तिजसु अयनाम अनुसार इन ।
नहि अय प्रकट जिनके नृपति कछु कहियत सुनहु तिन ॥

अग्रिम पक्तियो म कवि ने दामदण्ड के सोलह भेदो की सक्षिप्त रूप मे व्याख्या की है।

राजतत्र का प्रमुखत इस कृति म महाकवि न राज्य के समस्त अगों का स्पर्शन किया है। राजधम, राजनय कोश, सचिव, मत्री, सेनानायक दुर्गपाल, कोशाधिपति, वद्य, प्रतिहार प्रभृति की योग्यता एव दक्षतादि का वर्णन किया है। सेना के सप्त अगो क विवेचन की भाति ही यौद्धिक सकट मे दुर्गों की उपयोगिता पर प्रकाश डाला है। दुर्गों की श्रेणी निर्धारण करते हुए लिखा है—

भूप बलवत दुग नीरमय अद्रिमय अश्ममय ऐस इष्ट कायम बलाने जात ।
बनमय मिट्टीमय मरुमय मत्यमय दारूमय एहि जगती मे जोग्य जानै जात ॥

अच्छ पहिले द्व इनमे ह पट मध्यके जे मध्यम भो अतिम का अधम प्रमाने जात ।
अन्न जल दारू घ्रत तैल नालि गोले आदि दुग बिच सचय समस्तन कै ठाने जात ॥

ऐसे सुदृढ और सग्राम सामग्री से सज्जित दुर्गों का स्वामी ही शत्रुओ से अभीत रह सकता है और अवसर प्राप्त होने पर प्रतिवासी देश पर अधिकार करने म सफल होता है—

अग छठो यह दुग इहि, निखिलन सज्जि नरेस ।
रहैं बलिष्ट हु सो मुररि, दब्बैं निकट प्रदेस ॥

इसी पद्धति से कवि ने सेना के पर्गनि गज, अश्व और रथ अंगों का वर्णन किया है। गजास्त्रों की जानियाँ शुभाशुभ सामुद्रिक लक्षण, स्वभाव रंग, आकृति प्रभाव और गति का उत्थान किया है। शिक्षा वर्णन में अध्ययन गजारोह गचालन यग कम शस्त्राभ्यास और दिनचर्या को लिया है। शस्त्र संचालन में शस्त्रों के प्रकार प्रभाव और संचालनक्रिया—गदय का वर्णन उपलब्ध होता है। कवि के परिवर्तनात्मक का गिलोल द्वारा निशानेबाजी का एक घनाक्षरी छन्द में अवलोकन कीजिए—

निरयहि निजरी बलवंत वसुधापति यो
सोदर समेत सुरली म सम ध्यान करि।
कोहल मतीर द दसागुल कपित्थ बिल्व,
क्रमतें सितही स्थूल वचन के पात करि॥
मट्टरक मृतिका मिलाय गुर गोल गाढ़े
खान करि जात मट्टकन सो बात करि।
तारी द तराके जत्र स्वस्तिक को फरिन्त
गेरिदेन कुंजन गिलोलन की घात करि॥

पूर्व आधुनिक काल में वाहन के रूप में अश्व का महत्त्वपूर्ण स्थान था। शान्ति और युद्धकाल उभय समय वह मानव का अभिन्न साथी माना जाता था। उसे पालने के अतिरिक्त सवारी के लिए निक्षित करने में बहुत श्रम करना पड़ता था। मध्यकालीन योद्धा के लिए तो अश्व का सर्वोपरि महत्त्व था। निक्षित करने पर ही घोड़ा मनुष्य के लिए उपयोगी बन पाता था। राजा बलवंतसिंह द्वारा अपनी सवारी के लिए घो को चालें सीखा कर शिक्षित करने का एक घनाक्षरी छन्द में सुन्दर वर्णन किया गया है। वह चक्री की भाँति वर्तुलाकार घूमने में बड़ा पटु था—

हायन छ वार मत्त कायन लुलायन क
कधर कठोर ज्यो काटि देत बकरी
मस अवनीस होत बारह बरम बय
कासु कुंत पट्टिस कृपान कलाप करी॥
साम्र गत माघ होत निस्सह निदाघ होत
प्रस्तन आघ होत वाघ होत बकरी।
टकरी टराई करा आव जाव अस्वन को
वीथी सकरी बिच चलात जसे चकरी॥

संवत् १८११ वि० में राजा बलवंतसिंह ने पितृश्राद्ध के लिए मथुरा और गया

तीर्थ की यात्राएँ की थी। उस समय उनके साथ जो सेना थी उसका कवि ने मौक्तिकदाम छन्द में ओजस्वी वर्णन किया है। ध्वज पताकाओं से सज्जित गजाश्वों पर आरूढ योद्धाओं का वर्णन एक विचित्र सा दृश्य उपस्थित करने में सक्षम है। कतिपय पंक्तियाँ देखिए—

गंम सरदागम यवरन संग्य। नराधिप हुरिय मास नभग्य॥
कनिष्ट लघु सिमु रविय निरंत। उनाग सहोदर मध्य उपेत॥

निसानन ध्वानन नगिग निघात। बजे सिर भरे गिरो न निपात॥
नकीबन मकुल मन्चिय ललकव। फरक्किय पीलन पै बहरक्क॥

नमावत भूतल हुलिय नाग। मच्यो रज उब्बर अबर भाग॥
मतंगज यो गिरि जंगम मान। सिर जिंह निझर के निंमदान॥

ठमंकिय घट प्रतिध्वनि ठानि। टमंकिय स्रविय बांबय बानि॥
सनंकिय प्रोथ तुरंगन स्वास। रनंकिय पक्खर झक्खर बास॥

चले हय झपत बिभिन चाल। नच पत नारि नस नखराल॥
कली लघु बेवत मम्मित कान। मुरे बर बंघर कक्कुट मान॥

इस प्रकार कवि ने यात्रा, अजमेर यात्रा और आखेट वर्णन में अनेक स्थलों पर अपना वर्णन-कौशल दिखाया है। आखेट-वर्णन में क्षुद्र जीवों को न मारने का उल्लेख किया है। मृगया में सिंह, वराह और चित्रवाहि का वर्णन देखिए—

मृगराज बिबिध आवत मलगि। सद्धहिं नृप सायक तुपक लगि॥

× × ×

बहु मृभर गवल खड्ग रु वराह। बधे स्वतः आरूढ बाह॥

बलवद्विलास में कवि ने भिनाय के राजव्यास ब्रजवल्लभ और राजा बलवन्तसिंह के कनिष्ठ भ्राता बख्तावरसिंह की धर्मपत्नी के सती होने का वर्णन किया है। बख्तावरसिंह का संवत् १९१४ की समाप्ति में निधन हुआ था।

अधिप करत बलवंत इम, राज्य धर्म कुल रीति।
वेद इन्दु निधि भू बरस, विक्रम सक गय बीति॥

नृप मध्यम सोदर निपुन, बखतावर बर बीर।
वपु तह छोरयो नियति बस, सात्यो नर गम्भीर॥

दोनों ही सतियों का होना राजा बलवन्तसिंह के लिए भयंकर वज्रपात तुल्य था। क्योंकि ब्रिटिश सरकार संवत् १९०२ के आस पास ही सती प्रथा के प्रतिबंध के लिए रियासतों से समझौता कर चुकी थी। फलस्वरूप कोटा में सतियों का नहीं होना दिया था। वैसे यह प्रथा लार्ड हेस्टिंग्ज के समय में ही बन्द की जा चुकी थी, किन्तु राजस्थान में प्रचलन बन्द नहीं हुआ था। सं० १९०२ वि० में महाराणा स्वरूपसिंह के नाम लिखे पत्र की एवं सं० १९०४ वि० में उन्हें महाराणा को लिखे कर्नल सर हेनरी लारेंस के राजकीय पत्रों में सतीप्रथा के प्रतिबंध के लिए पूर्ण निषेध पर बल दिया गया है। सतीप्रथा को अवैध घोषित करने के लिए बीकानेर, जयपुर, उदयपुर, कोटा और जोधपुर के शासकों के नाम लिखित कर्नल रॉबिंसन जार्ज लारेन्स, जार्ज सैंट पैट्रिक मेजर टेलर और विलियम फ्रेडरिक के पत्रों में प्रमुखतया उल्लेख हुआ है। ऐसी स्थिति में अजमेर के सन्निकट और रेजीडेन्ट के सान्निध्य में सती हो जाना महान् विपत्तिकारी माना गया और दोनों ही सतियों के लिए दो बार राजा बलवन्तसिंह को अजमेर जाकर अपराध स्वीकार करना पड़ा। राजा बलवन्तसिंह द्वारा उल्लिखित घटनाओं पर प्रदर्शित निर्भीकता, धर्मनिष्ठा साहस और सत्यभाषिता का सूर्यमल्ल ने उत्तम रीति से तथ्यात्मक वर्णन किया है। बलवन्तसिंह के सहोदर बख्तावरसिंह की धर्मपत्नी कमलादेवी का भी कवि ने यशस्तवन किया है। बलवन्तसिंह और कमलादेवी का वार्तालाप भी सुन्दर बन पड़ा है। कमलावती के वर्णन का एक मनहर छंद उद्धृत है—

स्वामि बखतावर को स्वर्ग जात साचे मन
स्वात सग संसृति की नेक बासना न ली।

अचल जो जोरयो सो न तोरयो गयो
जोखो जिती रहो रहै धूरि तिनके मुखभगी भली॥

पीहर रु सासरे को पावन करन छाड
व्योम विधुल के विमान की अवली।

सरवमेघ अध्वर उदक उपमन उठि
देति डग डिगर चिता पै कमला चली॥

कवि सूर्यमल्ल सतीप्रथा का अनुमोदक था। कमलावती के प्रसंग में रचित घनाक्षरी छन्दों में उसने वैधव्यजीवन बिताने को सहमत नारियों पर तीखा कटाक्ष करते हुए कहा है—

रवि रविमल्ल नाह चाहु सो उछाह आनि,
स्वच्छ कुल साध्विन मिल न ऐसो लीनो लाहु।

नाक लोक नारिन में कितो कमनीय कीनो
चूरी तज तिनको गहरो गजि दीनो दाहु॥

आसुरी सुरी र नारी नागी किन्नरी,
लोकाकुल नारि न रिझाई गई देवन की दरगाह।

सीता दयो आशीष अरुधति उतारयो लोन,
उरमा लगाइ अनसूया कह्यो वाह वाह॥

बलवद्विलास मे सूर्यमल्ल ने पद्य के साथ साथ प्रारम्भ मे गद्य का भी प्रयोग किया परन्तु वंश भास्कर के गद्य की तुलना मे बलवद्विलास के गद्य मे अपेक्षाकृत ओज और लालित्य का अभाव है। उदाहरण के लिए बलवद्विलास के गद्य की कुछ पंक्तियाँ उद्धृत हैं— जोईयो तो जीव रै साटे समाधि जिगडी घोडी दे र पूरो ही प्रत्युपकार करि—आप रो लीधो उद्धार दे आया तथापि वीरमदेव आवना वही तरह बधावणो करि आप रा आधा ग्राम दे र पाणि नू उणरा तबोल रो पालो करि प्रस्वेद रै ठाम रुहिर रा लता समस्ती रो स्वामि करि राखण ढूका। जठ ही वीरमदेव रै पुत्र चूडो हुयो जिकणारा उच्छन्न मे स्वामी रो अनुमत पाइ साथ रा रजपूत उण रा पौरा गा फरास बढाइ वाराहा रो पन मड्डमना र माथे राखि दला रा जामाता नू मारि उण रा बाटा रा दोइ दुग भाडि धाइ भाई प्रमुख दुर्गों रा मालिका नू भाजि महा प्रथम रो पन चावण ढुका।

यद्यपि महाकवि सूर्यमल्ल ने इस काव्य मे उदारमना क्षत्रियोचित गुणनिधि राजा बलवन्तसिंह की सुकीर्ति का बहुविध गान किया है तथापि वह अपने आश्रयदाता बू दीनरेश रामसिंह हाडा की कृपा एव स्नेह का स्मरण कर कृतज्ञता-प्रकाश करना नही भूला है। राजा बलवन्तसिंह द्वारा देवालयो तथा मदिरो के निर्माण और हाथी, घोडे, ऊँट गायें भूमि और द्रव्य-दान का वर्णन कर रामसिंह के प्रति निवेदन किया है—

हड्डवतिय पति हड्डवीर दु दिय बसुधावर।
रामसिंह अधिराज राव राजेन्द्र धमधर॥

सब गुन स्वभति समेटि अहो रविवश मेमन अब।
बदन मस्तक वाक्य सोधि जो हुव प्रणाहि सब॥

जनु कण जुधिष्टर नल जनक इक बनि बु दिय अवसरन।
रविमल्ल नाथ अर्णव गहिर सोहु मुदित बलवत सन॥

बलवद्विलास का सृजन जैसा कि पहले सकेत किया गया है वश भास्कर महाकाव्य की रचना के मध्य अवसर निकाल कर किया गया है। अत बलवद्विलास की भाषा और शैली भी वशभास्कर का अक्षरश अनुसरण करती हुई प्रकट होती है। महाकवि सूर्यमल्ल सस्कृत, प्राकृत, अपभ्र श, पाली, ब्रज और डिंगल भाषा के विदग्ध कवि, विद्वान एव इतिहासवेत्ता थे। बलवद्विलास मे ब्रज, डिंगल, सस्कृत, अपभ्र श और प्राकृत

अद्वितीय बाल कृति रामरजाट

श्रीनन्दन चतुर्वेदी

कविराजा सूयमल्लजी की प्रथम कृति रामरजाट स्वय कविराजा की प्रथम काव्य कृति ही नही वरन राजस्थानी साहित्य की प्रथम बाल कृति है। कृति के नाम पर तो रचनाए कितनी ही मिल सकती है किन्तु एक दसवर्षीय कवि की काव्य कृति म प्रबधात्मकता के साथ जो गिल्पगत प्रौढत्व यहाँ लक्षित है वह इस आयु के अन्य कवि की कृति म दुलभ है। अत इस राजस्थानी साहित्य की प्रथम बाल कृति कहना अनुचित न होगा। राजस्थानी स आगे बढ कर हिन्दी और विश्व की अन्य भाषाओ का खगोला जाए तो भी कदाचित ही रामरजाट जैसी अन्य बाल कृति उपलब्ध हो सके।

ग्रथ की समाप्ति पर श्री सूयमल्लजी न एक दोहा दिया है—

सवत् सरस अठार सै, साल बियासी सत।
रबि बसत पाँच रहति, गिरा सपूरण ग्रथ॥

उपरोक्त आधार पर रामरजाट का रचना काल सवत् १८८२ विक्रमी की बसन पचमी (समापन तिथि) है।

सूयमल्लजी का जन्म काल 'वीरकाव्य पृष्ठ ७६, कवि रत्नमाला' पृष्ठ ११४, 'राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा' पृष्ठ १४४ 'डिंगल म वीर रस पृष्ठ ६८ और वीर सतसई की भूमिका' पृष्ठ १२ के आधार पर सवत् १८७२ विक्रमी है। इस प्रकार 'रामरजाट' की रचना पूरी होने पर सूयमल्लजी की आयु १० वष ठहरती है।

रामरजाट के अत मे यह भी उल्लेख मिलता है कि इस की रचना तत्कालीन

यद्यपि शिल्प का कोई उल्लेखनीय चमत्कार रामरजाट मे नही है तथापि दस वर्षीय कवि से जो अपेक्षा की जा सके उसमे कही अधिक उत्कर्ष प्राप्त होना ही इस ग्रंथ का चमत्कार है।

रामरजाट मे प्रबंधात्मकता है किन्तु कोई कहानी नही है। क्रम से एक के बाद एक प्रसग चलते जाते हैं। भावडी छन्द मे बूदी के राज परिवार की गौरवमयी परम्परा का चारण शैली मे यशोगान किया गया है। कही अकबर का प्रसग है, कहीं औरगजेब का, कही दारा का और कही मरहटा हुलकर के आगे हाडाराव का मूछ तानने का। ग्रंथ की उक्त हस्तलिखित प्रति के चौथे पृष्ठ से कथा क्रमबद्ध रूप मे चलती है। यहीं से महाराव राजा रामसिंहजी के बचपन का वर्णन प्रारम्भ हुआ है। वे कही उमरावो के साथ विहार करते और कही कोट-कगूरो पर तोपें चढाते हैं। कभी गुलेल से उडते पक्षी को मार गिराते हैं। किशोर अवस्था प्राप्त होने पर रामसिंहजी का सगाई-सबध धाबाई किशनराम (मत्री) द्वारा जोधपुर के राजा मान की कन्या से तय करवाया जाता है। मावे का वर्णन निम्न प्रकार किया गया है—

सुचि फागुण नोमी विहद मड मावा हद मेल,
किसनराम ऊछव किया स्याम धरम सुचेल।

तदुपरात विवाह के लिए बारात प्रस्थान करती है। बारात के तेरह स्थानो पर रुकने का उल्लेख है— पगारां देवली, केकडी, सवाड रामसरधाम, श्रीनगर कावडिया स्थान, पुष्कर, ब्राह्मण गावाम, मेडता बोरूदा, पीपाड और बीसलसुत नगर। सूर्यमल्लजी स्वय इस बारात के साथ थे। सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रसग भी उनकी दृष्टि से छूट नही पाए। बारातियो के हाथ मुडा धोने तक का उन्होने वर्णन किया है—

अब चढे नरन जोड सु माय, घर जण हाथ-मुडा धुपाय चत्र बुदी पडवा के दिन बारात ने उसी रास्ते बूदी के लिए प्रस्थान किया। बूदी पहुँचते ही झुझुनू का दूत विवाह-सबध लिए आ पहुँचा। पर्याप्त इनकार के बाद भी दूत का आग्रह अटल रहा। सबध स्वीकृत हुआ और फिर बारात जयपुर होती हुई झुझुनू पहुँची।

इसके १० दिन बाद बारात वापसी है। फिर वर्षा वर्णन, तीज त्योहार मे रामसिंहजी के रमने का वर्णन नायिका-नख-शिख हय गज वर्णन हैं। नवरात्रा की पूजा भसो व बकरो का बलिदान और रामलीला वर्णन है।

दीपावली के बाद पूर्णिमा तक बूंदी मे रहकर रामसिंहजी शिकार के लिए प्रस्थान करते हैं, इसका वर्णन एक दोहे मे है—

दीपमाल कातिक दरस हीडा वगसि हजूर,
पछे सिकार पधारिया, पूयू उतरया पूर।

पहल दबलाणे के डेरे पर शिकार का वर्णन है और फिर पौष की पाचें पर शिकार का। शिकार मे बदर, स्यार, सिह, साबर, चीतल आदि मारने का वर्णन है। गणपति दर्शन, जीमनार गोठ के पक्वान, पुलाव, सरदारो का अाफू चढाना, भग पीना आदि तक के उल्लेख इस प्रसग मे हैं।

रामरजाट मे भावपक्ष कम, कला पक्ष अधिक उभर कर सामने आया है। ग्रंथ मे रामचंध, मोतीदाम, हणूफाल त्रिभंगी, पद्धरि, द्व अक्षरी आदि छंद मिलते हैं। भाखडी, पद्धरि, द्वै अक्षरी छप्प और 'दूहा' का प्रयोग विशेष रूप से मिलता है। भाखडी छंद मे एक वर्णन द्रष्टव्य है—

वदी गढ वरण, रामण छत्र धर राव।

श्रग छत्र ऊफरणें सुरराज जेम सुभाव॥

दृश्य–चित्रण मे कवि को पर्याप्त कुशलता प्राप्त है—

दिन रह्या पाछली घडी दोय,

सज जान ऊनर जाट सोय।

और—

भेरी, मृदंग भ्रनक भाति सुघरी र ढाल तबूर तानि।

अलगोजा सहनाई अपार करनाल घणी, बाजे भ्रपार॥

दूल्हा वेश मे सज रामसिहजी का वर्णन द्रष्टव्य है—

सजि गयद पूठि चढियो सुमाज, रामग मथरी बीद राज।

सिर मुकुट बाँधि केसरयो साज, वलि सीस सहरा दुति विराज॥

उर जलज हीर माला अपार, मोतीर कड़ा सुबरण सुढार।

ढिग दोइ तरफ चम्मर ढुलत, मदमस्त मतगत झलमलन्त॥

विवाहोत्सव मे जुड़ा समाज कवि की कल्पना को कहाँ से कहाँ ले जाता है। उपमा और रूपक अलकारो का यहाँ प्रयोग हुआ है—

जोधाण जनकपूर जेमजाण,

बूदी सु भ्रयो"या ज्यु बखाण।

रामण बीद सम रामचद्र,

मिथिलेस मान मोजा समद्र॥

मत्री सुमत्र सुत किसन राम,

सारणा काज कृत धरम स्याम।

रामरजाट वस्तुत वर्णनात्मक काव्य ग्रथ है। मारवाड का स्थानीय रग (लोकल कलर) भी बाल कवि की दृष्टि से छिपा न रह पाया। यदि ऊँट का उल्लेख न आता तो क्या मारवाड–वर्णन होता? देखिए—

सिरपाव कडा, मोती समाज गजराज ऊँटडा करत गाज

हमर अनेक दीधा हुलास, सिरपेच और गहणा सहास।

राजा ने विवाह के बाद इक्कीस दिन तक त्याग नेम बया बाँटा इद्र के समान वर्षा की झडी लगादी—

नरनाथ वाटियो त्याग नेम, इक्वीस दिवस भड इद्र जेम।

कवि की दृष्टि से सूक्ष्मातिसूक्ष्म वाय व्यापार भी नही बच पाता—

घमक पखरी भाड के सलगाया लगर

तथा—

विद्यामराय श्राफू चढाय, गलियार भाग दुरा कराय।

रामरजाट का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष है— 'प्रकृति चित्रण'। तीजरयोहार के भाय ऋतु मे बूँदी की छटा दर्शनीय है—

इम उच्छव तीज प्रारभ किया, मव वीज चमक्त राह तिहूँ,
मन मगल भोर प्रमगल झोंकत, मार कोहाकत राति दिहू।
वलि वाय प्रचड उदड चहू दिसि, वादल जुत्थ मवासभ्रमे,
विसनस मुभाव उछाव बधोतर, राव भ्रसीविधि ताज रमैं।

वर्षा वर्णन म कवि ने कितने ही छद रच दिए है। उसकी लेखनी रुकना ही नही चाहती जस—

प्रति नीर प्रवाह चलत उतावल गाजत लोह जिता गिर म

प्रधियार निसा वरिण सावरण आवरण मद समागम राह मिलैं।
जल लहर छोल झकाल जमी पर, पोत गमी परजाली प्रलैं।
घहरात घटा, ग्रहरात प्रखडित, खडित भू घहरात खम।

नारिया सोलह शृगार कर निकल रही है—

सालह सिनगार सजि ग्रनुसार अधिक ग्रपार उद्दार।
कौर चप कज्जल ग्रति जिहि लज्जल ज्यो दुति विज्ज्वल सुभसार।

रामरजाट मे केवल जड प्रकृति का ही नही मानव प्रकृति का चित्रण भी दर्शनीय है। शृगार के प्रति नारी का रुझान, नारियों का झुड मे 'इकटठे' निकलना, मटठे पग' घर घर कर चलना, बाजार मे ग्रति भीड देख गलियो के माग से निकल जाना, सहेलियो का कुड पर जाना इकट्ठा होना आदि इसी के उदाहरण हैं—

निकसी बहु नारिय, सहज सगारिय, नागन प्यारिय सहज सबै,
मिलि झुड इकटठे, बनि बनि लट्ठे धरि पग मटठे, तुरत तबै।
अति भीड वजार, परि ग्रनपार, गला मझार निकसि गई,
सब सिमटि सहैली, कुण्ड ग्रकैली, जहाँ सब मेली, जाई गई॥

तीज की सवारी म घोड़े पर सवार रामसिहजी वर्षा मे भीग जाते हैं। उनका उत्साह दर्शनीय है। वर्षा की झडी म वस्त्रो मे रग बह चले हैं फिर भी वे तीज मे रमे हैं—

उरण वार राम चढियो उदड, बानत वीर यो रमे प्रचड।
भीजता रग, चुक्ता ग्रमग, रत हरित केसर्‌या वहत रग।

रामो प्रतवेल्यो महाराज सब किया केसरयाँ गरक साज ।
नाचतो थको धज राज नूर हाथ म लियां भालो हुजूर ।
इण रीति मदन मूरति उदार, धारा रंग बहतो नीर धार ।
इम हुयो महल दामम प्रमग नाचत मल्हार बोहा राग रंग ।

तीज त्योहार के अवसर हेतु हाथियों को ले जाना नहलाना पोंछना, जगाली और चमाती रंगों स चित्रित करना आदि दृष्टव्य है । हाथियों का वर्णन कितना प्रभावशाली है—

सतीसर गहुर केल समान प्रभागिर कज्जल क परिमाण ।
इमा गजराज दराज अमग, घम नम चाचर जेण सुचग ।
कढै मद भट्टिय जम कढाव झर गिम गाइ पटा झरणाव ।
भमैं जिण भमर डबर भीड न प्रावत धावत माह्लन भीड ।

इसके बाद रंगों और साज-सामान मे सजाए गए हाथियों का चित्रण बड़ा सजीव है—

जगाल रंगालर लाज करज्ज बनात म ढक्किय झूल गरज्ज
सगीसिर मंडिय कुंभ स्यान बँधे गल मल्लर नाद विधान ।

हाथियों का यह वर्णन मोतीदाम छन्द मे किया गया है । इस प्रकार की तीज सवारी म विष्णु जी के सुत श्री रामसिहजी कुड पर पहुँचते हैं । कवि उन्हें कुड पर पहुँचा कर ही नहीं रुक जाता । वहाँ की चतुर्दिक छटा का भी चित्रण करता है—

चो तरफा प्रमुदा चतुर लड हीरा लटकाय,
हीद अपछरि ज्यू हरखि, खिण खिण झाला खाय ।

वर्षा के बाद शरद ऋतु आई नवरात्र प्रारम्भ हुए

कवि ने ऋतु परिवर्तन के साथ छद बदल लिया । शैलीगत परिवर्तन भी दृष्टव्य है । भुजगी छद म कवि लिखता है—

बरखा गई बीति आई सरद्,
हुआ दुदमी साज नीसाण नद् ।
करे पूजन नो दिन देवि केरो,
घुरं नद् नीसाण बखी घनेरो ।

इसी समय चहुवाण (महारावराजा) स धूरि माताजी के यहा आकर दशमिका के आग बकरे भैंस आदि का बलिदान करते है । इस प्रसग म भैंसे के बलिदान का प्रसग बड़ा चित्रात्मक है—

भसो तीजो भली इहां हाजिर जद आयो,
ऊँली झड आवला, दूत जम सो दरसायो
धजवड रामैं धणी आनि पटकी कंध ऊपर,
मायो कटि धर मोहि जार भटकी जोरावर

कर जोडि आप पूजन कर, भगति प्रेममय भाव सू,
प्रति हुई प्रसन उण वार में, रक्त दतिका राव सू ।

उल्लेखनीय है कि वीर सतसई के सपादक त्रय, सवश्री कन्हैयालाल सहल, पतराम गौड और ईश्वरदान आशिया ने उपरोक्त उद्धरण को महाराव राजा रामसिहजी द्वारा विजयादशमी के दिन खेली गई शिकार का उदाहरण बताते हुए वीर सतसई के प्रथम सस्करण की भूमिका मे उद्घत किया है। उन्होंने बिना किसी किन्तु परतु क स्थापना करदी कि 'दस वष की उम्र मे रामरजाट ग्रथ बनाया जिसम बूदी क रावराजा रामसिहजी के शिकार और दौरे का वणन है (वीर सतसई प्रथम सस्करण की भूमिका, पृष्ठ २६)। उन्होंने फिर लिखा कि रावराजा रामसिहजी न विजयादशमी के दिन जो शिकार खेली थी, उसको लेकर यह ग्रथ लिखा गया है। (वीर सतसई की भूमिका, वही सस्करण, पृष्ठ ६८)।

असलियत यह है कि रावराजा रामसिहजी दीपावली की 'हीडें बगस' कर उसक पद्रह दिन बाद पूर्णिमा कर उसके पीछे अर्थात् विजयादशमी के कम स कम बीस दिन बाद शिकार के लिए गए।

आश्चय है कि इतने व्यापक शिल्प और काव्य सौन्दय समन्वित ग्रथ को बिना पढे उन विद्वानो ने मात्र 'शिकार और दौरे' का ग्रथ घोषित कर पूरी तरह महत्वहीन बना दिया। उन्हे अवश्य रामरजाट की यही प्रति हाथ लगी होगी जो बिना सिर खपाए पढी भी नही जा सकती थी। जल्दी मे जो कुछ उनके पल्ले पडा उसकी गहराई मे न जाकर उन्होंने मानस बना लिया कि यह शिकार और दौरे का ग्रथ है फिर रामसिहजी को विजयादशमी के दिन ही शिकार खिलादी और रक्तदतिका के आगे अष्टमी के दिन किए गए भैसे के बलिदान को शिकार का उदाहरण बताकर उद्धत कर दिया।

सच्चाई यह है कि रामरजाट बाल कवि की रचना होकर भी उच्चकोटि की साहित्यिक कृति है।

नवरात्र के पश्चात् विजयादशमी का पव आता है। यहाँ रामलीला वणन मे कवि की कला चरम निखार पर दृष्टिगोचर होती है। रामलीला का बडा विशद् वणन है जो बूदी म उस जमाने मे हुआ करता होगा।

रामसिहजी की सवारी उतरती है। विरधीचद नाहरा को दूत बना कर रावण को मनाने भेजा जाता है। दूत रावण को समझाता है—

दस सीस दूत कहियो जदन, भगति भाव अति भेस सू,
जानकी देरि सब तजि जिनो, आणि मिलो अवधेस सूँ।

रावण का उत्तर दृष्टव्य है कि ब्रह्मा और बहस्पति उसके यहाँ वेद बाँचत हैं। दसो दिग्पाल सेवा मे रहते हैं। किन्नर और गधव सगीन उच्चारते है, नारद सदा उसका काय पूरा करते हैं, वह तो देवराज को भी शरण देने वाला है। बीस बिस्वा तलवारो के झटके झेलेंगे। रावण राम स नही मिलेगा।

ब्रह्मा भ्रर ब्रहस्पति बेद मा भ्रागल बांच।
दस ही भड दिग्पाल सव सेवा मुझ मांच।
किन्नर गंधव किन्ना इता संगीत उचार
नारद म्रावै नित्त सदा कारज मुझ सारै।
सुरराज सदा राखू सरण, भ्राप रहू भ्रभिमान मू।
झट खग्ग बीस बिसवा झलै, मिलै न रावण राम मू।

दूत भ्रौर रावण की नोकझोंक लम्बी चली है फिर युद्ध वर्णन है जिसमें हमारा बाल कवि भूल जाता है कि वह रामलीला का वर्णन कर रहा है। वह भ्रसल युद्ध का चित्रण करने लगता है—

सिर तूटै राकस लड सूर, धडफटै बाणां धाक धूर
नाचत कमध भ्रनेक नाच, भ्रनेक भ्राछट खडग भ्राच।

बीभत्स रस का चित्रण दृष्टव्य है—

गहलत गद झपटत भ्रीध, पत्र धरि भ्रोगणि भ्रोण पीध
धड तडफै धरती पर धार, माथा भ्रति रान मार मार,
भ्रोयण चली सरिता भ्रच्छ माचिया कीच पल रग रूप

कवि ने धरती पर पड़े धड तडफा दिए, कबंध नचा दिए, शोणित की सरिता बहा दी, कीचड़ कर दिया— जैसे सच्चा युद्ध हो रहा हो। इंद्रजीत से भी उसने ऐसा ही युद्ध करवाया है—

धरा रूड धाव पडी मुड पाव
धकै बेक बीर, तध त न तीर,
मही कीच मच्चें बिसी पाव खुच्चें।

राम रावण युद्ध में विशेष दृष्टव्य है बाल कवि का भोलापन। उसने बूंदी के रावण को जैसा देखा वैसा लिख दिया। वह पात्र जो रावण की भूमिका में रहा लडते समय पृथ्वी पर पीक थूक रहा था और पान चबा रहा था। हो सकता है उसने तंबाकू का पान खाया हो भ्रौर उसे बार बार पीक थूकनी पड रही हो—

धका धूमो धाक धोक, झटक्का उंडाला भ्रोक,
भ्रपो पै नाखतो पीक चावतो तंबाल।
झ्हाडा करतो राड वीस हाथ वाद राड
फका मार मूडा फाड चल्ला किया चोल।

भ्राया रामचंद्र भ्रोड जुधा कर हाथ जोड
दीत्या कर दौडि दौडि खचना बुवाग।

रावण की चेष्टाओं का यहाँ कितना सजीव चित्रण हुआ है। 'दाँथा करें' शब्द तो इतना समीचीन है कि उसे किसी अन्य शब्द से बदला भी नहीं जा सकता। रावण इसके बाद भाग जाता है। किन्तु कवि इस रावण को भगाकर भी रावण वध करवाता है—

'रावण मार्यो राड करि, फटका बाही भाक।'

ऐसा लगता है कि रामलीला के लिए जो रावण खड़ा किया गया वह जीवित पात्र था, जो फिर भाग गया और जो नकली रावण अर्थात् उसका पुतला रहा होगा उसका वध किया गया।

रामरजाट में पूरी प्रबंधात्मकता नहीं है किन्तु घटनाओं के क्रम में सम्बध सूत्र भी विच्छिन्न नहीं हुआ है। स्वतन्त्र प्रसंग कितने ही इसमें गुथे हैं जैसे घोडों का वर्णन हाथियों का वर्णन, नायिका नख शिख, बूंदी नगर वर्णन, तारागढ, चोबरज्या आदि के वर्णन दशराहे के शिकार का वर्णन, पोष की पाचें का शिकार का वर्णन आदि।

विशेष ध्यातव्य है कि दस वर्ष की अल्पायु में भी सूर्यमल्लजी कवि कर्म के प्रति कितने आस्थावान थे। उनके अनुसार सुकवि सत्य भाषी ही होता है।
वे तारागढ़ का वर्णन करते हुए लिखते हैं—

मरघ चीतला मोकला नाहर गुँज नत्ति,
वचन प्रवरा बीरवर, सुकवी बोलै सत्ति।

सुकवि के सत्यवादन की प्रतिष्ठा मानवीय मूल्यों में कवि की आस्था की परिचायक है और उनके प्रौढ चिंतन की भी। तारागढ़ और चोबरज्ये के बाद कवि ने जहा बूंदी का वर्णन किया वह अतिशयोक्ति में बहक गया। उसे बूंदी शहर दिल्ली जैसा दिखने लगा—

मारण दुनमण मोकला, मारण ऊमल्ली,
सारांन बूंदी सहर दीखता दिल्ली।

समग्र रूप से देखने पर रामरजाट शिकार और दौरे का ग्रंथ मात्र नहीं वरन् एक सामाजिक काव्य ग्रंथ ठहरता है। इसमें सवत् १८८२ अर्थात् १८२५ ई कालीन बूंदी के सामाजिक पर्वों—तीज त्योहार दशहरा, राजा की सवारियाँ, रामलीला आदि के चित्रोपम वर्णन हैं। करुण रस के अतिरिक्त सभी रस इसमे हैं। हास्य पूरा न होकर रसाभास की स्थिति रावण कुंभकरण के वार्तालाप में बनती है जब रावण कुंभकरण की भली सलाह न मानकर कहता है—

'घुलै नींद आराम करो घर ऊंघ सतावै थाक ऊपर।'

रामरजाट के सक्षिप्त प्रसार मे कल्पना बुद्धि प्रतिभा और शैली चारों तत्वों का समन्वय है। धर्मार्थ काम मोक्ष में से कोई पुरुषार्थ यद्यपि उसका लक्ष्य फल नहीं है

तथापि तत्कालीन समाज में उसकी प्रासंगिकता को स्वीकारना होगा। यह तत्कालीन बूंदी के सामाजिक जीवन का दर्पण है उसके वर्णन किसी बालकवि की कृति में दुर्लभ हैं। यह ध्वनि काव्य नहीं है किन्तु कवि की आयु व सापेक्ष में काव्य और कवि की महत्ता को नकारा नहीं जा सकता, उसकी अभिधात्मक अभिव्यक्तियाँ और चित्रोपम वर्णन उसे किसी भी बाल कवि की कृति से एकदम अलग सा खड़ा करते हैं।

इस कोटि की रचनाओं में यदि रामरजाट को विश्व की प्रथम समर्थ बाल काव्य कृति कहा जाए तो अत्युक्ति न होगी। हाड़ौती की यह रचना राजस्थानी भाषा की तो प्रथम समर्थ बाल कृति निर्विवाद रूप से है ही।

महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण 'कुछ अनकही' पत्रों के सन्दर्भ में

डॉ० ओंकारनाथ चतुर्वेदी

महाकवि सूर्यमल्ल अपने युग के प्रतिभाशाली एवं प्रभावशाली व्यक्ति थे। उनकी प्रभविष्णुता तो इसी में समाहित है कि तत्कालीन युग के प्रभावशाली राजा-महाराजा, ठाकुर, सामंत, महाकवि द्वारा अपने सम्मान में व्यक्त की गई पंक्तियों के लिए लालायित रहा करते थे। आज से १०० वर्ष पूर्व डाक-तार का विस्तार पूर्ण रूप से नहीं हो पाया था। राजघरानों में हलकारे पत्र के साथ ढेर सी बहुमूल्य वस्तुएं एवं अनलिखे व्यक्तिगत संदेश लाते थे जो गरिमामय व्यक्तित्व के अंग थे।

वंश भास्कर महाकवि की काव्य साधना का पुण्य फल है और आज कवि की अक्षयकीर्ति का प्रमुख स्तम्भ है। साहित्य साधना का मार्ग अत्यन्त दुस्सह है। इस कण्टकाकीर्ण पथ पर यश और कीर्ति अत्यन्त दुर्लभ है। कृपण साहित्य देवता किसी भाग्यशाली को ही वरद-हस्त से आशीर्वाद दे पाता है, अन्यथा अनेक जीवन तो साहित्य उद्यान की मात्र खाद बन कर रह जाते हैं अथवा नींव का पत्थर। पर महाकवि सूर्यमल्ल तो विशद प्रांगण के प्रतिभाषित सूर्य हैं जिन्होंने अष्टराशियों पर विचरण करते हुए भास्कर मयूखों से काव्य एवं इतिहास के कुहरे ढके कोनों को ज्योतिर्मय किया है। आज इतिहास साहित्य की परंपरा में वंश भास्कर का महत्त्वपूर्ण स्थान है। विद्वान इतिहासकार विगत शताब्दी से इस महत्त्वपूर्ण ग्रंथ का सन्दर्भ ग्रंथ के रूप में उपयोग करते चले आ रहे हैं। महाकवि सूर्यमल्ल के संदर्भ में अनेक प्रवाद प्रसिद्ध हैं जिनके माध्यम

स लोकोत्तर प्रतिभा के धनी महाकवि सूर्यमल्ल के व्यक्तित्व एवं कृतित्व परिचय का तानाबाना बुना जा सकता था। वंश भास्कर के व जननता हैं तो सामन्तों म हुङ्कार पैदा करने वाला वीर रस स ओत प्रोत शंखनाद भी है। यह मात्र राज्याश्रित पराश्रयी ठकुरसुहाती कहने वाला चारण ही नहीं वरन् तात्या टोपे का दुलंघ्य चम्बल को पार कराने वाला मातृभूमि का विनम्र सेवक है जिसकी धमनियों का खौलता रक्त सामन्तों को तलवार उठा कर एक बार भाग्य अजमा लेने की प्रेरणा देता है। महाकवि के हृदय की धड़कन वीर सतसई के दोहों म निबद्ध है जिसम राजस्थानी प्राचीन बलिदानी संस्कृति का सार संक्षेप म आ गया है। महाकवि सूर्यमल्ल साहित्य समाज के रवि हैं। ठाट भाषा के पूरण पण्डित तत्त्व बोध के मूर्तिमान स्वरूप इतिहास के प्रसिद्ध ज्ञाता, चौदह विद्या निदान चौसठ कला निपुण और मीमांसा न्याय शास्त्र योग शास्त्र आदि के तलस्पर्शी विद्वान थे। उनकी असाधारण प्रतिभा का परिचय तो दस वर्ष की अवस्था म ही मिल गया था जबकि उन्होंने रावराजा रामसिंह की बारात स लौट कर बूंदी के परंपरागत तीज-त्यौहार एव शिकार पर आधारित 'रामरजाट' की रचना की थी।[1]

जब किन्ही कारणोवश वंश भास्कर का लिखना बीच म बंद हो गया था तब रतलाम नरेश बलवंतसिंह के नाम लिखे पत्र म अथाह ज्ञान का परिचय देते हुए कवि न उल्लेख किया है—

अर विज्ञप्ति एक मालूम हासी अठै तो अब म्हारे ग्रन्थ को निर्माण मौकूफ छ सो मौकूफ ही रहसी दीखे छै तीसूं आपकी मरजी वो पाँच हजार ग्रथ बणवा की होइ तो विठाय की मरजी होय अर जी भाषा म मरजी होय अर ज्यां छ न सू मरजी होय तो छंद १ वा अलंकार २ वा शकुनशास्त्र ३ वा धर्मशास्त्र ४ वा नीति १ ज्ञाता २ प्रमुख अर्थशास्त्र ५ वा कामशास्त्र ६ वा गणित प्रमुख ज्योतिषशास्त्र ७ वा शब्दशास्त्र ८ वा अभिधान कोष ९ वा नायक नायिका लक्षण १० साहित्य शास्त्र ११ वा संगीतशास्त्र १२ वा काल निर्णय १३ वा पुराणी निर्णय १४ वा वैशेषिक १५ वा पातंजल १६ वा उत्तर मीमांसा १७ वा हय लक्षण १८ वा शिल्प शास्त्र १९ वा गवादिपशु परीक्षा २० वा रत्न परीक्षा २१ वा इतना सब विषया म स्वरूप २ परिचय छ त्यां म जा विषय पर मरजी होय तीकी इबारत निर्माण करवा की आज्ञा देवा जी की मरजी होय तो ऊ प्रत्युत्तर का हुकुम क साथ ही फरमाई जावै अरर लिखाई जाव और जो न मरजी होय तो ए फुटकर पद्य तो माफिक शहर म ताकिदगी हाजिर होबो ही करसी।[2]

वैशाख शुक्ल ६ संवत् १९१४ प्रस्तुत पत्र स्पष्ट है कि महाकवि सूर्यमल्ल काव्य शास्त्र के साथ अनेकानेक विषयों के तलस्पर्शी विद्वान थे। वंश भास्कर एवं बलवद्विलास म ग्वालतर प्रसंगो के रूप म अनेक विषयों की चर्चा हुई है। अष्टम राशि के अंतर्गत महाकवि ने रावराजा रामसिंह के ज्ञान अभिवर्द्धन हेतु वेदो एवं उपनिषदो का

---

१ संवत् सरस अठारसै साल वियासी सत रवि वसत पाचे रहसि गिरा संपूरण ग्रंथ।

२ रतलाम नरेश के नाम लिखित पृष्ठ बही न २ पत्र क्रमांक ३२

मार निचोड कर रख लिया है।[1] अपने पत्रो मे उन्होने अपनी जानकारी के विषय मे जो लिखा है, उन सबका साधारण ज्ञान भी यदि उन्हे रहा तो हमे समझ मे नही आता कि इतने विषयो की जानकारी रखने वाला कोई दूसरा साहित्यकार राजस्थान मे उनके मुकाबले मे रखा जा सके।[2]

मदिरा प्रेम

सामती संस्कृति मे अमल व सूखा मे मदिरापान तो सामान्य शिष्टाचार के अग रहे हैं।

महाकवि भी अपनी दैनिक दिनचर्या मे इन सभी मादक द्रव्यो का सेवन करते थे। प्रतिवेदना की स्थिति मे काव्यधारा वेग से फूटती थी जिसको लिपिबद्ध करना लेखको के लिए समस्या बन जाती थी। दूर-दूर से कवि की रुचि की वस्तुये उनके सम्मानार्थ जैसे घोडे, सितार व मदिरा भेंट स्वरूप भेजी जाती। भिणाय नरेश बलवतसिंह ने मदिरा अनुदानार्थ भेजी थी जिसकी प्रशसा मे कवि ने निम्न पद्य लिखा था—

> मोद कर ऐसा मधु मधुर पठायो भूप
> छायो बढ केतकी गुलाब सुम छाज प।
> स्वाद पुनि सरस सुधाइ तैं, सुहायो सूत्र
> लालन के लखत नमायो बैन लाज पै।
> ज्यो ज्यो रविमल्ल को नजीक नियरायो गेह।
> त्यो त्यो रविमल्ल हाय माहित सुगन्ध सुख ताज पै॥

टीकाकार महोदय ने भी सूर्यमल्ल का जीवन चरित्र लिखना चाहा था और इस सन्दर्भ मे बूदी के कौंसिल के मेम्बर पण्डित गगासहाय जी से उन्होने सूर्यमल्लजी के क्रमबद्ध जीवन-चरित्र की सामग्री मागी थी। प० गगासहाय जी ने प्रत्युत्तर मे लिखा था कि सूर्यमल्लजी का जीवन-चरित्र लिखा हुआ तो है ही नही और उनका देहात हुए तीस वर्ष व्यतीत हो चुके है, उनके समय के मनुष्य विद्यमान न होने से श्रृंखलाबद्ध जीवन चरित्र नही मिल सकता।[3] खेद है कि महनीय व्यक्तित्व का सही मूल्याकन नही किया जा सका। महत्त्वाकाक्षी रावराजा रामसिंह चाहते तो 'वश भास्कर' की अवशिष्ट मयूखो को पूर्ण कराने के उपरात उत्तराधिकारी पुत्र मुरारीदान एव गोवर्धनजी चौबे से इस कार्य को पूरा करा सकते थे। उनके तिरोधान के साथ साहित्य इतिहास की महत्वपूर्ण सामग्री भी तिरोहित हो गई। सौभाग्य से महाकवि के असाधारण व्यक्तित्व से सबधित पत्रो की दो बहिया प्राप्त है, जिनके पत्र अब जीर्णावस्था मे है कुछ अत्यत सुरुचिपूर्ण ढग से लिपिबद्ध है जिनमे महाकवि के अतरग व्यक्तित्व एव कृतित्व

---

१ वश भास्कर

२ वीर सतसई भूमिका ८३ (दूसरा सस्करण)

३ वश भास्कर— पूर्व पीठिका पृ ५

के मूल साध्य हैं। उन प्रख्यात पदों में से कुछ महत्त्वपूर्ण पद यथावत् प्रस्तुत किये जा रहे हैं। महाकवि सूर्यमल्ल के अन्तरंग व्यक्तित्व के सम्बन्ध में प्रकाश डिया गया है— मां सरस्वती का स्वयं जिह्वा सम्भार करना, पत्नी की दाय-यात्रा पर और बांधकर निशाना निकालना और रानी महिलाओं के साथ सितार बजाना पड़ना आत्मजा का नक्षत्र उछालते कदम धर देना इमली के पेड़ पर बने मचान पर काव्य साधना करना भिनाय की रानी का सती होने पर अमर कर देने का वचन देना रावराजा रामसिंह के शि... घोड़ों की टापों के मध्य लुढ़कता हुआ स्वयं की आकांक्षा व्यक्त करना ... के अप्रतिम सुन्दर दस्ता के बलपूर्वक भेज देने पर रूठ जाना और महाकाल की प्रत्यक्ष रूप में प्राप्ति स्मरण करना और अपने ५२ वर्षों के साथ गंगा घराने की यात्रा करना आदि अनेकों ऐसी घटनायें हैं जिनमें कवि की गम्भीर प्रतिभा उभरती लगती है जो सांसारिक झंझटों से बचाव और परावर्तक हैं। काव्य जिनका जीवन-धन है और साथ ही साधना लक्ष्य है। निर्भीकता स्पष्टवादिता स्वच्छन्दता ही जिनके व्यक्तित्व के प्रमुख उत्कीर्ण बिन्दु हैं अथाह ज्ञान जिनका भूषण है सत्यवादिता जिनके जीवन का अटल सिद्धांत है। सूर्यमल्ल मात्र अतीत की घटनाओं को लिपिबद्ध करने वाला इतिहासकार ही नहीं है, बल्कि दूरदर्शी भविष्यद्रष्टा कथानायक है जिसके सामने निराशामय वातावरण में डूबता-उतराता भारत का भविष्य है।

> मायो जानति मामव हमारे उमवत पाय,
> भेख भयानि गोरि दोरी इस्वाज प।

संगीत प्रेम

महाकवि सूर्यमल्ल संगीत के विशेष अनुरागी थे। उन्हें स्वयं को भी संगीत की विभिन्न रागों राग-रागिनियों का विशेष ज्ञान था।[1] संगीत-प्रेम की चरम सीमा हमें उस समय दिखाई देती है जबकि वे पत्नी ... चिता के ऊपर चढ़ने से पूर्व भी संगीत साधना करना नहीं भूले थे। जब कभी काव्य रचना करते करते कवि का मन ऊब जाता था तब सितार लेकर हवेली में इमली के पेड़ पर बने मचान पर जा बैठते थे और इस स्थायी का पद गाने लगते थे।[2]

> भासज थागो मनडो कहू न दीस मट भाग भवन।
> इण वेरा थगत घुली न दीसै।

महाकवि के समसामयिक शृंगारी कवि राजकुमार रत्नसिंह (नटनागर विनोद के रचयिता) अनुरागी मित्रों में से थे। उन्होंने सूर्यमल्ल के संगीत प्रेम के निर्वहन के लिये दो बहुमूल्य सितार भेंट की थी कवि ने निम्न कविता में आभार व्यक्त किया है—

> सुन्दर सितारी पठाई रतनेस ज,
> बज ते पचवान की कमान कमनी सी है।

---

१ वीर सतसई भूमिका पृष्ठ २९ (द्वितीय संस्करण)
२ वीर सतसई पृष्ठ (द्वितीय संस्करण)

उटन धनाय लौन नैन की प्रनारी नव
रागिनी ठनी सी मोह पारस मनोसो है।
गुनन गनीसी सोत समनीसी जिन्हें,
गुमन सुरेश हू षा वामन यवीमी है।
कोना कहो कीतो के बजाने म जिनाद माहि
रभा के रिझान म परीक हू घनो मो है।[1]

महाकवि के व्यक्तिगत सग्रह मे वे गानो मिनार ग्राज भी उपलब्ध हैं– जिनक तारो का कवि न अपनी उगलियों से स्पन्न कर जीवन का सगीन दुहराया था।

कवित्व

महाकवि सूयमल्ल क सग्रह म जितन भी पत्र उपलब्ध ह, उनम ग्रौपचारिक शब्द निवदन के साथ साहित्य साधना की हा चर्चा है। कुछ पत्र कवि ने व्यक्तिगत रूप म लिखे थे, जिनम उनकी काव्य साधना, ग्रन्थ रचना एव कथ्य पर प्रकाश पडता है। वलवद्विलास की समाप्ति पर भिणाय नरेश वलवतसिंह का कवि ने जो पत्र लिखा था, उसम ग्रन्थ रचना के ग्रतरग पक्ष पर प्रकाश पडता है। पत्र का महत्वपूर्ण ग्रश यथावत् उद्धत किया जा रहा है। पत्र का उत्तराद्ध कवि की मानसिक वेदना की निजी कहानी है। शेष भाग म वलवद्विलास के कथ्य पर प्रकाश डाला गया है।

ग्रर गया कार्तिक म म्हार गुनम की व्याधि का प्रकाप ज्यादा हुवो सी सा एक मास की ता सीख मिली ग्रर मानसिर में ग्राराम हो गयो तो सी ऊ ही मेद का महाना सू जा महीना की सीख (ग्रवकाश) फेर मागी मिली ई री निमास ठोई म निरतर परिश्रम करि ग्रन्थ यो वलवद्विलास पूरो किया– ग्रापनी तरफ की बीचा पर लिखी ग्रावा करि सा ज्री हेतु सामला हुग्रा ती पर उतरते पौष मे तो सीख मागी छी सो मिली नही पर ग्रापका लिखवा सो कदाचित् सेवाहू म गाल मिलती ता को दिन चवार पाच सवाई मिलती दीख नही ग्रन्थ (वन–भास्कर) नी ग्रठ की त्वरा छै नी सो ग्रठै ग्रन्थ यो वलवद्विलास का सागापाग ग्रथ सहित श्रवण करिवा म महीना दाई मो कम लागे नही क्योंकि ग्रावश्यक विद्या छ त्यो म कम १ उपासना २ ग्रात्मज्ञान ३ वार्ता ४ राजनीति ५ मुख्य त्या का विषय धम का साधना ग्रर सिद्धि तथा भक्ति का साधन सिद्धि नीति का साधन, सिद्धि इत्यादिक समस्त ही विषय ग्रापकी ग्राज्ञानुसार महलया गया त्या म कम काण्ड पर पत्वा की ग्रर स्मृत्या ग्राशय [ई म सब वर्णाश्रम का धम, उपासना तथा जीविका ग्रर स्त्री धम य सब ग्रा गया ग्रर उपासना पर ग्रस्या को रूप पचरात्रादिक ग्रन्थो का ग्राशय ज्ञान काण्ड पर उपनिषदा का तथा उत्तरमीमासा सांख्य पातजल का ग्राशय ग्रर वैठे ही न्यायवैशेषिक, पूव मीमासा का ग्राशय वार्ता पर विश्व जीवन नादिक ग्रयशास्त्र का ग्रन्द नो ग्राशय नीति पर चारम्य १ कामन्दक २ प्रमुख नीति का ग्र थ को ग्राशय नी मे प्रथम ग्रगराज नी का गुणा मे छै ही गुन तीन शक्ति त्या म ही

---

१ नटनागर विनोद– राजकुमार रत्नसिंह पृ० २८

मत्र का पाँचो का अग अर च्यारी उपाय भेन्त सहित कहूया गया दूजो अग अमात्य ता का लक्षण ।। तीजा अग मैत्री तो रा लक्षण ।। चौथो अग मती या लक्षण त्या म ही पाँच रत्न, सात उपरत्न तथा सुवण १ रोप्य २ या का गुण दुपण परीक्षा तथा गगाह्न वस्त्र अन्न या का भेदा सहित लक्षण पाचम अग दन तो रा अन्न सहित लक्षण छठो अग दुर्ग ती का भेदा सहित लक्षण सप्तम अग सना तो रा लक्षण भेन्त सहित त्या म ही हाथी, घाड़ा की जाति गुण दुपण परीक्षा तीए हो मनापनि प्रमुन जाती रा समस्त ही सिलाहारा का लक्षण पछ विवाह यात्रा सी लर अवार ताई की निमावट म लिखी आई सो समस्त ही आपकी शुभचर्या शिकार, मुरली विलास सगीत, अजमेर री चढाई या छला सहगमन सहित मली गई वाता देखता रो महीना को अवसर ता बहुत कम मिलया परतु सरस्वति ने ही कृपा करि कि इतना मा लिखा म और इतना मा ग्रथ म य सब विषय सागापाग आ गया परतु पूव लिखि व्यवस्था करि विलव न जणी ममाया तीना भाई राम कृष्णजी क साथ चिरजीवी मुरारीदास (पुत्र) भेज्यो छै सो य श्रवण करा दसी अर ई की नकि प्रभाव ग्रथ लगावगी उठै वी ग्रथ बोल के वास्ते ह ग्रय म पत्रच्छेद करि लिया छ तीमी शब्द को अथ बिना पद छेद सो अधिक होमी परन्तु कमी विपय छ जठ व योग म विलष्ट पन्मी सा ई का विशेष मानन्द तो वश भास्कर पूरी हुवा पछ सीघ (अवकाश) मिल्या पर आवसी उचित तो छै नही परतु सुनवा का सा तन्दुल अगीकार करसी।'

प्रस्तुत पत्र बलवद्विलास के कथ्य पर प्रकाश डालता है और साथ ही कवि के अगाढ अध्ययन एव पाण्डित्य का परिचायक है। महाकवि मात्र इतिहासज्ञ ही नहीं वरन् पौराणिक ज्ञान के कोष थे जिसका परिचय 'वश भास्कर' के प्रथम भाग एव 'बलवद्विलास मे देखने को मिलता है।

वश भास्कर तो कवि की अक्षयकीर्ति का आधार स्तम्भ है। ग्रथ रचना के समय ही कवि की ख्याति यातायात एव सचार साधनो के अभाव म दूर-दूर तक फैल चुकी थी जिसे देख कर आश्चय होता है। कनल टाड और सूयमल्ल दोनो ही सामयिक इतिहासकार रहे। कनल टाड के साथ राजकीय प्रतिष्ठा एव शासक का प्रभाव था जबकि सूयमल्ल के पास अपनी असाधारण लोकोत्तर प्रतिभा थी जिसने उन्हे प्रतिष्ठित किया था। भारतीय सामत इतिहासज्ञ ही नही भारतीय लोगो की गतिविधि पर हर क्षण नजर रखने वाले अग्रेज भी सूयमल्ल की काव्य रचना स परिचित होना चाहते थे। स्वतत्रता सग्राम के पूव अग्रेज शासक पर्याप्त चौकन्ने हो चुके थे इसी सन्दभ मे अजमेर मेरवाड़ा के इसपक्टर आफ स्कूल्स मिस्टर फालन ने सूयमल्लजी को लिखा था—

'सिद्ध श्री बून्दी शुभ सुथान कविवर श्री सूयमल्लजी बारहट जोग्य लिखी अजमेर से श्रीयुत मि फालन साहिब बहादुर इन्सपकटर जिले अजमेर और मरवाड़े की सलाम बचना तुमने न्याय व्याकरण काव्यादि सस्कृत मे और भाषा की कविता मे जो नवीन ग्रन्थ बनाय हो उनके नाम और बनाने की मिति और उनके श्लोको की सख्या भाषापूवक व्योरेवार लिखकर हमारे पास मेहरबानी करके भेजना चाहिय। इस पत्र का प्रत्युत्तर शीघ्रता से भेजेंगे जी। किमधिकम् और विशष करके भाषा के ग्रन्थो की चाह है उन ग्रन्थो म से कुछ श्लोक व कवित्त दोहादि और उन ग्रन्थो का आशय क्या है

जरूर लिख कर भेजेंगे। हस्ताक्षर फालन मिति चैत्र सुदि २ संवत १९१४ तारीख २४ मार्च १८५७

प्रस्तुत पत्र अंग्रेजी सरकार की जागरूकता का परिचायक है साथ ही एक शताब्दी पूर्व खड़ी बोली के गुप्त प्रयोग का भी एक उदाहरण है।

सूर्यमल्लजी ने जो प्रत्युत्तर दिया वह वंश भास्कर ग्रंथ रचना के काल एवं ध्येय पर प्रकाश डालने में पूर्ण समर्थ है। कवि ने खड़ी बोली में ही उत्तर देते हुए हिन्दी के ... का परिचय देते हुए अंग्रेजी प्रयोग पर आक्षेप लगाते हुए लिखा था—

स्वस्ति श्री मदनजमर पत्तन शुभ स्थानस्य सकलसुपमा योग्य प्रजा परिपालक कवि विरद शुभ याचक सरोपकार श्री श्री मिस्टर फालन साहब बहादुर योग्य लिखितम बूंदी वास्तव्य मिश्रण सूर्यमल्ल का सलाम वचना अत्र शुभ तत्र वावत्कमजस्र की हुमतड— अपरंच पत्र आपका आया वृत्तान्त ज्ञात हुआ। आपने मेरे बनाये संस्कृत १ भाषा—२ के ग्रंथ तथा तिनके विषय प्रमाण तथा निर्माण का समय इनका प्रश्न लिखो उत्तर मालूम भया जनिय संवत् १८९६ के बैशाख में मेरे का श्री सिरकार की आज्ञा हुई कि चाहुवाण वंश चरित्र साहित आद और कलियुग लग पीछे विक्रम भोज नामी नरेन्द्रमय तिनके चरित्र भी विस्तार में आर ऐसी आज्ञा हुई तब से ही मैंने ग्रंथ का निर्माण प्रारम्भ किया परन्तु बीच बीच हुजूर की तीर्थयात्रा तथा बीमारी और काम की आज्ञा में प्रवास आग आवश्यक कारण रूप विघ्न हो जाने से वर्ष इस की नागा हो गई और वर्ष आठ में अब ग्रंथ पैंतीस हजार के लगभग निर्मित हो चुका है जिसमें संस्कृत प्राकृत व पद्य तथा बृज—भाषा की विभक्ति प्रायिक है। सामू पून कोई २ स्थल पर मरु भाषा की विभक्ति के शब्द की कविता है। कई २ केवल शुद्ध संस्कृत प्राकृत अपभ्रंश शौरसेनी मागधी पंजाबी इन छः भाषाओं की कविता करी है। अब हजार छः सात के लगभग ग्रंथ फेर बनाने का इरादा है। जिसकी अब सिरकार की तरफ से भी मतिलवरा है। इससे ज्ञात होता है कि वर्ष एक में पूर्ण हो जावेगी इस ग्रंथ से जुदा और कोई अन्य ग्रन्थ मेरा बनाया नहीं जो कुछ याद है सो सब विषय इस ग्रंथ में ही लिख दिया है सो आप जानेंगे और पूर्ण होगा तो अजमेर के ही छापेखाने में पांच सौ सात सौ पुस्तकें को छापने को भेजी जावेगी। आपका पत्र भेजने से बड़ा अपूर्व आह्लाद हुआ जिसमें महरबानगी मालूम हुई और मेरे बनाये पद्य प्रति ही चाहते हो तो मरजी जस विषय की इमारत करने से भेज जावेंगे और महरबानगी वैसी ही बनी रहे और एक विज्ञप्ति है कि छाप के इश्तिहार वगैर वस्तातों में पत्र आवते हैं और पहले भी छाप की कई किताबें निकली हैं जिनमें शब्द का एक स्वरूप नहीं छपता किसी में अकटोवर १ कही अक्टोबर २ कही अक्टोवर ३ कही अकटाबर ४ कही अकटावर ५ और कही अंगरेज १ कही अंगरेज २ कही अंगरेज ३ कहीं अंगरज ४ ऐसे भिन्न २ स्वरूप देखने से शुद्ध अशुद्ध का निश्चय नहीं होता और इश्तिहार वगैर के पत्रों में भी कई अंगरेजी शब्द अधिकारियों की संज्ञा वगैर के छपे आते हैं जिनका भी अर्थ हिन्दी में मिला करे तो कोई बात का संदेह नहीं करे। अंग्रेजी पारसी में परिचय नहीं है जो

जनता के लिये उपयोगी हो। पत्र का विलंब आवश्यक कारणांतर से हो गया जिसको माफ करना चाहिये।

मिति ज्येष्ठ सुदि ११ शनिवार वि० सं० १६१६

महाकवि सूर्यमल्लजी के व्यक्तिगत संग्रह से राजस्थान के प्रसिद्ध इतिहासज्ञ कवि राजा श्यामलदासजी का पत्र उपलब्ध हुआ है जिसकी प्रासंगिक रूप से चर्चा कर देना वाछनीय होगा—

स्वस्ति श्री वदी शुभस्थानस्य सरापमा योग्य मिश्रण ठाकुरा श्री मुरारीदास (सूर्यमल्ल के पुत्र) योग्य उदयपुर निगम वास्तव्य कविराजा श्री जी की सुदृष्टि कर समोचीन है। राज्य को शुभ सामाचारण निरतर अपेक्षित है अपरच या दिन राज्य की कुशल पत्र नही आयो सो दूर देश को मिलाप तो पत्र द्वारा ही होये करह सो लिखावता रहसी समाचार जायसी कि ठाकुरा सूर्यमल्लजी को बदयो वंश–भास्कर' ग्रन्थ की एक चरित्र जी मे श्री पाटेश्वराय की वरणन भी विशेषतर होव। काव्य रचना भी प्रगट होवे सा लिखाय डाक माग पासल मे भेजिवायद भी यठ श्री जी के नजर किया जावसी और अठा योग्य काय स्वस भाण लिखाय करसि।

श्रावण सुक्ला ४ बुधवार स० १६३६

अंतिम समय—

सरस्वती पुत्रो के भाग्य की रखायें लगभग एक ही मशीन से लिखी गई हैं चाहे वो भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हो या जयशंकर प्रसाद चाहे प्रेमचंद हो या निराला। निर्धनत्व की धूप में तपना और साहित्य साधना करना ही जीवन का लक्ष्य रहा है। सूर्यमल्ल भला अपवाद कैसे हो सकते हैं? जीवन भर जिसकी झोली प्यार और सम्मान से भरी रही हो वही आश्रयदाता एवं राजा रामसिंह के सामने न्याय संगत आर्थिक न्याय के लिये सदैव जूझता रहा। क्या महत्वाकांक्षी रावराजा रामसिंह महाकवि की प्रतिभा के साथ न्याय कर सके। कुछ भी कहना असंगत होगा पर निर्भय स्वच्छ सिद्धांतप्रिय व्यक्तित्व की कठोर चट्टान के नीचे करुणा की अन्तःसलिला प्रवहमान देखते हैं जो पत्रों के कगारों को चीर कर बह निकलती है। वि० सं० १६०६ में सूर्यमल्ल ने विज्ञप्ति स्वरूप एक पत्र लिखा था जिसकी प्रथम पंक्ति इस प्रकार है—

'विज्ञप्ति पत्र आज को आज न बाचसी तो ईष्ट सपथ छ'

और फिर न्याय एवं करुणा की लंबी कथा गूंथी गई। पत्र का कुछ अंश इस प्रकार है—

'ओलखो एक मालूम हावसी म्हारे हजार बीस विश्वास छै अर दुसाध्य दीखो है ती सू पहली अज शरीर तो ... स्वा सादिवा लागाती सूं आराम तो हाल हुओ नहीं परंतु वैद्य न बताओ को पथ्य की परवानगी नहीं चम्ली अर स्त्री का खेद मे भी कोई दवा की अज कराई ती पर ये हुकम साम्य कि दामा सूं दीजो तीकी की विशेस चिंता हुई परमारों सेन् हान मिटता दीसे नहीं इ वास्ते की कठई परभाय औषध मिले ती का

तिल्लाम पर वी घटन को विचारी छै तीसू एक घटन म दो ही वात सही जासी य दुलभ हाई तो कै श्रौषध यई कोडी कथ्रा मू श्रावे ई मू या वी जाडी की ।

मिति कार्तिक कृष्ण २ स १६०५

बाद मे प्रकारण ही रावराजा का श्राश्रय भाव भी शिथिल हो गया फलस्वरूप उपेक्षित क्षणा म भी कवि को जीना पडा। उन्ही दिनो की स्मृति इस पत्र म उल्लिखित है—

पीपलया जयपुर क ठाकुर फतसिंह क नाम लिखित पत्र का आवश्यक अश इस प्रकार है—

श्रर माघ सुधि म बू दी मे श्राप हाजिर हुवा नो नम्बन तो मरजी ही दीसी ही परतु घणो काम लागे तो बो मानी ही जाव छै तीसू श्रोरा म तो दण्ड एक साल का हासिल हुम्रा श्रर म्हारे रुपया तीन सौ हरसाल दण्ड का लिखी दिया बडा तमाशा सु पुराणा बोहरा ललकार ही दिया त्या का रुपया पैसा असबाब घर को तमाम बिकी सरकार ने चोडे श्ररज करवो तो बरस तीन सो मोकूफ च कर लियो श्रौर एकात को श्रौसर मिले नही श्रौर क हाथ श्ररज करावा सो श्रा ना तीन तीन वरस मालूम हुई नही रतलाम सू माघ म श्राया पाछे फागुन मे श्ररज करानी छा सो श्राल ताई मालूम नही हुई छ श्रसी दीख छ क मूडा सू ता सीख न देणी श्रर ।

तो ठीक छ श्रर कवर जी की तथा महाराज कु वार का विवाह की बी कोडी एक हाल ताई तो बख्शी नही ग्रन्थ को बणावो बी परसोहि मजूर ग्रन्थ का लेखक वगर तमाम छुडा ही दिया सुणवाई कर नहि तीसू चित्त पर बरस २०० निहायत उदासी बढ रही छ ।

पौष शुक्ला प्रतिपदा स १६१४

रावराजा रामसिंह की नाराजी बाह्य रूप म भले ही श्रकारण लगती हो पर सकारण रोग का कारण था पर रूप से सूयमल्ल द्वारा काला की फौजो (स्वतत्रता सग्राम के सेनानियो) की मदद करना जिसने रावराजा क सामने दुविधापूर्ण स्थिति पैदा कर दी थी, रावराजा न भेट करना बद कर दिया था उन पर २००) रु का विशेष दण्ड प्रतिवर्ष के हिसाब स किया गया । रणदाताश्रो को प्रथाह वसूली के पीछे लगा दिया इससे कवि का मन विरक्त हो गया । फिर रावराजा न कवि की गतिविधियो पर प्रतिबन्ध हेतु पुन वश भास्कर के लेखन काय मे व्यस्त कर दिया । कवि को अब इतिहास क उजले पृष्ठो को श्रकित करना था पर श्राश्रयदाता इतिहास के इस कटु सत्य को नही सह सके श्रौर कतिपय मायताश्रो के श्राधार पर 'वश भास्कर अधूरा रह गया । कवि ने उन दिनो को इन शब्दो मे स्मरण किया है—

श्रौर ग्रथ 'बलवद्विलास तीन सौ के अनुमान तो परार कू बणाय तू पायो तो पी छै वैशाख का महीना एक मे बणी गयो छो तो पीछ लागत ई ज्येष्ठ म वश भास्कर' पूरण करिवा का हुकम हुया तो की चोकस पर पुरोहितजी १ श्रग्निमिश्रजी

२ राम्या भ्या तया का नाम तो पहली का पत्रा में लिखणा ही था सो थामू पाठ निरहा हाजरी मालूम करि देवा की फरमाई जो प्रटयाट जाए मालूम करे।

तो मैं की कोई दिन परिश्रम तीन पहर तो कम जाणो छ जणी में ही उतार को हुकुम आव छ अर समक कोई पाम राखो दिवा [illegible] सो पाया पायो लिख हो बणावटी लिखी जाय परतु मन तो परिश्रम पूरो ही पड छ इतनी सीघ्रता पहली होती तो सातरा भाठवां मात म हो जाती परतु अब परवा जट सौ ही या सीघ्रता हाइ तो सा पाने ही ई ग्रन्थ की बणावटी म पूरो दा पही का अवसर मिलता नहीं रात्रि में पही दो घडी का बणावटी हाती तोसा परहाद [illegible] प नहीं पूरा हो तो जल्दी जा जावता

ज्येष्ठ कृष्ण ५ स १६१५

एक अन्य पत्र म व्यवस्था की चर्चा करते हुए रत्नपुर क शासक बख्तावरसिंह को कवि ने लिखा था—

सरकार ने ग्रन्थ वंश भास्कर का निर्माण का प्रारंभ फेर कराया हर बर एक म समाप्त करि देवा को हुकुम हुओ तो की चाकरा पर पुरोहित रामगोपालजी मिश्र अम्बालाल जी म दोनों भार पास राख्या सो समस्त ही दिन की बणावटी की हाजिरी नित्य ही मूल छन्दा की तथा छन्दा की गिनती स सरकार म लिखा भेज [illegible] अर गन्दो तीन महीनो से हवेली रही आ म की कोई काई समय म प्रसादि जाणो किल ही बुलाया लियो छ पाच सात दिन म रात्रि क समय हवेली की सीन हाई छ। फजर (सुबह) ही पाछ चाकरी म बुलाई लयो छ।

मिति माघ शुक्ल स १६१५

रत्नपुर के शासक बख्तावरसिंह जी क नाम लिखित अंतिम पत्र रोग ग्रन्थ पर खेद करते हुए लिखा—

चित्त म दु खी पर हाल विशेष हृदि न आयो क्योकि अब मारो देह की अब श्वा १ गुल्म २ का प्राबल्य करिर रुग्ण ज्यादा रह छ तीसूं जावो ही छ सो जाएगी।'

मिति वैशाख शुक्ल पक्ष ६ संवत् १६२४

रावराजा रामसिंह महाकवि की अस्वस्थता के कारण अंतिम दिनो म बहुत चिंतित रहे उनकी व्यक्तिगत देखभाल के लिए उन्हें गढ म बुलवा लिया था। वहीं उनका उपचार चलता रहा पर रोगो ने शरीर जर्जर कर दिया था। महाकवि की मृत्यु दुर्ग म ही वि स १६२५ को हुई। इस प्रसग की चर्चा वंश-भास्कर की अवशिष्ट मयूखा क लेखक मुरारीदास (पुत्र) न इस प्रकार की है—

भूत दव अक ससि (१६२५) सुचि सुचि केर
एकादसी ग्यारह भार तीन वेद नाडी दिवर प्रात
मिश्रण कवीन्द्र रविमल्ल वह्नि भाय यतई
बूंदी दुग माहि प्रभु निभर नेर पात

सा सुनि अनन्त शोक धरिके नरेन्द्र आय
स्नान करि अनल अंजलि दिये ऊ तात,
तास पुत्र अगुन मुरारी दास नायक को
अभियुत थान आगि दे विसामी हित दिखात

आश्चर्य है कि वीर सतसई के विद्वान त्रय का ध्यान इस प्रामाणिक साक्ष्य की ओर क्यों नही गया ? जो कि अंतिम और प्रामाणिक साक्ष्य है।

अब तो सून रावले, भावल जी की बावडी, वर निजनक्ष, जजर पालकी, अकुश सितार काल की क्रूरता से कलुषित हवेली और उसमे वशजो के लिय धरोहर के रूप मे रखी हुई हस्तलिखित प्रतिलिपियाँ सैकड़ा पृष्ठा की वश भास्कर सहायक सामग्री राजाओ के हस्तलिखित उनके पुनीत स्मृति चिह्न है जो शताब्दी पूव महाकवि की अवशिष्ट धरोहर के रूप मे सुरक्षित है।

महाकवि सूर्यमल्ल और उनका वश भास्कर

ब्रजराज शर्मा

विबुध वर गुणाना पालको बुद्धि पूर्ण,
गहन विविध वत्त कारको वश भानो ।
नपति वर वराप्तो धीर चित्ताब्ज पोष
ह्यपररविरिवासीत् चारण सूय मल्ल ॥

— रामसिह शतक (अप्रकाशित)

यहा महाकवि कुञ्जविहारीजी ने अपन रामसिह शतक मे सूयमल्ल को दूस सूय कह कर स्मरण किया है। वस्तुत सूयमल्ल असाधारण प्रतिभासम्पन्न इतिहास विद्वान थे। वश भास्कर वीर सतसई के अतिरिक्त उनकी दूसरी अमर कृति है। जह वीर सतसई म, राष्टीय चेतना व जातीय स्वाभिमान के पारस्परिक समन्व विद्करण के अनेक वीरतापूर्ण ओजस्वी स्वर मुखरित ह वही वश भास्कर म व्यापक वीरत्व–भावना सहज और स्वाभाविक वीरोत्साह वीर–सज्जा स य तयारी और प्रयाण वीरो की उत्साह भरी हुकार चारणो की उद्दीपनकारी गर्वोक्तिया– यहा वहा सवत्र बिखरी पडी ह जो पाठको तथा श्रोताओ म वीर रस का सचार करती है।

एक ओर वश भास्कर वीर रसाणव है उसम युद्धवीर दानवीर सत्यवीर धमवीर –वीरता के सभी सद्गुणो स युक्त पात्रो के चरित्रो का समावेश हुआ है वही वह दूसरी ओर कवि क अगाध पाडित्य का अद्भुत कोश भी है। इसके व्यतीत वह ऐतिहासिक वत्त रत्नो की मजु–मजूषा भी है। इस त्रिवेणी मे अवगाहन किये बिना ग्र थ का मूल्याकन सम्भव नही है।

वंश भास्कर में कवि ने कई एक भाषाओं का अभिव्यक्ति के लिए प्रयोग किया है। संस्कृत, प्राकृत, प्राकृत मिश्रित भाषा, शुद्ध ब्रजभाषा, मरुदेशीय भाषा आदि सभी भाषाओं का यहां प्रयोग हुआ है– कवि को सभी भाषाओं पर अच्छा अधिकार है। ग्रंथ में गद्य पद्य दोनों का प्रयोग है। गद्य प्रायः अवतरण हैं। कवि ने फारसी में भी रचना की है। इस भाषा वैविध्य के कारण ग्रंथ (श्री कृष्णसिंह बारहट द्वारा टीका कर दिये जाने पर भी) सामान्य पाठक के लिए कुछ दुरूह हो गया है। इसका ज्ञान कवि को भी था– इसीलिए उसने सरलीकरण प्रक्रिया के अन्तर्गत 'ग्रंथ–नियम' शीर्षक से भाषा सम्बन्धी कुछ जानने योग्य संकेत दे दिये हैं। ये संकेत भाषा विशेष की विभक्तियों, अव्ययों तथा व्याकरण सम्बन्धी दूसरी सामान्य पहिचानों के लिये हैं। अस्तु।

वंश भास्कर की रचना बूंदी के तत्कालीन महाराजा श्री रामसिंह के आग्रह और उनके उत्साहित करने पर महाभारत तथा श्रीमद्भागवत् को आदर्श मानकर हुई लगता है। यही कारण है इस ग्रंथ की वर्णन शैली उन्हीं मान्य ग्रंथों के ढर्रे की है। कथावस्तु को पहले समास शैली में कहकर फिर विस्तार से व्यास शैली में कहा गया है। महात्मा तुलसीदास का 'मानस' भी इसी शैली में प्रस्तुत हुआ है। वंश भास्कर सम्पूर्ण भारत की सारी क्षत्रिय जाति का विस्तृत इतिहास नहीं है। उसमें इनका उल्लेख मोटे तौर पर हुआ है। विस्तृत जानकारी तो उसमें बूंदी राज्य के इतिहास की ही है। प्रसंगवश दूसरे राज्यों, दिल्ली सल्तनत की घटनाओं का भी जिनका सम्बन्ध बूंदी राजघराने से भी थोड़ा बहुत जुड़ता है– वर्णन उसमें है।

कवि ने इसका अपने ग्रंथ के आरम्भ में स्वयं उल्लेख किया है—

> यह समास उद्देश्य किय, बरनो अब करि व्यास।
> सुनहु धराधव दै श्रवण कुल बहुमान प्रकास॥
>
> इतरन विच अनपत्य मृत चरित्रौं विरचित चुहान।
> हड्डुन का सब अखिल हौं, विस्तर पूव बखान॥

ग्रंथ की प्रेरणा का स्रोत

यह स्मरण रखने की बात है कि वंश भास्कर कार मूलतः कवि है। उसकी इस साधना का मूलस्रोत भारतीय संस्कृति है, भारतीय सहिष्णुता मूलक धर्म है। अतः उसकी प्रतिभा ने इन दोनों की रक्षा और पोषण में देश कल्याण देख इनके पोषकों के उत्कर्ष और अपकर्ष में प्रसन्नता और खिन्नता के दर्शन किये हैं। ग्रंथ में स्तुतिनिन्दा के प्रसंग इन्हीं तत्वों की प्रेरणा के फल हैं। इस विषय के स्पष्टीकरण के लिये वंश भास्कर के एक दो प्रसंगों का उल्लेख अनुचित न होगा।

ईरान के शाह अबूफर के भारत आक्रमण के समय, चौहाण गोग को –जिसकी वपगाठ अथवा पुण्यतिथि 'गोगानवमी' के रूप में सदियों से हम मनाते आ रहे हैं— सहायतार्थ आये भारत के अनेक छोटे–बड़े राजाओं को गोग जब यह कह कर लौटाना चाहता है कि वह स्वयं शत्रु को परास्त करने में समर्थ है और उनकी सहायता की उसे

आवश्यकता नहीं है, तो राजाओं ने जो गोग को उत्तर दिया, वह अत्यन्त गौरवपूर्ण और भारतीय आत्मा का सच्चा स्वर है। उन्होंने कहा—

> मिल्ल सो इक को बनें सा वन समस्तन का पराजय।
> एक कारण एह, भो मुव जाय दुल्न प सुर्प भय॥

गोग के स्वर में राष्ट्रीय चेतना के स्थान पर मिथ्या मह और अदूरदर्शिता थी जबकि राजाओं के कथन म दूरगामी दुष्परिणामों के प्रति सतर्कता के भाव थे। काश यह चेतना, यह एकता का भाव यह सतर्कता, देश के प्रतिनिधियों में आगे भी बनी रह पाती? हां सूर्यमल्ल ने इस मनोवृत्ति को ग्रंथ में जहां भी अवसर आया है खूब सराहा है। कवि को यह सदैव अखरता रहा कि उसके आश्रयदाता ने मेवाड से वैर पाल कर दिल्ली की जी हुजूरी म लाभ देखा। आत्म सम्मान बेचकर अपनों में मनमुटाव रखना उसे कभी नहीं भाया। उसने कहा—

> निरखहु हाडा राम नप ऐसी बत्तन अज्ज।
> बरतै मिच्छन हुकुमवस अचरज, बढन अवज्ज॥

इसी तरह एक दूसरे अवसर पर कवि ने अपने आश्रयदाता के पूर्वज को चित्तौड पर आक्रमण हेतु बढ रहे अलाउद्दीन खिलजी की सहायतार्थ अपने पुत्र को उसके साथ करते देखा, तो उसने व्यंग–पूर्ण उलाहना दिया है—

> भूप कनिक सहचर भय नियति नम्र मिलिमग्ग।
> सग कनिन दिय आन सुत, इक रहि राण उग्ग॥

सच तो यह है कि नारी गौरव स्वातंत्र्य भावना, स्वदेशी का जीवन में आग्रह सूर्यमल्ल के साधना मंत्र रहे। इसके अनेक उदाहरण ग्रंथ म सहज सुलभ हैं।

सूर्यमल्ल इतिहासकार

वंश भास्कर के ऐतिह्य पर कई एक विद्वानों ने प्रश्नचिह्न लगाये हैं। उनको उसमें बहवा भाटों द्वारा दिये माहात्म्य में कल्पना अधिक तथ्य कम दिखाई दिया है। अवश्य ही सूर्यमल्ल का मुसलमानी दरबारी लेखकों की निष्पक्षता पर कम विश्वास रहा था। यद्यपि उसने तवारीख फरिश्ता 'अकबरनामा आदि ग्रंथों से मदद लेकर सामग्री के सत्यासत्य का निश्चय किया पर उसको संदेह इस विषय में बना रहा। अग्रेज लेखकों के विषय म उसको उतना संदेह नहीं था पर उनको भी पूर्ण–यथार्थता को वह कम स्वीकारता है। उसने स्वयं अपने ग्रंथ म इसे इस प्रकार स्वीकारा है—

> तवारीख फरिश्तादि म्लेच्छेभ्यो विनिश्चितम्।
> तथाऽकबरनामादि यवनानीम्य उद्धतम्॥
> दिल्लीशाना प्रति प्रथमायाति महदन्तरम्।
> अद्भुत यमतवयेऽपि गौरवेष्वपुष्पालिपि॥
> अभूत मन मासाद्य दिल्लीराडयवनावस्तो।
> उद्देश्य नादितास्या हा द्वापरालम्बन क्वचित्॥

अंग्रेज लेखकों के विषय में उसका कहना है कि उन्होंने भी आर्यावर्त में रहने वालों का वृत्त यथार्थ-कई जगहों पर-नहीं लिखा —

इंग्रेजव् समार्याणां मायावत निवासिनाम् ।
न राजा वलि निर्णीत याथार्थ्यच्युत बहु ॥

इसी प्रकार तथैव यवनोद्देश्य सन्देहिय स्वीकृत्ता मत । — मुसलमान लेखकों को भी वह सन्देह न देखता है। उस प्रायः नजरों की विश्वसनीयता आती है। वह कहता है कि आर्यों का वृतान्त अधिक समीप का और सत्य के निकट है—

'आयवृतान्तस्तस्यात्त सामीप्यतोऽधिकम् ।

इतना सब कुछ दोष परिहार सामग्री होते हुए भी वंश भास्कर में कुछ घटनाओं का आगे पीछे होना और कुछ घटनाओं की तिथियां शुद्ध न होना बताया जाता है— जो सही है। पर इन त्रुटियों को कवि ने स्वीकारा हुआ है और यह लाचारी से हुआ है।

सब बीस लग अन्तरसु विपुर्वापर बोध।
तिनसों अन्तर अधिक तब, वत्तन समय विरोध॥

कवि ने बीस बरस का अन्तर स्वीकारा है— पर अन्तर कई जगह इससे अधिक का भी है। यह अन्तर अनिरुद्ध चरित्र तक कवि ने माना है। घटनाओं के व्यतिक्रम के सम्बन्ध में उसने कहा है—

कहिं स्वरू अपरेहिं कहें कहुँक अनन्तर काल ।
कहुँ अन्तर समकाल कहुँ पै सम्भव महिपाल ॥
कहुँ पहिलो पीछे कहुँक, पीछे हुव पहिलें सु ।
बढ़ि प हायन बीस लों, हाइजुपुव्वन है सु ॥

परन्तु हाडा वरीसाल के चरित्र में बूंदी पर आक्रमण करने वाले मालव के सुलतान होशंग की जगह सूर्यमल्ल ने बाजबहादुर लिख दिया है जो अवश्य ही ठीक नहीं है। काल क्रम और घटना व्यतिक्रम सम्बन्धी सामान्य ऐतिहासिक कुछ भूलों के पाये जाने पर भी देश के अनेक विद्वानों ने वंश भास्कर की ऐतिहासिकता को मुक्त कंठ से सराहा है। वंश भास्कर की टीका करने वाले उद्भट विद्वान् श्री कृष्णसिंह ने सूर्यमल्ल को निष्पक्ष, निस्पृह सत्यवक्ता और अद्वितीय लेखक माना है। भूमिका भाग में उन्होंने सूर्यमल्ल की भूरि भूरि प्रशंसा की है। महामहोपाध्याय श्री श्यामलदास ने भी सूर्यमल्ल को आदरपूर्वक स्मरण किया है।

इतिहास के सुधन्य विद्वान् डा॰ श्री मथुरालाल शर्मा एम ए डी लिट ने कोटा राज्य के इतिहास में लिखा है कि "सं॰ १८९७ में सूरजमल मिश्रण ने वंश भास्कर नामक बूंदी राज्य का काव्यमय विस्तृत इतिहास लिखा जिसमें प्रसंगवश कोटे के कई नरेशों का उल्लेख है। यह ग्रन्थ चार भागों में विभक्त है और इसमें कुल ४०४३ पृष्ठ हैं। ऐतिहासिक शोध की दृष्टि से इसके प्रथम दो भाग तो विशेष महत्व के नहीं हैं परन्तु तृतीय और चतुर्थ भाग बूंदी कोटा अथवा राजपूताने के इतिहास के

लिए ही नहीं, किन्तु भारतवर्ष के इतिहास के लिए भी उपयोगी सामग्री से भरा है। कोटा राज्य के इतिहास से सम्बन्ध रखने वाले इस ग्रन्थ के अधिकांश स्थल विस्तृत और प्रामाणिक हैं। डाक्टर साहब ने सूयमल्ल और टाड की प्रामाणिकता को वंश भास्कर के सुजान की शर्तों के प्रसंग में एक बार फिर समस्त रूप में दुहराया है।

इसी प्रकार प्रसिद्ध इतिहास मर्मज्ञ श्री पृथ्वीसिंह महता ने भी 'हमारा राजस्थान' ग्रन्थ में पृ २६४ पर लिखा है—

'कर्नल टाड का ग्रन्थ प्रकाशित होने (१८३५–३६ ई०) के बाद अपने समूचे इतिहास को हिन्दू–मुस्लिम संघर्ष के रूप में देखने और उसी रूप में उसकी व्याख्या करने की एक नयी प्रवृत्ति ने जन्म लिया था। कोटा (?) के कवि सूरजमल द्वारा वंशभास्कर नामक एक वृहत् काव्येतिहास की रचना (१८३४–६८) इस नयी प्रवृत्ति के साहित्य का एक अच्छा नमूना है।

इस तरह हमने देखा कि सूयमल्ल की मनोवृत्ति ने भारतीयता–राष्ट्रीयता की भावना को लेकर साहित्य क्षेत्र में पदार्पण किया था। चाहे इतिहास हो चाहे कोई दूसरा विषय सर्वत्र कवि का दृष्टिकोण व्यापक राष्ट्रीयता का रहा। उसे रामसिंह भी इसी कारण प्रशंसनीय लगे क्योंकि वह साहब का साल, विदा विदपि का ज्ञातकाल थे। उसके लिए उसने कहा—

तुही कलि भूपन का मिल दैन,
तुही सरि साहन सौं मुविलन।

रेखाङ्कित वाक्य विचारणीय हैं। साहन का साल अर्थात् अंग्रेज शासकों के हृदय का शल्य और 'तुही सरि साहन सौं मुवि लैन' अर्थात् विदेशी शासकों द्वारा परतन्त्र हुई मातभूमि को युद्ध कर मुक्ति दिलाने वाला। स्पष्ट ही ध्वनि है कि स्वतन्त्रता संग्राम में सक्रिय सहयोग करने वाला राजा रामसिंह ! चूंकि राजा ने ऐसा कुछ जाहिरा तौर पर नहीं किया था अतः यह व्यंग्य उसे कार्य क्षेत्र में क्रियाशील होने के लिए था। अस्तु।

सूयमल्ल की बहुज्ञता

जैसा कह चुके हैं सूयमल्ल के व्यक्तित्व का एक पक्ष उसके बहुज्ञ पंडित का भी है। इस विषय में तो कवि के लिए जितना कहा जाय कम है। वंश भास्कर ग्रन्थ के प्रथम भाग में कवि ने विविध विषयों की जानकारी विषय प्रवर्तक आचार्यों द्वारा दिलाई है। राक्षसों से प्रताड़ित और प्रतिकार करने में अक्षम आचार्यों ने ब्रह्माजी से संकट से छुटकारा पाने का उपाय पूछा है और इसी सन्दर्भ में आचार्यों का ज्ञान–कवि के द्वारा–अपनी रचना में उद्देला गया है।

चाहे पिंगलाचार्य द्वारा प्रवर्तित छंद शास्त्र हो चाहे महर्षि गौतम का न्याय शास्त्र, पतंजलि का योग हो चाहे पाणिनि का व्याकरण–सभी साहित्यिक भूषा में वहां प्रस्तुत हैं। जैमिनि के कर्म–सिद्धान्त व्यासजी के तत्व (अध्यात्म) सात कौत्स के

शकुन शास्त्र और कणाद, शालिहोत्र के अनुमिति, पशु विज्ञान की भी सम्यक चर्चा वंश भास्कर में है। इतना ही क्यों, कुत्तों, बकरियों, गायों और बैलों के शुभाशुभ लक्षण, भूमि परीक्षण, जल शोधन आदि विषयों का उल्लेख भी यथास्थान हुआ है। कवि का शास्त्र ज्ञान, उसकी नीव निपुणता, उसका गहन अध्ययन वंश भास्कर की रचना में सर्वत्र बिखरा है। कवि की बहुज्ञता का यथार्थ ज्ञान तो उसकी समग्र रचना को पढ़ने से ही हो सकता है। हाँ, उसकी कुछ बानगी से थोड़ा अनुमान लगाया जा सकता है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत है।

भगवान परशुराम ने अचूक निशाना साधने की विधि का उल्लेख इस तरह किया है—

'पूरक सों सर ऐंचिपुनि, कुंभक सों थिर आदि।
सह हूकृति छोरयोजुसर, क्रम च्युति हूं न कदापि।

पाराशर मुनि ने बैल के अच्छे बुरे होने की पहिचान बताते हुए कहा—

'पग उठात जिमि पक्ते वृष वह भार बहैन।
कृष्णसारनिभ, भस्मनिभ, वृषडिंग थूल रहै न॥

कीचड़ से बचकर चलने वाला—उसमें डरने वाला—बैल भार वहन कर सकने में असमर्थ होता है। कृष्णसार मृग या भस्मी के रंग का बैल भी समृद्धिकारक नहीं होता।

आचार्य भरत ने ब्रह्मा से निवेदन किया कि आपने राक्षसों को बिना परिणाम सोचे वरदान दिया है। परिवृत्त अलंकार सदृश आपने वर देकर दुखों को आमंत्रित किया है। विष वृक्ष, जिसे आपने बोया तथा सींचा है भला कब तक सफल होने से रुका रहेगा?

'बयो कहाँ लगि नहिं फलै सिंचमान विरख सक्ख।
अलंकार परिवृत्तजिमि दै वर लीन्हों दुक्ख॥'

इसी प्रकार साहित्य में अभिधार्थ से लक्ष्यार्थ तथा व्यंग्यार्थ का उत्तरोत्तर उत्कर्ष व्यक्त करने के लिए उसने बताया है—

'विरत भये अभिधादिज्यौं लक्षत व्यंजनादौर'

आयुर्वेद औषधि विज्ञान में पारे का बड़ा महत्व है। इसी बात को सूर्यमल्ल ने इस प्रकार व्यक्त किया है—

'धर्म प्रवर्तक दुष्ट दमि इतर अप्प सम कौन?
ज्यौं औषध भूलोक में पारद सम दूजौन।'

विषम-ज्वर तथा उदर कृमिनाशक औषधियों को क्रमशः निम्नलिखित तरह व्यक्त किया गया है—

साधु भक्त सबही भजै बढ़त खलन को दौर।
अमृता मधु घन हरन तैं ज्योंविषम ज्वर घोर॥

उपसम रूप उपाय कछु हरि अनामय होन।
होहु अत्र कृमि खलन पर, तत्र राजिका लोन ॥

इसी प्रकार ग्रन्थ में अनेक ऋषियों तथा महर्षियों के सिद्धान्तों का कथन ग्रन्थ में है। सर्वतरुपोषक गुणप द्रव्य निर्माण विधि तक का वर्णन भी वहाँ पाया जाता है। कवि की बहुज्ञता और पाण्डित्य को देखकर बड़ा आश्चर्य होता है।

सूर्यमल्ल कवि

सूर्यमल्ल जैसा कि पूर्व में कह आये हैं सिद्ध वाणी में रसवादी सफल महाकवि हैं। वीररस उनकी साधना का मुख्य मन्त्र है। यद्यपि रचना में प्रसंगानुकूल मुख्य रस के पोषक तत्व के रूप में वीररसेतर रसों का भी समावेश देखने में आता है पर प्रधानता वीर रस ही की है। वीर रस का स्थायी भाव उत्साह है और इसका संचार जीवन के युद्धेतर क्षेत्रों में भी देखा जाता है और इस प्रकार धर्मवीर, सत्यवीर धीरवीर दानवीर आदि के स्वरूप स्थिर होते हैं। वंश भास्कर में भी इन स्वरूपों के दर्शन होते हैं। परन्तु मुख्य रूप युद्ध वीर का ही ग्रन्थ में पाया जाता है।

वीर रस का आलम्बन शत्रु होता है। आश्रय के उत्कर्ष की व्यञ्जना के लिए शत्रु के शौर्य प्रताप, शक्ति और साधन सज्जा का वर्णन होता है। इस प्रकार वीर के शौर्य और दर्प की अभिव्यंजना होती है। युद्ध दुंदुभि चारणादि की उत्साह बढ़ाने उक्तियाँ इसके उद्दीपन विभाव हैं। रण कौशल दिखाने वाला युद्ध की बात सुनते ही उत्साहपूर्ण रूप से भरजाने वाला वीर इस रस का आश्रय होता है। हर्ष रोमांच, बारबार शस्त्रों पर हाथ जाना नेत्रों में युद्ध के लिए तत्परता के भाव आदि वीररस के अनुभाव हैं। हर्ष मद मस्ती निश्चिंतता–इसके संचारी भाव हैं। घटनाओं की विविधता और व्याप्ति की दृष्टि से युद्ध वीर में सभी वीररस के भावों का समावेश हो जाता है। वंश भास्कर ग्रन्थ सभी प्रकार के वीर चित्रों का सुन्दर संग्रह है अनूठा एलबम है।

कुछ चित्रोपम वर्णन प्रस्तुत हैं। माडू के सुलतान ने बूंदी पर आक्रमण किया है। वरीसाल ने सीमित साधन होते हुए भी मुकाबला करना साथ तयारी की है। माडू की बेशुमार सेना का प्रतिरोध करने, बूंदी की अल्पसंख्यक किंतु वीर टुकड़ी उपस्थित है। मृत्यु सामने देख राजा ने बूंदी शहर के दरवाजे खोल दिये—

मरन महीपति अविस इम अरर खुलाय आय।'

और फिर—

नमात भू हमल्ल हल्ल वग्गिसल्य निक्कस्यो।
खुलाइ द्वार के किवार आजि फार उत्तर्यो॥
नसे दुता अड अग द्रग रग दद्दते।
चले तुरंग ज्यों कुरंग या मलग मद्दते॥

इस पद्यांश में आश्रय हाडा वीर में आलम्बन मुसलमानी सेना से भिड़ने का उल्लास

हुए, देखा जा सकता है। और आगे जमा गेमांचकारी युद्ध हुआ, उसकी झलक देखिए—

झरी कृपान यो खनाकि ज्यों झनकि झल्लरी।
दुरे प्रवीर श्रोन तीर होत चीर दल्लरी॥

× ×

करत काज धज्जराज मिच्छराज पै अभ्यो।
दुराम तास दंति तास चन्द्रहास तैं दम्यो॥
समत्थ तत्थ हत्थि हत्थ बाजिमत्थ संग्रह्यो।
रह्यो दुमाग भग्ग दै करग्ग लग्ग जोरह्यो॥
भई भुसुंडि न सुंडि है मिराथि चंडि यो भली।
मनी सि याम बाम नाग काम स्याल कुंडली॥
कटन सुंडि लुंडि रुंडि चौहुधारिगो करी।
फियो स्ववाह और गाह भो निगाह सो करी॥

बैरीसाल के खड्ग से हाथी की जिसने उसके घोड़े का सिर पकड़ रखा था— सूंड कट गई है। मुलतान का हाथी मैदान छोड़ भागा है सिर पर भारी चोट आई है। सन्देह और उत्प्रेक्षा अलंकारों की संसृष्टि युक्त वर्णन बड़ा सजीव बन पड़ा है। अयाल युक्त घोड़े की गर्दन का हाथी द्वारा सूंड से पकड़ने को कवि ने, साप द्वारा अपने बच्चों का बचाने के उपक्रम के रूप में देखा है। वर्णन आगे बड़ा विस्तृत है। पढ़ते समय तलवारों, बरछों और भाला की टकराहट से उठने वाला स्वर कानों में भरता सा लगता है। बैरीसाल, जावद्द और निम्मदव के युद्ध बेजोड़ हैं। बैरीसाल के सिर के चार हिस्से हो गये हैं उसने उन्हें कमरबन्द में बांध लिया है। सिर कटने पर उसका कबंध लड़ता है। बेहोश होकर गिरता है पर तु थोड़ा चेत आने पर वह फिर लड़ता है। जावद्द ने भूमि लाशों से पाट दी है— कटे हुए सिरों से युद्ध भूमि पर मतीरों का खेत जान पड़ती है।

मलेच्छ मुड पट्टियें मतीर खेत की मही।'

युद्ध वर्णन सूर्यमल्ल ने बड़ी ही प्रवाहमयी भाषा और सजीव शैली में प्रस्तुत किये हैं। अलाउद्दीन खिलजी द्वारा चित्तौड़ पर घेरा डालकर युद्ध करने और क्षत्रियों द्वारा प्रतिरोध का रोमांचक वर्णन हो या उम्मेदसिंह द्वारा दबलाना गांव के समीप नन्दराम खत्री की विशाल वाहिनी से टकराने का दृश्य प्रस्तुतीकरण, मल्हार राव होल्कर और जयपुर की सेना के बीच हुए बगरू का युद्ध हो या शत्रुशल्य हाड़ा की दारा के सहायक रूप में लड़ी लड़ाई सर्वत्र सूर्यमल्ल के वर्णन वीर–रस वर्णन करते चलते हैं।

मराठों की सेना का सामना करने को निकलती जयपुर नरेश ईश्वरीसिंह की सेना का एक दृश्य है—

बावन बरण तैं सरस्वती को सरवस्व,
बदिजा को वस्त्र ज्यों दुसासन के करतैं।

छद छप्पई तें ज्यो प्रपचित प्रगर पुंज,
बीज बसुधा ॥ बर बु‍ं‍ वारिधर त ॥
वारिधि तें बीचि, मारतड तें मरीचि,
सरस तरगा स्रोत गंगा गिरिवर तें।
गोतम त न्याय राजराज तें ज्यो राय एमें—
कूरम कटक कढ्यो जयपुर नगर तें।

श्रोर फिर बून्दी नरेश उम्मेदसिंह श्रोर महाराणा के भागिनेय माधवसिंह जो मराठी सेना के साथ उपस्थित थे शत्रु पर वैसे ही टूट पड़े जैसे रण पर अर्जुन ने आक्रमण किया था—

'करिध्वजाम कुम्भयं पिले प्रचारि पत्थ ज्हे।'

एक श्रोर तोप-युद्ध प्रलय का दृश्य उपस्थित करता है तो दूसरी श्रोर घर सवारों के हाथो के करतब दिखाई पड़ते हैं। घोड़े कटते हैं, पैदल छटते हैं श्रोर हाथियों की कर्णिकायें कट कर उछलती हैं।

बितंड वाटिकान दंत हस्ति दन उपरें।
गिरे गु कु भ कोहले पलाडु घट निक्करें॥
कटत सु ड ककरी प्रवृत्ति पाय पीन के।
विलासनास ईपिका न आलु भ्रसि कीन कै॥
कटिल्ल कर्णिकावली भटा हृदावली भये।
अरिष्ट के प्रपष्ट व द बकोम वद व नये॥
बनै भरी पलास कान मद्‌ नागवल्लरी।
कलज पीलु पर्णिका कसेर तोरई करी॥

इस पद्यांश मे हाथियो के दात, हस्त कुम्भस्थल सूडें, तलवार से कटती दिखाई गई हैं श्रोर उन पर बाड़ियो से उखाड़े जा रहे मूले, तोड़े जा रहे बैंगन बिखरे प्याज, ककड़ियों की उत्प्रेक्षायें कवि ने की है जो बहुत ही सुन्दर बन पड़ी है।

वीर रस का उदय श्रोर उत्कर्ष एव उसकी व्याप्ति का क्षेत्र बड़ा ही विस्तृत है। अन्याय होते देखकर नारी या निबल व्यक्ति को अपमानित होने की स्थिति आने पर, वीर मौन नही रह सकता फिर चाहे अन्याय करने वाला उसका कितना ही आत्मीय क्यो न हो उसका उस पर कितना ही एहसान क्यो न हो। बून्दी पर जयपुर का अधिकार महाराजा जयसिंह ने अन्यायपूर्वक उसको कमजोर समझ कर लिया है। उम्मेदसिंह ने बहुत प्रयत्न किया कई लड़ाईया लड़ी पर जयपुर के पजे मे उसे नहीं छुड़ा पाये श्रोर अन्त मे मराठो से सम्बन्ध स्थापित कर उसे मुक्ति दिलाई। मराठो का यह उम्मेदसिंह पर भारी एहसान रहा। पर मल्हरराव के पुत्र खंडेराव ने ईश्वरीसिंह के जहर खाकर मरने पर जब उसकी रानियो को अपने घर मे डालकर ऐश करने के

विचार व्यक्त किये तो उम्मेदसिंह का स्वाभिमान इसे सहन नहीं कर सका, उसने मल्हारराव से कहा—

हम सिर तुम एहसान किय, इन पर डारि चपेट ।
जा समझहु कृतघन हमहिं तो बुंदी यह भेंट ॥
यह अनीति जो नीति करि, मनें हमहु प्रमत ।
अखिल दिखावें अंगुलिन, विखविख करिवत ॥

× ×

अधरम करि सैवो उचित, पाव दमन परवीन ।

युद्धवीर के अतिरिक्त उम्मेदसिंह मे दानवीर, धीरवीर और धर्मवीर आदि कई सात्विक गुणो से युक्त वीर स्वरूपो का समावेश हुआ लगता है । वंश भास्कर मे बीसियो छोटे बड़े युद्ध-प्रसंग हैं । सभी मे कवि ने मौलिक शैली मे युद्धो के उनकी तैयारी के जीवंत चित्र खड़ किये हैं और सर्वत्र वीर रस और कहीं कहीं रौद्र रस मिश्रित वीर रस धारा प्रवाहित की है जो पठनीय है ।

वंश भास्कर मे काव्य का कलापक्ष

काव्य के कला पक्ष के अंतर्गत भाषा, छंद अलकारादि आते हैं । वंश भास्कर मे अनेक भाषाओं का प्रयोग हुआ है, पर युद्धो का वर्णन 'प्राया ब्रजदेशीया] प्राकृति मिश्रित भाषा' मे है और बड़ा ही प्रवाहमय है । गद्य भी बड़ा ही सुन्दर है और अधिकांश सचरण और अलंकृत है ।

ग्रन्थ मे छंद मात्रिक और वर्णिक दोनो हैं । संस्कृत तो वर्णिक छंदो मे है, पर एक दो स्थानो पर हिन्दी मे भी शार्दूलविक्रीडित' छंद रचना मिलती है । छंदो का प्रयोग सर्वत्र शुद्ध उनका वजन तुलाहुआ और रसानुकूल है । कुछ अप्रचलित—कम प्रचलित—छंद भी हैं जो सहज सुपाठ्य नहीं है । पर ऐसे कम ही हैं । अलंकार, रचना मे स्वाभाविक रूप मे आये हैं, वे रचना को बोझिल नहीं करते । रचना वैसे अधिकांश मे अलंकृत है और प्रवाहमयी है । अर्थालंकार शब्दालङ्कार और उभयालंकार—सभी प्रकार के अलंकार वंश भास्कर मे सहज रूप मे प्रयुक्त हुए हैं । कुछ एक अलंकारो के नमूने देखिए—

१ गज्जर के घरियार जिमि बज्जन लग्यो लोह । (पूर्णोपमालंकार)

२ सूरिजन मूरति छ तकन की जानें जाहि
मूरजन जानें खुरली मे बहुतें बढ्यो ॥ (उल्लेख)

३ हाहा रहै वाके यह हाहा देश मे न रास
वह सतसत्र यह अगणित सत्रधाम ॥ (व्यतिरेक)

४ रन जिमि सूरन कौं मुदिर मयूरन को ।
विधु विरव सूचन कौं कंज्ज को कठोर घाम ॥ (मालोपमा)

५ जहँ केतन विच कंप चक्रवाकहिं वियोगवस ।
बंधन सर बाधीन रहन कनव मृगयाहुँवस ॥ (परिसंख्या)

६ दिसिदिस देसि दौठियनमषलाय मनि,
भूपएग्दिसायं मजु रिमवविगारा ज्यों । (परिसंख्या)

× × × ×

निसजनिसर्ग नृपराम की समृद्धि साची
वितावर वद्धन बुनायें बारराना ज्यों ॥ (व्याजस्तुति)

इसी प्रकार उत्प्रेक्षा, रूपक प्रतिनायक्ति आदि अलकारों का प्रचुर प्रयोग ग्रन्थ में द्रष्टव्य है। सागरूपकों का युद्ध-वर्णनों में सुन्दर प्रयोग है। प्रतीक और प्रतीकों के बल पर उभरने वाली रूपकातिशयोक्तियाँ भी अच्छी बनपड़ी हैं। एक उदाहरण प्रस्तुत है—

सिंहिनि प्रविनय सिंह सो जित गावहु भवरन।
जिन हरियन कुंभन जनज ते आवत गुमडन ॥
जिनहित लपन नपि व मद्दा धीरज मन।
सहज ते आयत सुर्ने वारन भद्दन वन ॥

यहाँ सिंहनि 'सिंह क्रमश महारानी और बूँदी नरेश उम्मेदसिंह के प्रतीक हैं और 'वारन भद्दन वन उमड़ती जयपुरी क्षत्रिय सेना के।

वश भास्कर, अनुप्रास, यमक श्लेष जस शब्दालकारों का तो कोष ही है।

साराश यह है कि वश भास्कर राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत सूर्यमल्ल महाकवि की भाव पक्ष और कलापक्ष—दोनों दृष्टियों से उत्कृष्ट रचना है। इसमें कवि की अद्भुत प्रतिभा, असीम ज्ञान, निष्पक्ष इतिहास और अनूठी शैली के आनन्ददायी दर्शन होते हैं। कवि राष्ट्रीय हित में वीरता के स्थान का अभिलाषी है। इस दृष्टि से वीर सतसई से वश भास्कर ज्यादा दूर नहीं है।



राजस्थान के वीररसावतार कवि सूर्यमल्ल मिश्रण

डॉ० रमाकान्त शर्मा

वीररसाप्लावित राजस्थानी साहित्य के सम्बन्ध में १८ फरवरी १९३७ को राजस्थान रिसर्च सोसायटी, कलकत्ता के प्रांगण में विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने सभापति-पद से भाषण देते हुए कहा था

'भक्तिरस का काव्य तो भारतवर्ष के प्रत्येक साहित्य में किसी न किसी कोटि का पाया ही जाता है। राधा-कृष्ण को लेकर हरेक प्रान्त ने साधारण या उच्चकोटि का साहित्य निर्मित किया है लेकिन राजस्थान ने अपने रक्त से जो साहित्य-निर्माण किया है उसकी जोड़ का साहित्य और कहीं नहीं पाया जाता और उसका कारण है राजस्थानी कवियों ने कठिन सत्य के बीच में रह कर युद्ध के नगाड़ों के बीच अपनी कविताएं बनाई थीं। प्रकृति का ताण्डव रूप उनके सामने था। क्या आज कोई कवि अपनी भावुकता के बल पर फिर वह काव्य निर्माण कर सकता है? राजस्थानी भाषा के साहित्य में जो एक प्रकार का भाव है— जो उद्वेग है— वह राजस्थान का खास अपना है, वह केवल राजस्थान के लिये ही नहीं सारे भारतवर्ष के लिए गौरव की वस्तु है।'' कवीन्द्र रवीन्द्र की उक्त वाणी की सार्थकता को शतप्रतिशत प्रमाणित करने वाले कवियों में वीर प्रसविनी वसुन्धरा राजस्थान के कवि सूर्यमल्ल मिश्रण का नाम निश्चित रूप से शीर्षस्थ है। 'रणखेती रजपूत री' की शान को सिखलाने वाले तथा 'इला न देणी आपणी' के स्वाभिमानी गुरु मन्त्र को फूकने वाले कवि सूर्यमल्ल का जन्म चारणों की एक मिश्रण शाखा के एक प्रतिष्ठित कुल में वि० सं० १८७२ में बूंदी,

राजस्थान म हुग्रा । इनके दादा बदन कवि ग्रौर पिता चण्डीदान की बूंदी दरबार के प्रसिद्ध कवियों मे गणना थी । कवि स्वयं लिखता है—

बदन सुकवि सुत कवि मुकुट, ग्रमर गिरा मतिमान ।
पिंगल डिंगल पटु मय धुरंधर चंडीदान ॥

इन्हीं चण्डीदान (पिता) ग्रौर भवान बाई माता की सन्तान थे कविराव सूर्यमल्ल मिश्रण । ग्राप साहित्य सरोज के रवि, षड्भाषा के पूर्ण पण्डित, तत्त्वबोध के मूर्तिमान स्वरूप, इतिहास के प्रसिद्ध ज्ञाता, चौदह विद्या–निधान, चौंसठ कला निपुण ग्रौर मीमांसा, काव्यशास्त्र, योगशास्त्र, न्याय, व्याकरण, पातंजल्य, शालिहोत्र, शकुन शास्त्र ग्रादि के तलस्पर्शी विद्वान थे । कवि के वंश–वृक्ष का ब्योरा इस प्रकार है—

ईश्वर
|
माधवदास
|
भूपाल
|
रामदास
|
ग्रानन्द
|
नवलराय
|
चतुर्भुज
|
बदन
|
चण्डीदान
|
रविमल्ल (सूर्यमल्ल)

सूर्यमल्ल बचपन से ही ग्रसाधारण प्रतिभा सम्पन्न थे । कहा जाता है कि पांच वर्ष की ग्रायु मे ही कवि को ग्रमरकोष के तीनो काण्ड कण्ठस्थ थे ग्रौर सात वर्ष की ग्रायु मे ही इन्होंने काव्य रचना प्रारम्भ कर दी थी । २० वर्ष की ग्रायु मे तो ग्रापने 'राम रजाट' नामक पद्य–ग्रंथ बना लिया था जिसमें बूंदी के रावराजा रामसिंहजी के शिकार ग्रौर दौरे का वर्णन है । शिशु सूर्यमल्ल पर ग्रपने माता–पिता का ग्रसीम ग्रौर ग्रटूट प्रभाव पड़ा था । वंश भास्कर मे कवि लिखता है [ग्रपने व नमस्कार करता हूं जिनके शिक्षानुष्ठान से मैं जो

ग्रथवा वदामि भवानाचण्डीदानौ
यच्छिक्षानुष्ठाननान्मया मनुष्यायुमतो

कवि ने अपने जीवन में ६ विवाह किये जिनका नामोल्लेख वंश भास्कर में मिलता है। कवि की पत्नियों के नाम थे— दौला सुरजां, विजयिका जसारू, पुष्पा और गोविन्दा। इतने विवाहोपरांत भी कवि को सन्तान सुख प्राप्त नहीं हुआ। कहते हैं सूर्यमल्ल के एक पुत्री हुई थी जिसे पिता के असीम प्यार ने ही मृत्यु की नींद सुला दिया। मद्यप कवि उस अत्यन्त अल्पावस्था में खिलाने के लिये जोर जोर से झुला रहा था उसी में बच्ची का प्राणान्त हो गया। राजस्थानी साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान डा मोतीलाल मनारिया कवि सूर्यमल्ल मिश्रण के व्यक्तिगत जीवन पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं कि— सूर्यमल्ल बड़े विलासी, मद्यप तुनुक मिजाज एवं स्वतन्त्र प्रकृति के पुरुष थे और अपने व्यवहार में इतने रूखे थे कि लोग उनके पास जाना भी पसन्द नहीं करते थे। ये दिनरात शराब के नशे में चूर रहते थे और इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि बिना मदिरा-पान के भी कोई मनुष्य ठीक तरह से अपना काम कर सकता है। प्रवाद है कि जिस समय इनकी एक स्त्री का देहान्त हुआ उस समय भी ये शराब पीकर उसकी दाह-क्रिया के लिये घर से बाहर निकले थे और कविता बनाने लगे थे। सूर्यमल्ल का जीवन ही शराब पर निर्भर था। पर फिर भी नशे में ये इतने उन्मत्त नहीं हो जाते थे कि शरीर की सुध बुध ही न रहे। इतना ही नहीं, नशे की हालत में इनकी कल्पना शक्ति और भी सजग हो उठती थी और दो आदमी जो इनके दाहिनी और बाईं तरफ बैठे रहते, बड़ी कठिनता से उनकी उस समय की कविताओं को लिख पाते थे।'

राजस्थानी कवियों में सूर्य के समान भासित होने वाले कवि सूर्यमल्ल मिश्रण का स्वर्गवास बूंदी में ही सवत् १९२५ में (मुन्शी देवीप्रसाद के मतानुसार) हुआ। डा सुनीति कुमार चाटुर्ज्या के अनुसार धारावाहिक रूप से जो साहित्य-परम्परा अपभ्रंश-काल से हजार वर्ष तक चली आई उसे ही सूर्यमल्ल ईसा की बीसवीं शती के द्वितीयार्ध तक पहुंचा कर विदा हो गये। अपने काव्य और कविता को Lay off the Last Ministrel बना गये और वे स्वयं बने The Last of the Giants अलवर के सुप्रसिद्ध कवि रामनाथजी कविया ने कवि के स्वर्गवास पर निम्नलिखित मरसिये कहे—

मिलता कासी माह कवि पिंडता सोभा करी।
चरचा देवा चाहि, सुरग बुलायो सूजडो ॥
देस कविंद दूजाह, रहिया सो आछा रहो।
सामद गुण सूजाह तो मरता विनस्यो तम्नि ॥
थई मृत्यु थारीह, दुख मेरे करतार सू।
खतम लगी खारीह सुणता काना सूजडा ॥

प्रमुख रचनाएं एवं उनका वैशिष्ट्य

मा शक्ति के आराधक और देवी सरस्वती के पुजारी कवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने अनेक ग्रन्थ-रत्न राजस्थानी साहित्य को प्रदान किये। इनके द्वारा रचित ग्रंथों की

सच्चा पाठ मानी जाती है, जिनके नाम हैं— (१) वंश भास्कर (२) बलवद्विलास (३) छन्दोमयूख (४) वीर सतसई (५) रामरंजाट (६) सतीरासा (७) फुटकर कवित्त सवैये आदि (८) धातुरूपावलि।

वंशभास्कर तथा वीर सतसई इनकी सब प्रसिद्ध रचनाएं मानी जाती हैं। डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने वंशभास्कर की तुलना संस्कृत के 'महाभारत' से की है तथा उस विशाल ऐतिहासिक महाकाव्य की संज्ञा से अभिहित किया है। अगरचन्द नाहटा लिखते है कि उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त के ऐतिहासिक काव्यों में महाकवि सूर्यमल्ल का वंशभास्कर' अत्यन्त प्रसिद्ध और महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इनकी वीर सतसई में ७०० दोहों के स्थान पर केवल २८८ दोहे ही मिलते हैं किन्तु हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की सतसई परम्परा में उस अपूर्ण सतसई का भी अपना अग्रगण्य गौरवमय स्थान है। कुछ आलोचकों ने वीर सतसई' को 'अपूर्ण वीर सतसई' या 'वीर दोहावली' कहना अधिक युक्तियुक्त माना है।

कविराजा सूर्यमल्ल मिश्रण की वीर सतसई के बारे में लिखा गया है कि वीर सतसई' इस युग का सर्वश्रेष्ठ वीर रसात्मक ग्रन्थ है। यह समस्त ग्रन्थ सरल एवं प्रसादगुण युक्त प्रवाहमय राजस्थानी में रचा गया है। लोकप्रियता की दृष्टि से सूर्यमल्ल की वीर सतसई को सर्वाधिक महत्व प्राप्त है। सबीए भावों से परे सार्वजनीन भावों का चित्रण वीर सतसई की एक अद्वितीय विशेषता है।

'स्वल्पा च मात्रा बहुला गुणाश्च' की उक्ति इनके काव्य में पूर्णरूप से चरितार्थ होती है। स्वल्पभाषिता तथा सरसता के गुणों के कारण कवि की कृतियां सदैव स्मरणीय रहेंगी। कवित्व शक्ति कवि की रग रग में बसी हुई थी। इस सम्बन्ध में कवि के बाल्यकाल की एक रोचक घटना पर प्रकाश डालना अप्रासंगिक नहीं होगा। कहते हैं कि एक बार सूर्यमल्लजी जब सात ही वर्ष के थे उनके पिता दरबार में जाते समय उनसे कह गये कि हम पीछे आवें तब तक एक गीत (डिंगल का एक छन्द विशेष) बना रखना। सूर्यमल्लजी खेलकूद में इस बात को भूल गये। पिताजी ने वापिस आने पर पूछा तो कुछ स्तब्ध होकर कह दिया कि हां, बना लिया। उस गीत को सुनाने के लिये कहने पर वह प्रसिद्ध गीत उस समय बोलते गये जिनकी अंतिम पंक्तियां निम्न लिखित हैं—

साहे जेण वेला धूज सातू ही काफरी सूबा।
वाहे जेण वेला धूज सातू ही विलात॥

ऐसी बालकवि ने आगे चलकर 'वंश भास्कर' के रूप में अपनी प्रबन्ध मयूखों का परिचय दिया और उनकी गणना बूंदी के प्रसिद्ध ५ रत्नों में हुई—

आनानन्दो जीवणो नानभाडी दण्डी चण्डीदानज सूर्यमल्ल।
गा नाथ ते तत्समीप जमीत (हमीत) भूभृत रत्न पचरत्नानिबुन्द्याम्॥

कवि की इतिहास चेतना

साहित्य-ममज्ञों एवं इतिहासविदों ने कवि सूर्यमल्ल मिश्रण को इतिहास-चेता

साहित्यकार के रूप मे भी सम्मानित किया है। बूदी के राजवश के ऐतिहासिक दस्तावजो के रूप मे वश भास्कर' एक बहुत बडा गद्य-पद्य-बद्ध मौतबर सत्यवक्ता कवि चारण से सम्बोधित किया है।

इतिहास की दृष्टि मे 'वश भास्कर' कितना सही है, इस विषय म विद्वानो मे मतभेद है। डा गोरीशकर हीराचन्द ओझा ने लिखा है कि सूयमल्ल ने वश भास्कर नामक विस्तृत पद्यात्मक ग्रथ लिखा जिसमे दिए हुए चौहानो तथा हाडो के इतिहास का गद्यात्मक साराश बूदी के पण्डित गगासहाय ने वश प्रकाश' नाम से प्रसिद्ध किया है, वही बूदी का इतिहास माना जाता है। सूयमल्ल एक अच्छा कवि था,परन्तु इतिहासवक्ता न होने से उसने उक्त पुस्तक मे प्राचीन इतिहास भाटो की रूयातो से ही लिया है। उसमे सैकडो कृत्रिम पीढियां भरदी है और वि स १५८४ (ई सन् १५२७) तक के सब सवत् तथा ऐतिहासिक घटनाए बहुधा कृत्रिम लिखी हैं। उस समय तक का इतिहास लिखने मे विशेष शोध की हो ऐसा पाया नही जाता। कवि का लक्ष्य कविता की ओर ही रहा प्राचीन इतिहास की विशुद्धि की ओर नही।

षटभाषा ममज्ञ कवि सूयमल्ल मिश्रण निश्चित रूप से विशुद्ध इतिहासकार नही थे। एक साहित्यकार से शुद्ध इतिहास की कल्पना भी नही की जानी चाहिए। किन्तु जो कुछ भी उन्होंने कल्पना और इतिहास के सम्मिश्रण से दिया है उसने इतिहासकारो के लिए अनेक इतिहास सूत्रो के वातायन खोल दिये हैं। बूदी नरेश महाराव राजा रामसिंह (स १८३८ १९४५) की आज्ञा से कवि ने सवत् १८९७ मे इस ग्रथ को लिखा। इसमे प्रधानत बूदी राज्य का इतिहास वर्णित है पर प्रसगवश राजस्थान की दूसरी रियासतो का इतिहास भी थोडा बहुत आ गया है। कवि कृष्णजी बारहट ने इसकी टीका की है और टीका सहित ४३६८ पृष्ठो म समस्त ग्रन्थ छपकर तैयार हुआ है।

उपरोक्त टीकाकार के अनुसार ऐसा सत्य वक्ता अद्यावधि नही हुआ है। किन्तु मुशी देवीप्रसाद कवि मिश्रण की सत्यवादिता पर टिप्पणी करते हुए लिखते है कि इन्होने महाराज राजा रामसिंहजी की आज्ञा से वश भास्कर ग्रन्थ बनाना प्रारम्भ कर दिया था जो इनके जीवन पर्यन्त समाप्त नही हुआ जिसका कारण बारहठ कृष्णसिंहजी, जिन्होंने वश भास्कर की टिप्पणी की है ऐसा कहते थे कि जब महाराव राजा साहिब ने सूयमल्लजी से अपने वश का इतिहास बनाने को कहा था तो उन्होने निवेदन किया था कि मैं आपकी आज्ञा से बनाऊगा तो सही परन्तु जो सच बात होगी वही लिखूगा। आप बुरा न मानें। जब राव राजाजी ने यह बात मानली तो यह ग्रथ रचने लगे और अगले राजाओ के गुण अवगुण जसे कुछ निश्चय होते गये लिखते गये। जब रावराजाजी की बारी आई और उनके गुणदोष भी लिखे गये तो उन्होने इनसे कहा कि आपने मेरे बाप-दादा-परदादा वगैरह के जो दोष लिखे हैं उनको पढकर तो मैंने जैसे तसे सबर किया परन्तु अपने दोषो के लिये नही कर सकता। इन्होने कहा कि जब सब के दोष लिखे गये तो आपके भी लिखे जावेंगे। महाराव राजाजी ने कहा कि ऐसे लिखने से तो नहीं लिखना अच्छा है। यह सुनकर उसी दिन से इन्होने वश भास्कर का बनाना छोड दिया।

इतने विवाद के उपरान्त यह बात तो स्पष्ट हो जाती है कि कवि सूर्यमल्ल मिश्रण कवि होने के साथ साथ इतिहासवेत्ता लेखक भी थे।

शौर्य पराक्रम एवं वीरता के कवि

सूर्यमल्ल मिश्रण की वीर सतसई शौर्य पराक्रम एवं वीरता का जीवन्त प्रतीक है। डा. रघुवीरसिंह ने भी वीर-रस प्रधान साहित्य के क्षेत्र में सूर्यमल्ल मिश्रण का एक छत्र शासन स्वीकार किया है। वीरत्व का परिचय पराक्रम, साहस, धैर्य, स्फूर्ति उदात्त भावना, सहिष्णुता आदि से ही मिलता है। अतः वीर के चरित्र-चित्रण में कवि ने उसकी बाह्य और आंतरिक मनोवृत्तियों तथा क्रिया-कलाप का सुन्दर वर्णन कर अपनी सूक्ष्म निरीक्षण की अद्भुत शक्ति का परिचय दिया है। 'सतसई' के दोहों में बाह्य जगत की क्रिया एवं वृत्ति के साथ उसकी आंतरिक वृत्ति का जो सुन्दर सम्मिश्रण है वह अन्यत्र सुलभ नहीं है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

इला न देणी आपणी हालरिया हुलराय।
पूत सिखावै पालणैं मरण बड़ाई माय॥
आज घरे सासू कहै हरख अचाणक काय।
बहू बलेवा हुलसैं पूत मरेवा जाय॥
जिम जिम कायर थर हरैं तिम तिम फलै नूर।
जिम जिम बगतर ऊकसैं, तिम तिम फूलै सूर॥
मारूँ भालै फूटतो पूग उपाडै दंत।
हूं बलिहारि जठ री हाथी हाथ करंत॥

ऐसे ही वीररस के अनूठे साहित्य ने वीरों और सतियों को अपने कर्तव्य पथ पर अग्रसर किया। वीरों ने हसते हसते प्राण दिये और वीरांगनाओं ने खुशी खुशी जौहर व्रत धारण किया। पतियों के साथ सती होना गौरव महित समझा जाने लगा।

वस्तुतः वीर सतसई बदलते हुए युग की परिचायिका है। भारतवर्ष में उस समय अंग्रेजों के विरुद्ध १८५७ ई. की स्वतन्त्रता की पहली लड़ाई लड़ी जा रही थी। कवि भी उससे अप्रभावित नहीं रह सका। उसने भी वीरों को एकत्रित कर अपनी धरती को अंग्रेजों से मुक्त कराने का आह्वान किया। जैसा कि कवि कृत नीचे उद्धृत दोहे से प्रकट है—

बीकम बरसा बीतियौं, गण चौ चंद गुणीस।
बिसहर तिथ गुरु जेठ बदि समय पलटी सीस॥

इस दोहे में 'समय पलटी सीस' अर्थात् समय ने मुख फेरा है विशेषता सूचक है। इस पद द्वारा कवि ने सन् १८५७ ई. की विप्लव सम्बन्धी अव्यवस्थित राजनीतिक परिस्थिति की ओर इंगित किया है। कवि की धारणा थी कि अन्य देशवासियों के साथ उन्हें भी अपने शरीर को मातृभूमि की स्वतन्त्रता के हेतु सदुपयोग में लगाने का अवसर प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त कवि का एक और दोहा है जिसमें उसने अपने

ग्रन्थ-प्रणयन का प्रयोजन भी स्पष्ट कर दिया है। उनकी दोहामयी सतसई वीरों के लिये स्वाद्य तथा कायरों के सुनने के लिये शल्य है—

सतसइ दोहामयी, मीमण सूरजमल।
जपं भडरवाणी जठै, सुणं कायरा साल॥

डा० सरनामसिंह ने कवि की स्वाधीनता प्राप्ति की इच्छा को रेखांकित करते हुए ठीक ही लिखा है कि मिश्रण सूर्यमल्ल के 'वंश भास्कर' में टिके हुए राजस्थानी के सरस गद्यांश तथा उनके साहित्यिक पत्र जो उन्होंने समय समय पर राजस्थान के राजाओं को स्वाधीनता के सम्बन्ध में सजग और उत्साहित करने के अभिप्राय से लिखे थे, राजस्थानी गद्य की परम्परा को आगे लाने में ही अपना महत्व नहीं रखते, प्रत्युत भारतीय स्वतन्त्रता का इतिहास बनाने में भी बड़े महत्त्व के सिद्ध होंगे।'

जहां तक सूर्यमल्ल मिश्रण की नारी भावना का प्रश्न है वहां यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि कवि के लिये नारी अबला रूप में नहीं वरन् परम् शक्तिशाली मां चण्डी के रूप में है। वह भी वीर समाज के अनुरूप ही है। क्या हुआ यदि परिवार के लोग कहीं प्रीति भोज में चले गये और अचानक आक्रमण हो गया? कोई परेशानी नहीं, कोई विकलता नहीं, सिंहनी की सन्तान ने तलवार उठा कर अकेले ही डट कर शत्रु सेना से लोहा लिया 'सीहण जाई सीहणी, लीधी तेग उठाय।' "विण 'पूतारा पाहुणा' आ गये तो क्या हुआ, उनके आतिथ्य के लिये तत्काल ही योजना बन गई कि ननद तो ढाल तलवार लेकर ड्योढी पर खड़ी रहे और भाभी बन्दूक लेकर मेड़ी पर—

भाभी डोढी हूं खड़ी, लीधा खेटक रूक।
थं मनुहारो पाहुणा, मेडी झाल बन्दूक॥

'वीर सतसई' की नारी तो पति को यहाँ तक चेतावनी दे देती है कि अगर वह युद्ध से भागकर आ गया तो उसे सिरहाने के लिये तकिया भले ही मिल जाये, प्रियतमा की भुजाएं तो फिर कभी मिलने की नहीं

'मुडिया मिलसी गीदवो, वले न धण री बांह'।

हिन्दी साहित्य में वीर रस के सर्वाधिक ख्याति प्राप्त कवि भूषण माने जाते हैं। किन्तु सूर्यमल्ल को उनसे भी श्रेष्ठ बतलाते हुए डा० मोतीलाल मेनारिया लिखते हैं कि 'यह कहना ही पड़ेगा कि वीररस का जैसा मात्रानुरंजित और पुरअसर वर्णन सूर्यमल्ल ने किया है वैसा हिन्दी के किसी दूसरे कवि की रचना में देखने को अभी तक नहीं मिला। उदाहरण स्वरूप भूषण ही को लीजिये। ये वीर रस के सर्वोच्च कवि माने जाते हैं। भूषण राष्ट्रीय कवि हैं इसमें कोई संदेह नहीं। वे हिन्दू धर्म के उपासक हैं, इसमें कोई मतभेद नहीं। उनकी कविता में औरंगजेब के अत्याचारों से प्रताड़ित हिंदी जाति के हाहाकार की प्रतिध्वनि है, इसमें भी कोई अत्युक्ति नहीं। परन्तु इतना होते हुए भी कहां सूर्यमल्ल और कहां भूषण। दोनों में आकाश पाताल का अन्तर है। वीर-वीरांगनाओं के हृदयस्थ भावों का विश्लेषण और काव्यमय निरूपण भूषण की

कविता मे कहा, जिसके दर्शन सूर्यमल्ल की रचना मे पग पग पर होते हैं। सच तो यह है कि सूर्यमल्ल की स्वभाव सिद्ध स्वर-लहरी के सामने भूषण के वागाडम्बर-पूर्ण कवित्त सवैये प्राण विहीन पंजर की तरह शुष्क और निर्जीव प्रतीत होने हैं।'

वीर सतसई के योद्धा 'मरण' को 'पर्व मानकर' चलते हैं। यदि ऐसा कहा जाय कि कायर पुरुष भी यदि एक बार 'वीर सतसई' के चन्द दोहे सुनले तो उसमे पौरुष दहाड़ने लगेगा उसकी भुजाए फड़कने लगेगी, कोई अतिशयोक्ति नही होगी।

राजस्थान मे वीररस पर लेखनी चलाने वाले अनेक कवि हुए हैं जिनमे कविराजा बांकीदास और ईसरदास के नाम विशेष रूप मे उल्लेखनीय हैं परन्तु किसी भी कवि को इतनी सफलता नही मिली जितनी सूर्यमल्ल मिश्रण को। आज भी राजस्थान मे जन जन के कण्ठ पर 'वीर सतसई' के दोहे थिरकते हैं।

[ ]

पराक्रम की धरती से फूटा हुआ कवि
महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण

रामरत्न शर्मा

जीवन परिचय सक्षिप्त झलक

राजस्थान की भूमि पर जिस तरह वीरत्व का जन्म हुआ है उसी तरह उसने महान् कवित्व को भी जन्म दिया। इस भूमि ने साहित्य जगत् को सूर्यमल्ल मिश्रण जैसे धनी व्यक्तित्व के महाकवि दिए। चारण परम्परा के सबसे प्रखर और निर्भीक व्यक्तित्व वाले सूर्यमल्ल मिश्रण जी का जन्म सन् १८१६ ईसवी में राजकवि चण्डीदान के यहा हुआ था। मिश्रणजी बाल्यावस्था में ही मेधावी प्रकृति के थे। उनकी प्रतिभा का परिचय इसी बात से मिल जाता है कि जब वे मात्र दस वर्ष के थे तो उन्होंने 'रामरजाट' जैसे काव्य की रचना कर डाली। बहुमुखी प्रतिभा के धनी इस महाकवि ने छोटी सी अवस्था में ही प्राकृत संस्कृत तथा डिंगल भाषा का अधिकृत ज्ञान अर्जित कर लिया था।

कहा जाता है कि वे अपने साथ वीणा रखते थे जो कि उनकी कोमलता और करुणा की प्रतीक थी। उनका वैवाहिक जीवन सभवतया कडवाहट भरा ही रहा। क्योंकि उन्होंने छह विवाह किए और केवल एक सन्तान पुत्री के रूप मे प्राप्त हुई थी। उसकी भी उस समय अकाल मृत्यु हो गई जब वे उसे गोदी मे उछाल उछाल कर खिला रहे थे। इस हृदय विदारक घटना के बाद कवि इतना टूट गया कि उनके जीवन मे नीरसता और निराशा का अन्धकार छा गया। शायद दुख व्यक्ति को अमरत्व भी दे जाता है। भारतीय वाङ्मय को अपनी अमर कृतियो से समृद्ध करने वाला शौर्य का मौदा-

गर और राजस्थान की भूमि पर जन्मा महाकवि ५३ वर्ष की अवस्था में ही सन् १८६६ ईसवी मे सदा सदा के लिए विदा हो गया।

निर्भीक और स्वाभिमानी व्यक्तित्व

सूर्यमल्ल मिश्रण का उद्भव ऐसे समय मे हुआ था जब चारण परम्परा अपने नतिक बोध से डिग रही थी। चारण कवि अपने आश्रयदाता की चाटुकारिता और मिथ्या बखान मे संलिप्त थे। अभिव्यक्ति पर इस निरकुश दबदबे ने कवियो की वाणी को प्रायोजित संस्कार का रूप दे दिया था। यानि, जब लम्बड़दारों के बड़े रहणा तो हा जी, हा जी कहणा' वाली बात हो रही थी। यथार्थ रसातल को धसता जा रहा था। ऐसे समय मे धरती की गध से फूटकर उपजा सूर्यमल्ल मिश्रण का व्यक्तित्व अपना अलग पहचान बनाकर साहित्य के महासागर मे निर्भीक और अजेय योद्धा की भांति गोता लगाया। उनकी निर्भीकता और विशाल व्यक्तित्व का परिचय हमे तब मिलता है जब वे अपने आश्रयदाता को यह भी डाटते हैं कि

'नाहक चवर ढाले मुढ होय राजा।
हमरे मत प्रबुद्ध होय ताहि पे चवर है॥'

सूर्यमल्ल मिश्रणजी के निर्भीक और अलमस्त व्यक्तित्व का उस समय तो और भी पता चलता है जब वे प्रात सूर्य उपासना मे यह प्रार्थना करते हैं कि एक दिन ऐसा सूर्य भी उगे जब उसके स्वामी का सिर घोड़ो की टापों मे लुढकता मिले। इस बात को सुनकर सभी क्रुद्ध हो गए थे। परन्तु जब इस मेधावी व्यक्तित्व ने यह खुलासा किया कि वह तो अपने मालिक के लिए अमरत्व की कामना कर रहा है तो सभी उनकी बात से सहमत हो गए। यानि जो बात राजा का सगा सम्बन्धी और निकटतम मत्री भी उसे नहीं कह सकता वह शब्दो और भावनाओ का कलाकार कहने मे समर्थ होता है। जिस तरह बिहारी के एक दोहे से ही अपने कर्त्तव्य से भटक गया राजा सन्मार्ग पर आ जाता है।

मध्ययुगीन समाज का यथार्थ

सूर्यमल्ल मिश्रण जी ऐसे समय के कवि रहे हैं जिस समय उनके द्वारा वर्णित मूल्यो और सस्कारो की प्रासगिकता थी। आज भले ही सती प्रथा मानवीय मूल्यों के प्रतिमान के सन्दर्भ में जघन्य अपराध प्रतीत होती हो परन्तु यदि हम उस कालखण्ड मे विवेक से झांककर देखें तो उसकी प्रासगिकता जीवन्त हो उठती है। उस समय सती होना स्वभावजन्य सस्कार था न कि किसी पर बलात् सती होने के लिए कहा जाता था। तभी तो वीर रमणी नायण से आग्रह करती है कि

'नायण ! आज न मांड पग,
काल सुणीजे जग।
धारा लागे जे धणी,
तण दीजे घण रग॥

वीरोचित सस्कार को लिंग भेद से ऊपर उठाकर किसी की भी सम्पत्ति के रूप में प्रति पादित करते हुए कवि कहता है कि

'भूरा घर सूरी महल
कायर, कायर गेह'

अर्थात् शूरवीर के घर शूरवीर महिला और कायर के घर कायर महिला होती है।

राजस्थान के वीरो के कर्मक्षेत्र का कवि जीवन्त चित्र प्रस्तुत करते हुए कहता है कि

'रणवमी रजपूत री,
वीर न भूले बाल।
बारह बरसा बाप रो,
लहे वैर सकाल ॥"

नारी चित्रण उदात्त भाव

सूर्यमल्लजी के काव्य का सौष्ठव और उसकी कसौटी यह भी है कि उन्होंने सही मायनों मे नारी के पवित्र, तेजस्वी और मर्यादापूर्ण रूप का उदात्त भाव स्थापित किया। जिस नारी को रीतिकाल की आपाई अराजकता ने मात्र उपभोग और वासना की वस्तु करार दिया था, एसे समय मे नारी की गरिमा की पुनबहाली का माद्दा समवतया मिश्रणजी ही रखते थे। तभी तो उन्होंने उसे वीर मा वीर पत्नी, वीर देवरानी, वीर ननद और वीर सेवक की पत्नी आदि रूपो मे आंका। यानि उन्होंने ऐसी साहसिक नारी का रूप उभारा जो पति को, पुत्र को, अपने कर्तव्य के प्रति चेताती रहती है। वह, कायर और अपने कर्त्तव्य से डिगने वाले पुरुष को फटकारने वाली है।

उस नारी को जिसे शृंगारिकता की आड म अस्तित्वविहीन कर दिया गया था और उसकी अस्मिता समाप्त प्राय हो गई थी उसे पुन बहाल किया। वैचारिकता के इस महागत मे डूबी हुई नारी के विलक्षण और विराट स्वरूप का अधिष्ठापन किया। वीर माता का रूप देखिये

"माई एहडा पूत जण, जेहडा राणा प्रताप।
अकबर सूतो ओझके, जाण सिराणे साप ॥"

इसी तरह वीर पत्नी के स्वरूप का प्रतिपादन करते हुए कहते हैं

"पूजाणो गज-मोत्रिया, मींडाणो कर मूझ।
बीजाणो घण चामरा, है चूडो बल तूझ।"

और,

"गोठ गया सब गेहरा, बणी अचानक आय।
सिंघण-जायी सिंघणी, लीघी तेग उठाय॥"

क्रान्तिकारी वैचारिकता

कवि की रचनाधर्मिता का क्षेत्र केवल राजपूतों की महिमा और अपने आश्रय दाता रावराजा भीमसिंह के पराक्रम का बखान करने तक ही सीमित नहीं रहा अपितु उन्होंने समय की नब्ज को पकड़ा और अपनी कलम को समय की माग के अनुसार ढाला। दरबारी कवि होते हुए भी जो व्यक्ति अपनी वाणी को क्रांतिकारी स्वर दे [illegible] यह उसकी महानता का परिचायक है। तभी तो वो कहते हैं

'इला न देणी आपणी, हालरिया हुलराय।
पूत सिखावे पालणै, मरण बडाई माय॥'

अर्थात्, मा कहती है झूले मे झुलाते हुए पुत्र से कि अपनी भूमि शत्रुओं को देने की बजाए उसमे मर जाना अधिक अच्छा है।

गुलामी की पीड़ा उनके मन मे बराबर उठ रही थी। अंग्रेजी शासन के विरुद्ध उनके तेवर बेहद क्रांतिकारी थे। इसका सबूत हमे तब मिलता है जब वे आज़ादी के लिए जूझ रहे साथियों को पत्रों मे लिखते हैं कि

'इण वेला राजपूत वै, राजस गुणरजाट।
सुमिरन लज्जा वीर सब, वीरा री कुल बाट॥

कवि के हृदय से नि सृत इस क्रान्तिकारी धधक को सभी ने आत्मसात् किया। उनकी वाणी मे गजब का ओज और वीरत्व का वह स्वाभाविक पुट था जिसे सुनकर आम आदमी तक की भुजाए फड़कने लग जाती थी। उन्हे सुनकर लोग इस मिट्टी की आन बान और शान के लिए मर मिटने को सदैव उद्यत रहते थे।

साम्प्रदायिक सौमनस्यता और राष्ट्रीय भावना का प्रतिपादन

इस महाकवि ने व्यक्तिपूजा से ऊपर उठकर राष्ट्रीयता की वीणा के तारों को झंकृत किया। साम्प्रदायिक सौहाद्रता का सन्देश दिया। साहित्य के मूल्यों की कसौटी पर अपने रचनाकर्म की अभिव्यक्ति करते हुए कवि ने हिन्दू-मुसलमान के भेद को भुला कर एकजुट होने का सन्देश दिया

मिल मुसलमान राजपूत औ मरठा

इस दूरदर्शी कवि ने १८५७ की क्रान्ति को न चूकने वाला अवसर बताते हुए कहा

काल हिरण चूक्या फटक पाछो काल न पावसी।
आजाद हिन्द करजा अब औसर इस्यो न आवसी॥

जब राजा लोग अंग्रेजो की चाटुकारिता मे लगे हुए थे ऐसे समय मे इस तरह का निर्भीक और क्रान्तिकारी आह्वान कवि की उदात्त राष्ट्रीय भावना का द्योतक है।

लोक जीवन का चित्रण सामाजिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य

सदियों की पराधीनता से भारतीय लोक जीवन मे आए विघटन और नैतिक पतन का पुट उनके कृतित्व मे व्यंजनापूर्ण शैली में परिभाषित हुआ है। वीरत्व के साथ

साथ लोक-सस्कारो के अरमानो की नैया को खेते हुए कवि न राजस्थान के लोक जीवन का सजीव चित्र प्रस्तुत किया है । मध्ययुगीन जीवन मूल्यो को उकेरते हुए इस महाकवि न पुरुष और नारी क पराक्रम की गाथाओ को कहने के साथ साथ सामाजिक जीवन की विभि न विधाओ का चित्रण किया है ।

राजस्थानी लोक सस्कृति का अक्षुण्णता प्रदान कर इस सस्कृति का सौष्ठव वधन किया । जहा एक ओर उनकी वाणी मे लोक जीवन की अगाध जीवन्तता मिलती है तो दूसरी ओर लोक शली के प्रति अगाध निष्ठा । जीवन की उपादेयता का दशन विचारणीय है

'सूता घर घर आलसी, वधा गुमावै वस ।
खग धारा घोडा खूरा, दाव अजका दस ।।'

युगीन माग को देखत हुए उ होने कायर और कायरता की दिल खोलकर भत्सना की । वीरागनाओ क सस्कार मे यह भरा कि

'नह पडौस कायर नरा, हली वास सुहाय ।
बलिहारी जिण दसडै, माथा मोल विकाय ।।'

उ होंने राजस्थानी लोक सस्कृति के उज्ज्वल रूप को उद्घाटित किया है । भारतीय जीवन मे सोलह सस्कारो का बहुत महत्त्व है । उनके काव्य म ज म, विवाह और मृत्यु जसे प्रमुख सस्कारो का जगह जगह चित्रण है । पुत्र ज म पर जिन परम्पराओ का निवहण होता है, वह द्रष्टव्य है

हू वलिहारी राणिया, थाल वजाणै दीह ।
नालो वाढण,री छुरी, झपट जणियो सीव ।
'पूत सिखावै पालणा, मरण बडाई माय ।।'

युद्ध के प्रसगो का मार्मिक चित्रण है । समाज के विभि न लोगो   जसे नायण, मणिहारिन, लुहार, सुनार, रगरेज, बढई, दर्जी, कलाल, माली आदि के ग्रामोद्योग प्रधान समाज का बोलता हुआ खाका है ।

कवि का रचनाकम

उन्होंने विभि न पुस्तकें लिखी । प्रमुख है—

१	वश भास्कर	२	वीर सतसई	३	बलवद्विलास
४	राम रजाट	५	छन्दोमयूख	६	सतीरासो आदि ।

वश भास्कर बूदी का जीव त इतिहास है जिसम राजपूतो की वीरता और उनकी रमणियों क त्याग और चरित्र की गाथा है । कुछ अनुसधानकर्ताओ ने ता इसे उ नीसवीं शताब्दी का महाभारत भी कहा है । २५०० पृष्ठो वाले इस वहद् इतिहास ग्र थ की रचना सवत् १८९७ मे वूदी नरेश रामसिंह के आदेश पर की गई थी ।

'वीर सतसई' उनका प्रसिद्ध ग्र थ है । २८८ दोहो वाली इस पुस्तक को

सतसई परम्परा स जोडा गया। इसकी रचना सन् १८५७ ईसवी म स्वतत्रता सग्राम के नेपथ्य मे हुई थी। अत इसम राजस्थानी जोवन भूमिका, राजपूती मान-बान वीरता, पराक्रम का सुन्दर चित्रण है।

'बलवद्विलास म रतलाम नरेश बलव तसिह क चरित्र का उत्कृष्ट चित्रण

'रामरजाट मे रावराजा रामसिंह के शिकार, जोकि उन्होंने विजयादशमी वाले दिन खेला था, का सूक्ष्म विश्लेषण है।

'छदोमयूख' छन्दशास्त्र की छोटीसी रचना है। उनकी और रचनाए, जैसे 'सतीरासो' और 'धातुरूपावली' के बारे मे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता है। परन्तु इतना तो अवश्य है कि उनके द्वारा फुटकर रूप मे रचित कवित्त, सवये, सोरठ और गीत भी मिलते हैं।

निष्कर्ष महाकवि की कसौटी

अन्त मे, निष्कर्ष के रूप मे हम देख सकते हैं कि इस महाकवि न हमारी वैदिक परम्परा मे वर्णित मूल्यो को आगे बढाया। अथर्ववेद म 'भूमि माता है मैं भूमि का पुत्र हू" (माता भूमि पुत्राह पृथिव्या) कहा गया है। 'यजुर्वेद' मे कहा गया है कि वय राष्ट्र जागृयाम पुरोहिता' अर्थात् हम राष्ट्र के जागरूक प्रहरी (नागरिक) बनें। इन्ही राष्ट्रीय भावनाओ को इस महाकवि ने आगे बढाया। समय की माग को पूरा करते हुए जन-जन को वीरत्व का सन्देश देकर उन्हें राष्ट्रानुरक्ति और भक्ति की अदम्य भावना से अनुप्रेरित किया।

साथ ही उनकी लेखनी स लोक जीवन का ताना-बाना नि सृत हुआ। समाज की सही और यथार्थ तस्वीर प्रस्तुत की। नारी की गरिमा और महिमा का प्रतिपादन किया। जीवन मे समाहित बिखराव को लताडा और मधुरता का सन्देश दिया। गलत को गलत कहने से नही हिचकिचाए। अपन स्वाभिमान की सदव रक्षा की। वाणी को आयोजित सस्कार मे परिवर्तित होने से बचाने वाले इस महाकवि की स्मृति को प्रणाम।



महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण की स्वातत्र्य चेतना

डॉ० मनु शर्मा

हिन्दी म १८५७ मौर उसके मास पास लिखा हुमा साहित्य बहुत कम उपलब्ध है। "सवत् १८६० मौर १९१५ के बीच का काल गद्य रचना की दृष्टि से प्राय शून्य ही मिलता है। सवत् १९१४ (१८५७) के बलवे के पीछे हिन्दी गद्य साहित्य की परम्परा मच्छी तरह चली।" (मा० शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० २८९।) रही बात कविता की, तो उन दिनो रीवा नरेश महाराज रघुराजसिंह, नवलदास कायस्थ, चन्द्रशेखर बाजपेयी मौर बाबू गोपाल चन्द्र रीतिकालीन ढर्रे की कवितायें लिख रहे थे। इनकी कवितामों मे तत्कालीन राजनीतिक घटना क्रम के सम्बन्ध मे कुछ भी नहीं मिलता है। बाबा दीन दयाल गिरि का रचनाकाल वैसे तो स० १९१२ तक माना गया है। लेकिन उनके दोहों मे हिन्दुस्तान के पराधीन हो जाने की पीडा मवश्य व्यक्त हुई है

पराधीनता दुख महा सुखी जगत स्वाधीन।
सुखी रमत सुक बन विसे कनक पीजरें दीन॥

माश्चय की बात है कि जिन दिनो हिन्दी कविता की लोक जागरण पर रीतिवाद का घटाटोप छाया था, उन दिनों राजस्थानी की गद्य मौर पद्य रचनामो मे स्वातत्र्य चेतना, साम्प्रदायिक सद्भाव मौर साम्राज्यवाद विरोध का स्वर प्रबल रूप मे प्रकट हो रहा था। कृपाराम बाकीदास मौर सूयमल्ल मिश्रण जैसे कवि इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। कृपाराम न मपने सोरठों मे तत्कालीन समाज मे फैली मराजकता

और राजनीति के प्रति जन सामान्य में पैदा हुई उदासीनता का मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है। साम्राज्यवाद विरोध और साम्प्रदायिक सद्भाव बाँकीदास के काव्य का उज्ज्वलतम पक्ष है। वह हिन्दी भाषी क्षेत्र के पहले कवि हैं जिन्होंने अंग्रेजी साम्राज्य का अपने लेखन में खुलकर विरोध किया। और हिन्दू मुस्लिम जनता को मिलकर अंग्रेजों का विरोध करने की प्रेरणा दी—

> आयो इंगरेज मुलक रै ऊपर,
> आहस लीधा खेंचि उरा।

बाँकीदास भलीभाँति समझ चुके थे कि अंग्रेजी राज के पंजे दिनों दिन बढ़ते जा रहे हैं। और वह देश की सारी चेतना को धीरे-धीरे सोख रहा है। इसलिए उन्होंने जन सामान्य को उद्बोधित करते हुए लिखा

> राणा र [illegible] रजपूती।
> मरद हिन्दू की मुसलमान॥

बाँकीदास की परम्परा को विकसित करने वालों में पहला नाम महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण का है। सूर्यमल्ल मिश्रण १८५७ के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के प्रत्यक्षदर्शी थे। उन्होंने उस समय की राजनीतिक उथल पुथल और जनान्दोलनों के बारे में अपनी रचनाओं और पत्रों में काफी विस्तार से लिखा है। अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ वीर सतसई के रचनाकाल के सम्बन्ध में उन्होंने लिखा है

> वीसम बरसां वीतियां गुण चौ चन्द गुणीस।
> विसहर तिथि गुरु जेठ वदि, समय पलट्टी सीस॥
>
> (वीर सतसई सं० [illegible] स्वामी १)

विक्रम संवत् १९१४ (१८५७ ई०) में समय ने पलटा खाया। १० मई १८५७ को स्वाधीनता की पहली लड़ाई का बिगुल बजा। तब सौ वर्षों में ईस्ट इण्डिया कम्पनी सारे हिन्दुस्तान पर अपना अधिकार कर चुकी थी। अधिकांश राजाओं और शासकों ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी से समझौता कर लिए थे। वे कम्पनी के अधीन रह कर सत्ता के सुख भोग रहे थे। सूर्यमल्ल मिश्रण इस राजनीतिक परिदृश्य से भलीभाँति परिचित थे। और राजाओं तथा शासकों में विकसित हुई दास वृत्ति [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] के लिए [illegible] के रूप में देख रहे थे।

संवत् १९०६ [illegible] [illegible] के राजा [illegible]सिंह को अपने पत्र में उन्होंने लिखा [illegible] [illegible] होगा और [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। किन्तु हिन्दुस्तान के राजाओं में तो यह बुद्धि रह गई है कि [illegible] [illegible] [illegible] के [illegible] है यहाँ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] भी [illegible] [illegible] [illegible] हैं। और [illegible] भी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। (वंश भूमिका पृ० ९६) यह पत्र अंग्रेजों द्वारा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] लिखा गया था। [illegible] [illegible] राजाओं द्वारा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हुई [illegible] [illegible]

स स्पष्ट हो जाती है। सूयमल्ल सोच भी नही सकते थे कि अंग्रेजो राज के प्रति राजा और सामत ऐसी वफादारी दिखायेंगे। उन्हें सबसे ज्यादा दुख इस बात का था कि ये राजा लोग अपने सजातीय और समाज के लोगो का तिरस्कार करते हैं। इस सम्बन्ध में वह लिखते हैं 'जो समाज और सजातीय हैं और अपने मत को मानने वाले हैं फिर भी उन पर लाख गुनी ठसक दिखाते हैं। और यदि उन लोगो मे से कोई धर्म का विचार करके नम्रता का व्यवहार करे तो दुर्भाग्यवश ये (राजा) लोग अपने मन में समझते हैं कि हम तो बडे हैं ही और ये हमारे सामने नम्रता दिखाने योग्य हैं इसलिये नम्रता दिखा रहे हैं। जब से यह बुद्धि हिंदुस्तानियो की हुई है तब से विदेशियो का अमल देश पर हुआ है।' (उप०)

यह पत्र देशी शासको की कमजोरियो का कच्चा चिट्ठा है। सामत लोग अपनी झूठी शान आपसी वैमनस्य और जन विरोधी दृष्टिकोण के कारण आजादी और गुलामी का अंतर भूल चुके थे। उनके लिए अपनी सुख सुविधायें सर्वोपरि हो गई थी। ईस्ट इण्डिया कम्पनी का देश पर एकाधिकार और एक छत्र राज्य देखकर राजा और सामत लोग अपने कुल क्रमागत स्वभाव के विरुद्ध आचरण करने लगे थे। किसी मे भी इतना साहस नही रहा था कि अंग्रेजो राज की ज्यादतियो के खिलाफ आवाज उठा सके अपने समकालीन सामतो और राजाओ को धिक्कारते हुए सूयमल्ल ने लिखा

इण डकी गिरण अेक री भूले कुल साभाव।
सूरा आलम अैस मे, अकज गमायो आव॥

(वीर सतसई, ४)

जो शूरवीर कहलाते थे वे भी आलस्य और ऐय्याशी में व्यर्थ ही जिन्दगी गवा रहे थे। इन आलसियो और विलासी लोगो से भला क्या आशा की जा सकती थी? सूयमल्ल ने इसके बावजूद भी उन राजाओ आदि मे देश प्रेम और राष्ट्रीय चेतना जगाने की निरंतर कोशिश की। वस्तुत वह सभी राजाओ और सामतो को एक जुट करके शक्तिशाली सगठन बनाना चाहते थे। इसके लिए उन्होने राजपूत योद्धाओ का बार बार उनके अतीत गौरव का स्मरण कराया। राजपूत योद्धाओ की तुलना उस सिंह से की जो वन का एक मात्र स्वामी होता है। और अंग्रेजो का सियार व गीदड के मानिन्द बतलाया। इस सन्दर्भ में उनकी यह अन्योक्ति काफी लोकप्रिय है

जिण वन भूल न जावता गैद-गवय गिडराज।
तिण वन जबुक ताखडा, ऊधम मडै आज॥ (उप० २०)

महाकवि की मनोव्यथा और घृणा का मिलाजुला रूप यहा बड़ा ही प्रभावकारी हो उठा है। मनोव्यथा का कारण सिंह की उदासीनता है। जिस सिंह के भय से हाथी, गैंडे और सुअर जैसे हिंस्र जानवर भी वन मे आने का साहस नहीं करते थे, उसी वन में सियार और गीदड उच्छृंखल होकर विचर रहे हैं। घृणा सियार और गीदड की तरह एकदम कायर अंग्रेज कौम के प्रति है।

इस दूह को पढ़कर महाप्राण निराला की 'जागो फिर एक बार' कविता की ये पंक्तियां याद आती हैं—

शेरों की मांद में/आया है आज स्यार—/जागो फिर एक बार।

दोनों कवियों के यहां वाच्य सन्दर्भ स्वातन्त्र्य चेतना है। दोनों ने अतीत गौरव का स्मरण करा कर उस चेतना को जगाने की कोशिश की है।

१८५७ के स्वाधीनता संग्राम में अधिकतर सामंत अंग्रेजों की सहायता कर रहे थे। मिति पौष शुक्ला प्रतिपदा संवत् १९१४ को सूर्यमल्ल मिश्रण ने पीपल्या के ठाकुर फूल सिंह जी को अपने पत्र में लिखा "किन्तु ये राजा लोग देशपति जो जमीन के स्वामी हैं सबके सब निकम्मे कायर और हिमालय के गले निकले। इस क्रांति ने अंग्रेज को चालीस से लेकर साठ सत्तर वर्ष पीछे डाल दिया है, तो भी ये राजा लोग कायरता दिखा रहे हैं और गुलामी करते हैं। परन्तु मेरी यह बात आप याद रखिये कि यदि अंग्रेज इस बार जम गया तो शताब्दी तक हटाना मुश्किल हो जायगा।' (दे० वीर सतसई, पृ० ७०) जो लोग १८५७ के स्वाधीनता संग्राम को 'गदर' कहते हैं, उन्हें महाकवि द्वारा प्रयुक्त क्रांति शब्द पर ध्यान देना चाहिए। जन सहयोग के अभाव में क्रांतियां सम्भव नहीं होती। इस क्रांति ने अंग्रेजों को काफी कमजोर कर दिया था। यानी वे १८०० ई० के आस पास की स्थिति में पहुंच गये थे। यदि हिन्दुस्तानी राजाओं में दूरदेशी होती तो वे इस कमजोरी का लाभ उठा सकते थे। लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। सूर्यमल्ल मिश्रण को यह बात लगातार कचोटती रही और उन्होंने अपनी पीड़ा को उपर्युक्त पत्र के जरिये व्यक्त किया। साथ ही उन्होंने भविष्यवाणी भी की कि इस बार जमे अंग्रेज को शताब्दी तक हटाना मुश्किल होगा। हम सब जानते हैं कि महाकवि की यह भविष्य वाणी सही साबित हुई। १८५७ में फिर से जमा अंग्रेजी राज १९४७ तक रहा।

पत्र में राजाओं को 'देशपति' और 'जमीन का स्वामी' कह कर उन पर व्यंग्य किया गया है। जो देश की रक्षा नहीं कर सके वह कैसा देशपति? जिसमें अपनी धरती के लिए प्रेम न हो उसे जमीन का स्वामी कहलाने का कोई हक नहीं है। सम्भवतः ऐसे लोगों को ध्यान में रखकर ही महाकवि ने लिखा है

खोयो मैं घर में अवट, कायर जबुक काम।
सीहां केहा देसड़ा जेथ रहे सो धाम।। (उप० १६)

घर में रह कर जीवन को व्यर्थ गंवा देना तो कायरों का काम है। शूरवीरों के अपने कोई देश और घर नहीं होते। वे जहां रहते हैं वहीं उनका देश और घर हो जाता है।

उन दिनों ज्यादातर शासक और राजा अंग्रेजों के कृपापात्र बन गये थे। वे अपने गुजारे के लिए अवसर अंग्रेजों के आगे गिड़गिड़ाया करते थे। महाकवि से 'देशपतियों' की यह दशा देखी न गई। और उन्होंने उनकी वस्तुस्थिति का भान कराते हुए ललकारा—

साह न बाजो ठाकरा गीन गुजारा दाड़।
हापल पाई हाथिया मा अड बाजै मीड़॥ (उप० ३८)

महाकवि सूयमल्ल मिश्रण चाहते थे कि क्रांतिकारियों ने स्वतन्त्रता की मशाल जलाई है, वह पूरी तरह रोशन हो। इसलिए उन्होंने सीतामऊ रतलाम पीपल्या रतनपुर जोधपुर कोटा गोघाण्या शाहपुरा और नामवाड़ा के राजाओं और सामंतों को इस बारे में पत्र लिखे। नामली (रतलाम) के ठाकुर बख्तावर सिंह को उन्होंने लिखा

उधर की तरफ से पृथ्वी तथा अप्सराओं के प्रशिक लोगों में राज्य और प्राणों की बाजी लगाने वाले वीर जो कुछ अपने साथी होते हुए दिखलाई पड़ते हों, तो गुप्त रूप से लिखना सो अन्यत्र भी बीज नहीं डूबा है। इसलिए और भी कई साथी होने के लिए तैयार हो जायेंगे और साथी तैयार करने का दायित्व तो हम लोगों का कुल क्रमागत है। अतः आप वहां से सूची भेजेंगे तो यहां से भी ब्यौरे वार लिखा जायगा। लेकिन इस समय तो गुप्त ही ठीक है। अंग्रेजों की सामर्थ्य को देखते हुए इस समय यह बात आप नादानी की ही समझेंगे लेकिन भगवान ने हमको शुरू से ही नादानी दी है इसलिए धनाई कहां से आवे। (सूयमल्ल स्मृति शताब्दी स्मारिका पृ० ६३)।

इस पत्र को पढ़कर लगता है जैसे सूयमल्ल क्रांतिकारियों का कोई भूमिगत संगठन बना रहे हों। अपने राज्य और प्राणों की बाजी लगा देने वाले लोगों को अधिक से अधिक संख्या में एकत्रित करना उनका लक्ष्य था। वे अंग्रेजी साम्राज्य के ध्वस्त होने का सपना संजोये हुए थे। इसी सपने ने उनमें संघर्ष के प्रति अटूट आस्था पैदा की। प्रतिकूल परिस्थितियां होने पर भी वे निराश नहीं हुए थे। उनका कवि मन यह स्वीकार करने को तैयार नहीं था कि स्वतन्त्रता कामी लोगों का इस देश में बीज डूब गया हो। और वास्तव में ऐसा हुआ भी नहीं था। जगह जगह पर लोग क्रांतिकारियों का सहयोग कर रहे थे। 'दलपति' नेपथ्य में चले गये थे। जन-साधारण आगे आ गया था।

एक कवि के नाते सूयमल्ल अपने को क्रांतिकारियों का साथी मानते थे। ध्यान रहे वह एक राज्याश्रित कवि थे। लेकिन साधारण कोटि के दरबारी कवियों की तरह अपने आश्रयदाता का झूठा यशोगान करना उनके स्वभाव के विरुद्ध था। उनकी दृष्टि में कवि कर्म का आदर्श सत्य का बखान है। श्रेष्ठ कवि वह है जो निर्भीक होकर खरी खरी कहता है—

कविन बिना तो बड़े लोकन सों ऐसी बात
ऐंचि के कहै सो है मंडल महिं कौन है।

भारतीय इतिहास में ऐसे उदाहरण खूब मिल जायेंगे जब शासक वर्ग ने तो जनता की मंशा की अनदेखी की लेकिन साहित्यकारों ने उसे बखूबी समझा और रचनाओं के जरिये अभिव्यक्त किया। सूयमल्ल मिश्रण देख रहे थे कि अंग्रेजी फौज के देशी सिपाहियों द्वारा शुरू किया गया संघर्ष धीरे धीरे जन संघर्ष में बदलता जा रहा है। सिपाहियों के साथ साथ जन साधारण भी क्रांति में हिस्सा लेने लगा है। और

नासक वर्ग जहा कही क्रातिकारियो का साथ नही दे रहा है, वही लोग उन्हें बइज्जत करने लगे है। इस दृष्टि से पोप मुन्शी एबान्न वि० स० १६१५ को नामली के ठाकुर को लिखा उनका पत्र उल्लेखनीय है। वह लिखते हैं 'और कोट म दो दल बने हुए हैं। एक तरफ परदसी (क्रातिकारी) लोग और तोपें हैं और दूसरी तरफ महाराव जी और और उनके भाई बधु है। जोधपुर की फौज आमाप पर चढ आई थी सो बिखरकर वापिस चली गई। तोपें और असबाब मल्लमपूरला गया और कोट म कार्तिक सुदी १३ के दिन एजन्ट बाटन साहब अपने दो पुत्रा सहित मारा गया। यह तो पहले ही सुना होगा उन विद्रोही लोगो म कामा (भरतपुर) निवासी कायस्थ लाला जयदयाल है। नीमच म बाटन कोटा आया तब महारावजी म पाच-सात आदमियो को वकर के रूप म मागा। उन लोगो म यह जयदयाल भी है। महारावजी ने तो यह कह दिया कि मेरे वश की बात नही फिर उसी रात जयदयाल ने तमाम परदेसी (क्रातिकारी) लोगो को एकमत करके प्रात काल होते ही तोपें लगाकर अग्रज को मार दिया। बाद म मुसाहिब मुशी रतनलाल को महारावजी की खास ड्योढी स पकडकर ले गये और बडी बइज्जती करके कैद किया। और भी सब सिल्लेदारो को कैद किया कोटे म छोटी बडी १२७ तोपे ह परन्तु अब सबकी सब विद्रोहियो के हाथ म है। तोपो का मुह महलो पर लगा रक्खा है। जो राजपूत कहलाते है और सच्चे राजपूत नही है उनकी बडी बेइज्जती भी गई। पाच सात सौ राजपूतो के शस्त्र छीन लिए गये और उनको तोड डाला। (सूर्यमल्ल मिश्रण स्मृति शताब्दी स्मारिका, पृ० ६३-६४)

१८५७ की क्राति ने जन सामान्य के मन से राजाओ और सामतो के भय को निकाल दिया था। जो राजा क्रातिकारियो के साथ होकर अग्रजी फौज को चुनौती देता वह सूर्यमल्ल मिश्रण की दृष्टि म आदरणीय हो उठता। आउवा के ठाकुर कुशाल सिंह और नृसिंहगढ के राजा चतसिंह इसी वजह से उनके काव्य चरित्र बने है। कुशाल सिंह की क्राति म जो भूमिका रही उस लेकर रचा गया जो गीत लिखा उसका अतिम अश इस प्रकार है—

भागे भीख गोरा सिपाएरा री जिहान भालो,
दावा तणा झाट दे उत्ताला दसू दस।
तीसू नीद न आवे कपनी लगाने ताला,
कालो हिये न मावे अगजी कुसलेस॥ (दे वीर सतसई पृ ६२)

आउवा के विरुद्ध जब अग्रेज सेना ने आक्रमण किया तो पहली बार आउवा के क्रातिकारियो ने अग्रेज सेना को हरा दिया और एजेन्ट माकमसन का सर धड से अलग कर किले पर टाग दिया। उसके बाद अग्रेजो के निरन्तर होने वाले आक्रमणों का आउवा के स्वतत्रता सेनानी सामना नही कर सके। जनवरी १८५८ म आउवा पर अग्रेजो का अधिकार हो गया।

एक ओर आउवा के राजा कुशालसिंह हैं, जिन्होंने अग्रेजी साम्राज्यवाद के विरुद्ध सघर्ष किया। दूसरी ओर कोटा के महाराव हैं जो अग्रेजों द्वारा कोटा के तहस

नष्ट कर दिये जाने पर भी उनके प्रति वफादारी दिखाते रहे। कोटा के महाराव की आजादी की पहली लड़ाई में जो भूमिका रही उसके बारे में सूयमल्ल मिश्रण ने कड़ाणा के ठाकुर पवतसिंह को अपने पत्र में लिखा "आषाढ में लगभग २० हजार काले सिपाहियों की फौज आ गई थी तो यहाँ से टल गई पहले कोटे की फौज के विरुद्ध होकर एजेंट को मार डाला था, इस बात पर चैत्र के महीने में अंग्रेज की फौज ने यहां आकर लड़ाई की थी। चौथे दिन विद्रोही फौज तो यहां से निकल भागी और अंग्रेज ने कोटे को सब तरह से लूट कर खराब कर दिया। बहुत से आदमियों को फांसी दी और बहुतों को बंदूकों से मार डाला। बहुत सी स्त्रियों की इज्जत खराब की और बहुत सी तोपें फाड डाली तथा बहुत से रुपए लेकर महाराव को कोटा दे दिया।"

(दे० सूयमल्ल मिश्रण स्मृति शताब्दी स्मारिका, पृ ६४)।

पड़ोसी राजा द्वारा किया गया यह कुकृत्य सूयमल्ल मिश्रण के लिए असहनीय था। कहां तो वह बूंदी नरेश महाराव रामसिंह को क्रांतिकारियों की सहायता के लिए प्रेरित कर रहे थे। और कहां उन्हीं के पड़ोसी राज्य में राजा की सेना अंग्रेजों का साथ दे रही थी। ऐसे मूर्ख राजाओं के लिए ही उन्होंने लिखा है

नाहक चमर राखै मूढ़ होय राजा
हमार मत प्रबुद्ध होय ताही पै चमर है।

स्वतन्त्रता संग्राम के वर्षों में महाकवि सूयमल्ल मिश्रण ने इला न देणी आपणी' का मन्त्र पाठ जारी रखा। उनके इस मन्त्र ने जाने कितने लोगों के मन में साहस, स्फूर्ति और अपनी स्वतन्त्रता के लिए मर मिटने की प्रेरणा पैदा की। वह प्रथम स्वाधीनता संग्राम के बाद ६ वर्ष और जीवित रहे। एक अर्थ में उन्होंने कम्पनी राज और विक्टोरिया राज में हिन्दुस्तान की दुर्दशा अच्छी तरह देख ली थी। उनकी आंखों के सामने ही स्वतन्त्रता की लड़ाई कुचल दी गई थी। राजस्थान में तो तात्याटोपे की मृत्यु के बाद ही सारा संघर्ष ठप्प हो गया था। क्रांतिकारियों में जबरदस्त निराशा पैदा हो गई थी। कुशल नेतृत्व के अभाव में आन्दोलन छिन्न-भिन्न हो गया था। काश! उस समय सूयमल्ल मिश्रण को कोई उपयुक्त काव्य नायक मिल जाता। लेकिन हिन्दुस्तान के खाते में गुलामी के वर्ष और जुड़ने थे। सो जुड़ गये। हां इतना अवश्य कहना पड़ेगा कि बांकीदास ने साम्राज्यवाद का जिस प्रबल स्वर में विरोध किया था उसे महाकवि सूयमल्ल मिश्रण ने मन्द नहीं होने दिया। यह उनकी स्वातन्त्र्य चेतना का ठोस प्रमाण है।

सास्कृतिक चेतना का सोपान 'वलवद्विलास'

श्रीमती प्रियनाश चतुर्वेदी

अभी अभी कविता कानन म रीतिकालीन कवियो की बठक उठी ही थी-रसिको के मन पर पद्माकर प्रतापसिंह, दीन प्रवीन ग्वाल मणिदेव गुरुदत्त जसवतसिंह मौन थान, बोधा, ठाकुर चन्दन जैस महाकवियो की छाप अवशिष्ट थी। हिन्दी काव्यो-पवन मे शृगारी रूपक के रूप म राधाकृष्ण की कलि लीलाओ की धूम थी, काशी मे सेवक कवि अवध मे द्विज देव और लच्छीराम कवि वहा व्रजमण्डल म ललितमाधुरी एव ललितकिशोरी के सगीतमय पदो मे शृगारमिश्रित वैष्णव धम की धारा प्रवहमान थी वहा निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल का उद्बोधन कराने वाले खडी बोली के पितामह भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की कीर्ति कौमुदी का उज्वल प्रकाश विवर्द्धित हो रहा था। ऐसे समय निःशेष प्राय रीतिकाल की परपरा का पुन उद्घोष सुनाई दिया जिसके नायक थे सीतामऊ के महाराज कुमार रतनसिंहजी जिन्होन नटनागर के रूप म पर्याप्त ख्याति अर्जित की है। ऐस समय मे प्रवहमान काव्य परम्परा स बिल्कुल पृथक स्वर राजस्थान के दक्षिणी छोर म उठा था जिसके उद्घोषक थ चन्द्रचूडमणि चण्डीदानात्मज वीर रसावतार महाकवि सूर्यमल्ल जिनकी प्रमुख रचना है—'वश भास्कर एव वीर सतसई जिनकी गणना राजस्थान के गौरव ग्रथो म की जाती है। वश भास्कर काल की कसौटी पर जडा हुआ अमर शिलालेख है जो महाकवि की लोकोत्तर प्रतिभा एव अक्षय कीर्ति का परिचायक है।

महाकवि सूयमल्ल मात्र एक ही व्यक्तित्व नहीं है। उस महान प्रतिभा का सयोजन अनेक छोटी मोटी धाराओ से हुआ है जिसमे केशव का पाण्डित्य बिहारी की

बहुज्ञता, मतिराम की सरसता, रहीम की नीति प्रवणता, चंदबरदाई की युद्ध रसिकता, संत स्वरूपदास की वेदांतप्रियता, रजवट का स्वाभिमान एवं पिता प्रदत्त भाषायिक बहुज्ञता का अंश समाविष्ट है।

महाकवि में काव्य रसिकता का उन्मेष बाल्यकाल में हो हो चुका था जबकि उन्होंने सामान्य तुकबंदियां करते-करते ही दस वर्ष की अवस्था में राम रंजाट की रचना कर डाली थी जो कि महाकवि की असाधारण लोकोत्तर प्रतिभा का परिचय है।

'वंश भास्कर' महाभारत की परम्परा में ही व्यास पीठ पर आसीन होकर लिखाया गया वो महाचंपू है जिसमें अतीतकालीन भारत से लेकर तत्सामयिक प्रामाणिक इतिहास को काव्य में गूंथने का प्रयास किया है।

कवि की तीसरी महत्त्वपूर्ण रचना है— 'बलवद्विलास'— रचना के शीर्षक से ही स्पष्ट है कि महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने भिणाय नरेश महाराजा बलवंतसिंह के अनुरोध पर विद्वानों के विलास हेतु इस ग्रंथ की रचना की थी। ग्रंथ रचना के सम्बन्ध में अंतःसाक्ष्य उपलब्ध है, जिसके अनुसार एक बार भिणाय नरेश महाराजा बलवंतसिंहजी ने सूर्यमल्लजी को ससम्मान आमंत्रित कर सब सज्जनों के अध्ययन योग्य तंत्र लिखने की अभ्यर्थना की थी। सूर्यमल्लजी जब अपने तेरह दिवसीय प्रवास से लौट कर आये तब 'वंश भास्कर' ग्रंथ की रचना काल के मध्य ही कुछ अतिरिक्त समय बचाकर इस ग्रंथ की रचना की थी। बलवद्विलास का एक अंश द्रष्टव्य है—

मणि सील नप राम मों, बुल्यो कवि बलवंत
किय अभ्यर्थन तंत्र कहु, सब पाटव जहं संत।
रहि भनाय तेरह दिवस, इम कवि बुदिय आई।
क्रम बलवंत विलास किये, हिय प्रथिता हरिखाई।
वंश भास्कर के बनत बिच अवसर कहू काढि।
किय प्रबंध यह मिहिर कवि, कतिय महूरथ माढि।[1]

इस ग्रंथ में कवि ने विशेष रूप से राजनीति का सांगोपांग विवेचन किया है। शत्रु, मित्र, दण्ड, कोश, वाहन आदि प्रत्येक वस्तु का बड़ा सूक्ष्म विवेचन किया है।[2] इसमें राठौड़ों के संक्षिप्त इतिहास के साथ भिणाय नरेश बलवंतसिंह के चरित्र का आख्यान हुआ है। इतिहास के साथ साथ ही इसमें कवि ने अपनी बहुज्ञता का भी चमत्कार प्रदर्शन किया है। दर्शन और राजधर्म का इसमें सविस्तार वर्णन हुआ है।[3]

अंतःसाक्ष्य से स्पष्ट है कि इस ग्रंथ की रचना 'वंश भास्कर' की रचना के मध्य हुई थी अतः यह ग्रंथ भाषा, शैली एवं कथ्य की दृष्टि से वंश भास्कर से

---

१ बलवद्विलास— अप्रकाशित छंद संख्या ५७६
२ वीर सतसई—पृ ६७
३ डा आलमशाह खान, महाभूयमल्ल (अप्रकाशित शोध प्रबंध)

प्रभावित है। यदि इसके मध्य के अंश को हटा दिया जाय तो यह ग्रंथ वंश भास्कर की प्रवहमान धारा का ही एक अंग दृष्टिगत होता। लेकिन यह ग्रंथ पूर्व कथन का पिष्ट-पषण मात्र नहीं है। कवि की दृष्टि से इस ग्रंथ का अपना विशेष महत्व है जैसा कि उन्होंने अपने स्वलिखित पत्र में स्पष्ट किया है। ग्रंथ रचना सम्पूर्ण हो जाने पर भिणाय नरेश ने महाकवि को ग्रंथ व्याख्या हेतु पुनः निमन्त्रित किया था। महाकवि तब स्वयं भिणाय नहीं जा सके थे लेकिन उन्होंने इस कार्य हेतु अपने सुयोग्य उत्तराधिकारी श्री मुरारीदानजी को भेजा था उस समय उनके साथ रामस्वरूपजी ने भी भिणाय की यात्रा की थी। पत्र का पूर्वार्द्ध आत्मविश्लेषण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है एवं उत्तरार्द्ध में बलवद्विलास विषयक मान्यतायें हैं। पत्र का अनूदित अंश इस प्रकार है—

'पिछले कार्तिक में गुल्म की व्याधि से विशेष पीड़ित रहा। इसलिये एक मास का अवकाश मिल गया था। मार्गशीर्ष (मगसर) में स्वस्थ हो गया था, पर स्वास्थ्य लाभ के मार्गशीर्ष में भी अवकाश मिल गया था। इस प्रकार अवकाश के अतिरिक्त समय में दो महीने तक निरन्तर परिश्रम कर बलवद्विलास ग्रंथ पूरा किया। आपकी तरफ से भी 'चापर' लिखी हुई आती थी, वे भी इसी में शामिल है। मैंने उतरते पौष में पुनः मौज (अवकाश) के लिए अनुरोध किया था पर स्वीकृत नहीं हुआ। आपके लिखने से भी यदि विवाह के लिए यदि अवकाश मिलता तो चार-पांच दिन और कठिनता से ही मिल पाते क्योंकि इधर वंश भास्कर का यथाशीघ्र सम्पूर्ण किये जाने की शीघ्रता है और बलवद्विलास के सांगोपांग अर्थ सहित श्रवण करने में कम से कम दो महीने का अवकाश चाहिये क्योंकि इस ग्रंथ में आवश्यक विद्या समाहित है, जिसमें कर्म उपासना आत्म ज्ञान वार्ता राजनीति आदि की मुख्य विवेचना की है जिनके विषय धर्म का साधन, सिद्धि तथा भक्ति का साधन एवं नीति का साधन इत्यादि समस्त विषय आपकी आज्ञानुसार रखे गये है। साथ ही कर्मकाण्ड खण्ड में श्रुतियां एवं स्मृतियों का आशय, वर्णाश्रम धर्म उपासना जीविका, स्त्री धर्म आदि सभी विषय इसीमें आ गये हैं। उपासना खण्ड में श्रुतियों के रूप में पचरात्रादिक तांत्रिक ग्रंथों का आशय ज्ञानकाण्ड खण्ड में उपनिषदों का तथा उत्तरमीमांसा सांख्य दर्शन पातंजल का आशय साथ ही न्याय वैशेषिक पूर्व मीमांसा का आशय अर्थशास्त्र के ग्रंथों का आशय नीति पर चाणक्य मदकप्रमुख दण्डनीति के ग्रंथों का आशय साथ ही राजा आमात्य मंत्री सती के लक्षण साथ ही पांच रत्न, पांच उपरत्न, सुवर्ण रौप्य की गुण अवगुण सहित परीक्षा तथा शस्त्र-वस्त्र अन्न के भेद सहित लक्षण देश, दुर्ग सेना, हाथी घोड़ा सेनापति बिल्लेदारों के लक्षण एवं आपके विवाह से लेकर अजमेर की चढाई तक भी समस्त चर्चा इस ग्रंथ में है। इस ग्रंथ की रचना के लिये दो महीने का समय तो बहुत कम था लेकिन यह तो सरस्वती की ही कृपा थी कि इतने से समय में एवं इतने में ग्रंथ में सभी विषय सांगोपांग रूप से आ गये है। पूर्व लिखी व्यवस्था में कहीं विलम्ब न हो इसलिये भाई रामस्वरूपजी के साथ चिरंजीव मुरारीदान को भेज रहा हूं जो आपको अर्थ सहित सुना देंगे। अर्थ ये अपनी क्षमतानुसार करेंगे। ग्रंथ-बोध के लिये इस ग्रंथ में पदच्छेद भी कर दिया है। [illegible] का ग्रंथ तो बिना पदच्छेद भी अच्छा व अधिक हो

सकता है परन्तु यह कठिन विषय है अन्वयप्रयोग विशिष्ट हो सकता है, पर इनका विशेष आनंद तो बन भासकर सम्पूर्ण होने पर प्रकाशित स्वीकृत होने के बाद आयेगा। यद्यपि आपके लिए उचित नहीं पर सुदामा के य त दुल स्वीकार करने की कृपा करना—

मिति माघ शुक्ल चतुर्दशी १६१६ मिति विक्रम

प्रस्तुत पत्र से स्पष्ट है कि महाकवि ने अपने इस लघु प्रबन्ध काव्य में राज नीति एवं ज्ञान की विशद व्याख्या करने का सुन्दर प्रयास किया है।

रचना के प्रारंभिक पृष्ठों में राठोड़ वंश का परिचय है फिर दार्शनिक विषय की विवेचना की है

भिणाय नरेश बलवन्तसिंह यौवन की परिधि में प्रवेश कर रहे हैं। राजपुत्र के लिए शरसन्धान आवश्यक दायित्व है। बलवंतसिंह के शिकार प्रेम का वर्णन करते समय कवि कहता है—

घनाक्षरी—

नित्य ही निवारि बलवंत वसुधापतियों
मोदर ममत सुरली में मन ल्याति करि
कोटल मतीर ह दसागुल कापिथ्य बिल्व
प्रम है मिले की स्थूल वध्यन के पातकरि
मूहन्क मृत्तिका मिलाय गुरु गाल गाढे
स्नान करि जात बन्दूकन सो बात करि
तारि देत एके स्वासिक को फेरि देत
गरि देत गु जन गिलोलन की घात करि॥

बन्दुक अम्भ उछारिकै महिप गिलालनि मारि।
अनाधार रक्षत अधर, इन्धन लत उतारि॥

भिणाय नरेश अपने समय के विख्यात निशानेबाज रहे हैं। उनका शब्द भेदी बाण मारने का अभ्यास था। उसी अभ्यास का महाकवि ने काव्यमय ढंग से मनोहर कवित्त में निम्न भाव व्यक्त किये हैं। उस कवित्त की अंतिम दो पंक्तियां इस प्रकार हैं—

सब्द भेद आदिक समस्त विधि साधन के
पूर पटुताई प्रभा पारथ की पती में
कातर कपाल कीवे फीलन को फेरि देत
गेरि देत गु जन कलब कमनैती में।
खेलत खलूरिका में सुरमी सरासन की
पानी पटुता के बलवंत छितपाल के
ऊँचे अम्भ उडत पतत्रिन को वारि देत।
औरन उतारि देत बंधा चिरकाल के।
दीठि जो परै तो दूर भेदन में हाल हाल।
बाल बाल अंतर बच में बटवाला के

नैन पिय भ्रमतै तये मैं करि छेद छेद
एक एक वधी मनि मोतिन की माला पे ॥

राजा बलवतसिंह तीर्थ यात्रा से लौट कर आये हैं। स्वजन-परिजन निमंत्रित हैं। आमंत्रित अतिथियों के आमोद-प्रमोद के लिये 'पातुरिन' बुलाई गई है। कवि उन्हीं नर्तकियों के अंग प्रत्यंग एवं हाव-भाव का वर्णन करते हुए कहता है —

पायल अनीट किंकिन पुकार समर निष्य पाठ जनु वह मार
थायित्यतत्ता थेई थेई। लचकात गात उलिहार लेई
उरझाई लरन पटकत उधार मडहि ममधुन लयजातिमाप
उछटात हार प्रति हढ उराज। मन मन घटाव जन जन मनोज
रन नेकि करन वचन बिराव। मन लेंकि भ्रमर छविहावभाव
नचि सजन गजन तरल नन। भजन सहरजन मन मीन
नचि जात ताल फिरताल नेम। पलटात गात रचिजात प्रेम।

पद्धति छंद ४०६-४१०

कवि का प्रिय विषय है युद्ध वर्णन। अन्यान्य प्रसंगों की अपेक्षा हय गज सेना युद्ध आदि के वर्णन में कवि का मन अधिक रमा है। हाथियों की सेना प्रयाण कर रही है, कवि की लेखनी से शब्द चित्र निःसृत हो रहे हैं। हाथियों के पद संचालन की विशदता इन शब्दों में निहित है—

मचने महावत बीत पावत त्यों घुमावत मत्य के
मखतूल भूल कलाप मण्डित झलल पण्डित हृत्य के
घुमडात भद्दव की घटा निभयो घटा गज उल्ल से।
उमडात जात तुरंग पान तुरंग लगन में करन। ४७६ ॥
बाल्हीक ताजिक के तुखार बनायुजान्कि सेत के।
हयराज हंकिय सन सो हुलसात आदिन हेत के।
लगि पति तोपन अग्ग ओपन आदि लोपन उनसी
गढ गव गोपन रारि रोपन काल कोपन मोह सी ॥ ४८६

महाकवि सूर्यमल्ल को अपनी जातीय परंपराओं से विशेष स्नेह था। उन परंपराओं का निर्वाह उन्होंने आजीवन किया और उसी परंपरा के निर्वाह हेतु समय पर रजवट को ललकारा भी। कवि राजस्थानी रमणियों के सती रूप पर विशेष मुग्ध है। जिसका प्रमाण है वीर सतसई' में नारी की पुनीत रूप की अभ्यर्थना जो अन्यत्र दुर्लभ है। संभवतः सतीत्व के अवशिष्ट महिमा के गायन के लिये ही महाकवि ने वीर सतसई की रचना की है। पर इसके पूर्व वे 'वनवद्विलास और सती चरित्र' की रचना कर चुके थे। जिसमें राजस्थानी सती के महनीय स्वरूप की अभ्यर्थना की गई है। बनवद्विलास में भी सती होने का प्रसंग है। राजा बलवंतसिंह के सहोदर भ्राता का निधन हो जाता है तब उसकी पत्नी कमला सती होने को प्रस्तुत होती है। यह घटना उस समय की है जबकि सती होना कानूनन अपराध था। अंग्रेज एजेन्ट एवं वायसराय ने भी इस कार्य में बाधा डालने की कोशिश की पर कमला के इस सत को कोई नहीं

गया सका। इतिवृत्तात्मकता की अपेक्षा कवि का मन इस स्थल पर अधिक रमा है। काव्य रचना का एक अंश प्रस्तुत है —

करत कपूर पूर कामिनें कवन किमि कवि मन
पूर मिमि भस्म हान भ्रमता
उच्छव में प्राप माघा प्रम, धाम बख्तावर का
विरचो विधाता सो प्रघ धति मौ प्रमला
ब्याहु की चतुर्थ निमि मनिभ सिंगारि साजि
स्वामी सग म झुर्यो बिना प चढी कमला ॥ ५४२

कवि राजस्थानी नारी के इस आत्म बलिदानी स्वरूप पर विशेष मुग्ध है। इसलिए घनाक्षरी छन्द म सती कमला की विशेष अभ्यर्थना की है। चिता प्रवेश का कितना सजीव वर्णन है —

घनाक्षरी—

कवि रविमल्ल नाहु चाहु सौं उछाह मानि।
स्वच्छ कुल माल्विन मिलै न असो लीन्हो लाइ
लोक लोक नारिन म कित्ति कमनीय कीनी
कूरी तजै तिनकी गजरी गजि दीन्ही नाहु।
माधुरी सुरी रु नारी किन्नरी लौं कुल नारि
रिझाई गई देवन की दरगाह
सीता दयो आशिष प्ररु धनि उतार्या नाव
उर सा लगाई अनुसूया कह्या वाह वाह ॥ ५४४ ॥
सतन सुहाग को असीन को पढायो पयपायो ना
जिमीन असतीन उर छाया मातु
सासुरे रु पीहर कौं पानिय चढायो दे तीज सम
मढायो सो बढाया नाम प्रोक प्रोक
कवि रविमल्ल रानी कमला प्रपुब्ब करि जोरि
पट गाँठ सो न छारी दे मवन राव
चामर दुरावत हू दिस विमान बैठी हाथ गहि
नाथ साथ ले गई त्रिदिव लोक ॥

५४०—५४६ छन्द तक कवि ने कमला के सती चरित्र का अवांतर प्रसंग म उल्लेख किया है। वीर सतसई के विद्वान त्रय ने अपनी भूमिका मे लिखा है— 'भिणाय के राजा बलवन्तसिंह के प्रवाद से ज्ञात होता है कि सूर्यमल्लजी न सती रासो' भी बनाया था। अलवर के ठाकुर साहब श्री बलवन्तसिंह जी बारहट से पता लगाने पर ज्ञात हुआ कि उसकी प्रति अलवर मे है। पर 'सती रासो' 'बलवद्विलास मे आये हुए सती सबधी पद्यो के अतिरिक्त और भी कोई रचना है यह हम मालूम नही।'[1] इस प्रकार 'बलवद्विलास'

1 वीर सतसई की भूमिका पृ० ६०

देखे बिना ही इन गिने छंदों को 'सती रासा' नामक पृथक ग्रंथ में गढ़ने की कल्पना की गई है। जबकि सती रासा' निश्चय ही ८८ छंदों की एक स्वतंत्र रचना है। बलवद्वि लास में प्रसंग रूप में सती चर्चा को 'सती रासो' की संज्ञा देना भ्रम बढ़ाना ही मात्र होगा।

ग्रंथ के प्रारंभ में राठौड़ के कुल के विकास का वर्णन कर भिणाय राज्य की संस्थापना पर प्रकाश डाला गया है। उल्लेखित प्रबंध-काव्य में ज्ञान काण्ड, उपासना काण्ड में वेद, उपनिषद गीता, सांख्य, मीमांसा आदि दार्शनिक ग्रंथों का सार संक्षेप दिया गया है। शेष भाग में राजनीति के अंतर्गत राजा, अमात्य मंत्र, हाथी, घोड़ा सेना, गढ़ हीरा मोती आदि के भेद उपभेद की विस्तृत रूप से चर्चा की है।

प्रस्तुत ग्रंथ की रचना कवि ने 'वंश भास्कर' रचना के मध्य में समय निकाल कर इस ग्रंथ की रचना वि सं १९१४ में की थी।

जहं सक विक्रम राज को सरसमि नव कुसमान।
तीजी उज्जवल राधा तिथि इहि प्रबन्ध उत्थानै॥

भाषा की दृष्टि से कवि वंश भास्कर के समान ही प्रायः व्रजदनीया प्राकृत मिश्रित भाषा में इस ग्रंथ की रचना की है। ८० पृष्ठ की इस रचना में दोहा, मनहर घनाक्षरी पद्धरी आदि मिला कर ५८० छंदों का प्रयोग हुआ है।

ग्रंथ की पुष्पिका इस प्रकार है—

इति श्री राष्ट्रकूट वंशावतंस भणायपुर भेदन भू
मुजग बलवद्धारि समभ्यर्थन सानुकूल पड भाषावंश
विलासिनी विलास बन्धुर वैगिक्तसत्व
दर्मास ३ वाक्या बोध
विदग्ध वुन्दीश हृदुवि राव राजा राव राजेन्द्र
रामसिंह २०२
सभ्य समर्पित सप्रति ससभ्य भक्ति
चरणाणोंज
चाण्ध रीभ्य चितस्थ चतय चतुर
चूडामणि
चाकचमत्कृत चेतन पौराणिक चारण
चक्र चडाधु
चण्डीदानात्मज सुकवि सूर्यमल्ल विहित
प्रबंध समाप्तोय मूत्नाया
बलवद्विलास।

बलवद्विलास कवि की बहुज्ञता का परिचायक है जिसमें संक्षेप में ही अध्यात्म, दर्शन राजनीति का सार संक्षेप आ गया है।



महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण की प्रासंगिकता

डा रामचरण महेन्द्र

क्या यह सम्भव है कि हमारे युग में भी कोई आधुनिक कवि प्राचीन महाकाव्यों के समान विशाल महाकाव्य सृजन कर सके ?' बूंदी के विद्यानुरागी साहित्यप्रेमी महाराज श्रीरामसिंह ने अपनी विद्वत्सभा को साहित्यिक चुनौती देते हुए कहा।

उस दिन महाराज की सभा में एक से एक बड़े विद्वान् कवि विचारक एकत्रित थे। वे साहित्यप्रेमी कविहृदय वाले शासक थे। शासन प्रबन्ध की शुष्क कभी न हल होने वाली गुत्थियों से बचे समय में उनके यहां साहित्यिक चर्चाएं और कवि गोष्ठियां चला करती थीं। आज महाराज के साथ संयोग से 'महाभारत' की काव्य सम्बन्धी महत्ता पर बहस चलते चलते महाराज के मन-मन्दिर में एक विचार ज्ञान की रश्मि के रूप में कौंध उठा।

वे बोले 'क्या कोई आधुनिक कवि 'महाभारत' सरीखा उत्कृष्ट आधुनिक जीवन सम्बन्धी विशाल महाकाव्य नहीं रच सकता ? क्या प्राचीन युग में ही काव्य के लिये उपयुक्त उर्वरा मातृभूमि थी क्या आज की परिस्थितियां काव्य सृजन के उपयुक्त नहीं हैं ? क्या आज वह गौरवमयी काव्य परम्परा विलुप्त हो गई है ?'

विद्या व्यसनी महाराज के यहां राज्य के सब चुने हुए मनीषी, विद्वान् और कवि राज्याश्रय पाते थे। उन्हें राज्य की ओर से साहित्य-सृजन की प्रेरणा तथा हर प्रकार की सुविधाएं प्राप्त होती थीं। महाराज रामसिंह को अपने विद्वद् समाज पर बड़ा गर्व था।

महाराज ने पीड़ा भर ग्राहत स्वर मे फिर कहा—

प्राचीन युग म हमारे यहा ग्रनेक उद्भट महाकवि हुए ह कस परिताप का विषय है कि ग्राप जसी प्रख्यात् विद्वत्त मडलो म मर राज्य के कवियो म प्राचीन काव्य–परम्परा को ग्रक्षुण्ण रखन वाला कलम का धनी कोई नही है? हाय, हमारे युग मे कोई भी कविता की मशाल जलान का तैयार नही है। बोलिय, क्या ग्राप सबके रहते वह प्रशस्त पूज्यनीय परम्परा विलुप्त हो जायगी ?'

उनके शब्द ग्रतमन की गहराई से उठ रहे थे। ऊपर लिखा प्रश्न रह रह कर बार बार उनके ग्रत स्थल मे उठ रहा था। जब कोई न बोला तो उनका मुखमण्डल मुरझान लगा। व ग्रपनी पीडा पूरा रूप स शब्दो मे ग्रभिव्यक्त नही कर पा रहे थ। ग्रनेक भाव उनके चेहर पर चलचित्र के पटल पर ग्रा रहे थे। उत्तर पाने की मुरझाई हुई ग्राशा से व पुन ग्रपन विद्वानो की ग्रोर निहारने लगे।

नहीं महाराज! वह प्रशस्त काव्य परम्परा तो कभी सूखन वाली नही है ग्रापके रहते वह क्या कभी सूख सकती है? उचित प्रेरणा ग्रौर नया प्रोत्साहन मिल तो ग्राज भी वह काव्य धारा उवरा है ।

यह कौन बोल रहा है? ग्राश्चय म चारो ग्रोर देखते हुए महाराज ने पूछा।

फिर ग्रावाज ग्राई—'यह है ग्रापका कृपापात्र चारण सूयमल्ल!

'ग्रो, तुम सूयमल्ल मिश्रण! चारणोचित प्रशस्त स्वाभिमान के प्रतीक खूब तुम्हारे इन शब्दो स मुझे सा त्वना मिली है ग्राखिर कोई बोला तो? किसी न चुनौती स्वीकार तो की?'

सूयमल्ल बोल 'सच कहता हू महाराज हि दी कवियो की प्राचीन शानदार परम्परा ग्राज भी सूखी नही है ग्राज देश की परिस्थितिया विदेशियो द्वारा भारत की गुलामी शोषण, लम्बी पराधीनता ग्रौर उगता उठता स्वात त्र्य सग्राम यह सबकुछ ये परिस्थितियाँ काव्य–सृजन के लिए ग्रनुकूल है।'

व चुप हो गय।

'तुम चुप कैस रह गय?

महाराज मैं कोरी बात हो नहीं करता?

तो क्या तुम महान् विपुल ग्रन्थ महाभारत जैसा वृहत् महाकाव्य इस युग म किसी ग्राधुनिक विषय ग्रौर इन नई स्वात त्र्य ग्रादोलन वाले विषय पर लिख सकते हो? उतना ही विशाल काव्य सर्वोत्कृष्ट काव्य गुणों स ग्रलकृत ममस्पर्शी ।

'ग्रनन्य महाराज साहब! महाकाव्य वैसा तो क्या उसस भी बडा विविध–विषय–विभूषित लिखा जा सकता है यदि ।

'क्या मतलब? महाराज की जिज्ञासा मुखर हो उठी।

'यदि आपकी निरन्तर मिलने वाली प्रेरणा और माँ सरस्वती की कृपा बनी रहे तो कोई कारण नहीं कि वैसा ही उत्कृष्ट महाकाव्य न तैयार हो सके।'

तो क्या तुम अपनी बात गंभीरता से कह रहे हो? क्या तुम मेरी चुनौती स्वीकार करते हो? क्या ऐसी ही विशाल आधुनिक जीवन परिस्थितियों पर वीर भाव से परिपूर्ण महाकाव्य लिख सकते हो कि पढ़कर विद्वत् समाज चमत्कृत रह जाए?'

'निःसंदेह लिख सकता हूँ, लेकिन एक शर्त पर ?'

महाराज ने आशा और उत्साह भरे स्वर में कहा, 'कवि सूर्यमल्ल क्या शर्त है वह? हम उसे हर तरह सहायता सहयोग देकर पूरी करेंगे काव्य गगन में नये सूर्य का उदित होने का। क्या चाहिए?'

'धन नहीं लेकिन सम्बन्धी सुविधाएँ। महाराज मैं झूठा घमण्ड नहीं करता पर लिखने में कलम चलाने में मुझे आनन्द आता है इन उँगलियों ने तलवार उठाई है लेखनी भी आवश्यक होने पर कभी उठा लेता हूँ मैं दस हजार पृष्ठों में एक वृहत् आधुनिक परिस्थितियों का चित्रण करते हुए तैयार कर दूँगा पर गणेशजी की तरह मुझे कोई तेज लिखने वाला चाहिए मैं तो चारण हूँ गाना मेरा काम है मैं जो भी मस्त होकर गाता हूँ वही कविता बही जाती है। पता नहीं कब माँ सरस्वती मेरे स्वर में बोलने लगती है। मैं तो गा गा कर काव्य की पंक्तियाँ बोलता जाऊँगा और महाकाव्य तैयार हो जायगा मेरे हृदय में भावों का प्रवाह इतना तीव्र है कि मैं उस तेज गति से उसे लिपिबद्ध करने में असमर्थ हूँ।'

आश्वस्त होकर महाराज ने उत्तर दिया, ठीक है! तुम्हें राज्य सरकार की ओर से शीघ्र लिखने वाले कई लिपिक दिये जायेंगे। तुम आज से ही उस महाकाव्य के सृजन की उर्वर मनोभूमि बना लो। मेरी आन एक राजपूत की आन सम्मान रह जाना चाहिए। लोग कहें कि बूँदी ने भी किसी अमर महाकाव्यकार को जन्म दिया है। हम, हमारी प्रजा और पूरे प्रान्त को तुम पर गर्व हो। भरपूर इनाम सुरक्षित है तुम्हारी साहित्यिक सेवाओं के लिए।'

यह चर्चा तो दरबारी थी किन्तु महाकवि ने उस चुनौती के रूप में स्वीकार किया।

और फिर ?

व्यासपीठ पर आसीन हो सूर्यमल्ल ने सचमुच एक नहीं, कई हजार पृष्ठों में महाकाव्य के पूरे सौन्दर्य सर्वोत्कृष्ट गुणों, तत्कालीन परिस्थितियों के अनुकूल अपना काव्यग्रन्थ 'वंश भास्कर' नामक वृहत् ऐतिहासिक महाकाव्य लिख डाला। ज्यों ज्यों कवि वीरोचित उल्लास से गाते जाते त्यों त्यों उस महाकाव्य का विस्तार बढ़ता गया, काव्यधारा गङ्गा की तरह अजस्र भाव से बढ़ती रही जिसने उसकी पंक्तियाँ गुनगुनाईं वही वीरोचित भाव से झूम उठा। आश्चर्य में पड़ गया।

वंश भास्कर' महाकाव्य की परम्परा महाभारत' की ही रही है, किन्तु यहाँ आशुलिपिकार गणपति नहीं थे। उनके स्थान पर आठ राजकीय लिपिकार एक साथ

कवि के गीत लिखने बैठते थे और महाकवि अबाध गति से उस महाकाव्य के भा तत्कालीन स्वातन्त्र्य संग्राम की परिस्थितियों का चित्रण करते हुए लिखवाते जाते थे। घण्टों यह काव्य-निर्माण चलता रहता। जो शब्द उन्होंने एक बार मां बर बोल दिये वे फिर दुबारा न दोहराते थे। घण्टों यह महा साहित्यिक कार्यक्रम चलता रहता था। जब एक पाण्डुलिपिकार न लिख पाता तो दूसरा लिखना आरम्भ कर देता फिर तीसरा चौथा । यहाँ तक कि उनकी उंगलियाँ जवाब देने लगतीं। सूर्यमल्ल फिर पाण्डुलिपि का संशोधन करते काट छांट करते शब्दों में उचित परिवर्तन परिवर्द्धन करते सायंकाल तक गाने वाला धारण, लिखने वाले पाण्डुलिपिक और फिर संशोधन करने वाले हाथ—सभी टूट हारे से लगते।

सबको थकते देखकर सूर्यमल्ल अनायास ही कह बैठते 'माँ सरस्वती! बस अब कृपा करो।'

और इस प्रकार फिर महाकाव्य-लेखन का सिलसिला दूसरे दिन के लिए स्थगित कर दिया जाता। 'वंश भास्कर' को लिखवाने का यह कार्यक्रम बहुत दिनों तक चलता रहा। इतने वर्ष बीत गये, फिर भी सूर्य की तरह साहित्याकाश में यह ग्रन्थ और उसके लेखक चमक रहे हैं। यह महाकाव्य डिंगल साहित्य की एक अविस्मरणीय मणि है। यह ऐतिहासिक प्रसंग भुलाये नहीं भूलता। बूंदी के राजमार्ग पर एक शताब्दी में यह कहा जाता है कि महाकवि सूर्यमल्ल ने सरस्वती को सिद्ध किया था। वाग्देवी ने स्वयं उनकी जिह्वा का सत्कार किया था।

जो भी हो षट्-भाषा ज्ञाता महाकवि सूर्यमल्ल डिंगल साहित्य के निष्णात पंडित तत्त्वबोध के मूर्तिमान स्वरूप, इतिहास के मर्मज्ञ चौदह विद्या के निधान चौंसठ कला निपुण, मीमांसक और काव्यशास्त्र योगशास्त्र न्यायशास्त्र व्याकरण शकुनशास्त्र के विद्वान थे— इसमें सन्देह नहीं।

वह हिन्दी की रीतिकालीन कविता का अंतिम चरण था। उनका जन्म सन् १८१५ ई० में हुआ था उधर कवि पद्माकरजी १८३३ में परलोकवासी हुए थे। इस प्रकार वे पद्माकर और ग्वाल कवि के समकालीन थे। उर्दू के मिर्ज़ा गालिब बंगला के रवीन्द्र और माईकेल मधुसूदन दत्त उनके समकालीन काव्य-विभूतियां थीं। सूर्यमल्ल हिन्दी के महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय कवि थे। सन् १८५७ के समय रजवाड़ों के शासकों को उन्होंने देश की एकता और अखण्डता बनाये रखने और विदेशी शक्तियों का साहस से मिल जुल कर मुकाबला करने को पत्र लिखे थे। उनमें उनकी देश भक्ति स्पष्ट होती है। वे स्वातन्त्र्य युद्ध के सेनानी थे। स्वदेश भक्त थे। राष्ट्रीय भावना स्पष्ट करने की दृष्टि से उन्नीसवीं सदी के प्रथम राष्ट्रीय कवि माने जा सकते हैं। उन्होंने देश में आजादी के प्रति चेतना उत्पन्न की थी। राजस्थान वीरभूमि रहा है। यहां के वीरों की अमर गाथाएं युग युग से कवियों को राष्ट्रीय चेतना युक्त काव्य-सृजन के लिए प्रेरित करती रही हैं। उनकी वीरता साहस शौर्य, युद्ध कौशल और धर्म की वीर गाथाएं आन मान वाले कवियों के प्रिय विषय रहे हैं।

राजस्थान मे वीरो की युद्ध स्वस्थ परम्पराए है। उदाहरण के लिए व कभी युद्ध म पीठ नही दिखात। व यह मानत रहे हैं कि अपनी मातभूमि को कभी दूसरे के कब्ज म नहीं जान देना चाहिए। यदि किन्ही कारणो म वह विदेशियो क कब्ज मे पहुँच भी जाय तो हर मूल्य पर उस वापिस लेना चाहिए। ऐसी ही परिस्थितिया अभी भी हैं। अग्रेजो स हमने देश को मुक्त कराया है। स्व–निर्माण क प्रश्न सामन है। चीन, पाकिस्तान बगलादेश श्रीलका आदि हमारी भूमि पर गिद्धदृष्टि लगाय हडपने को तत्पर हैं। चीन तो बहुत सी भूमि छीन भी चुका है। पाकिस्तान न बहुत सा कश्मीर का भाग दबा लिया है। सूयमल्ल का सन्देश यह है कि हमे हर बलिदान देकर शत्रु स अपनी भूमि वापिस लेनी चाहिए। शत्रु को परास्त करने के लिए सब रजवाडो, पार्टियो, शासको, देशवासियो, नेताओ को अपने सकुचित स्वार्थ त्याग कर देश का सामूहिक हित देखना चाहिए। दुश्मन को पराजित करन के लिए हम सबको एकजुट होकर युद्ध के मदान मे उतरना चाहिए। इस एकता और अखण्डता की महिमा सूयमल्ल के काव्य और गदर के समय लिखे गय पत्रो म स्पष्ट होती है। व साम दाम दण्ड भेद हर उपाय से देशी राजाओ को एक करना चाहते थे। राजपूतों मे बर का बदला लेन की परम्परा चली आई है। इस सन्दर्भ मे वे लिखत हैं—

रण खती रजपूत री, वीर न भूले बाप
बारह बरसा बाप री लहै वैर ककाल।

उनकी 'वीर सतसई राष्ट्रीय नवचेतना का प्रारभ माना जा सकता है। इस काव्य पर तत्कालीन राष्ट्रीय चेतना देश-प्रेम, स्वदेश भक्ति आदि तत्त्व मुखरित हुए हैं। डा आलमशाह खान के शब्दो मे इस वीर काव्य को निश्चय ही सूयमल्ल की कीर्ति का कलश और मरु–सरस्वती के मदिर का उत्तुग शिखर कहा जा सकता है। हम मुक्तक रचना म ठेठ राजस्थानी जन–जीवन की शोणितस्वात् रेखाए यो उभर आई हैं कि देखन पर रण–धवल राजस्थान का पूरा मानचित्र आखो में भर जाता है। इसम कही स्वामी के नमक उजालन की उत्कट आकाक्षा (वीर० ८) है तो कही धमयुद्ध ठानने की तत्परता (वीर० १४७–१४६) कहीं ज्वाला का देखकर हुलसित होने की सीख है (वीर० १५) तो कही शस्त्र को देखकर झपट पडने की नसीहत (वीर० ६४) कही मरण पव का उल्लास है (वीर० ५०) तो कहीं दूध का लजाने पर क्षोभ (वीर० ५५) तो कही कायर पुरुष के लिए वीरागना क नीचे झुक नयन (वीर० ११६) कही रणक्षेत्र मे कराहत हुए परिजन का जल न पिला सकने की बबसी (वीर० २०७) कही अचल चुराकर युद्ध के घोडे की ओर चल पडने वाला बाँका वीरत्व है।

सक्षेप मे सूयमल्ल न देश की राष्ट्रीय कविता–धारा, राष्ट्रीय चेतना को मुख रित किया। उनका काव्य राष्ट्रीय काव्य कहा जा सकता है और उसका मूल स्वर शौय है। अपने युग मे देशभक्ति जन एकता और राष्ट्रीयता की जो परम्परा प्रवर्तित की थी, वह बाद मे निरन्तर गतिशील रही। उनकी 'वीर सतसई के दोहे तब लिखे गये थे जब राष्ट्र उद्बुद्ध होकर विदेशियो से सघष करन के लिए सन्नद्ध था।

राजस्थानी मानक रूप के प्रस्तोता-सूर्यमल्ल मिश्रण

डॉ० कन्हैयालाल शर्मा

सूर्यमल्ल मिश्रण का मूल्यांकन अधिकांश में कवि रूप में ही हो पाया है। उनके 'वीर सतसई' एवं 'वंश भास्कर' ग्रंथों पर तो विशेष विवेचन हुआ है और 'रामरजाट', 'बलवद्विलास', 'छन्दो मयूख', 'सतीरासो' और फुटकर कवित्त-सवैयों पर सामान्य चर्चा हुई है। उनकी रचनाओं के भाषा-पक्ष पर विचार करते समय उनके भाषा-विषयक विस्तृत ज्ञान को सराहा गया है। 'सूर्यमल्ल जी भाषाओं के बड़े अच्छे जानकार थे और उनको मालूम था कि वे वंश भास्कर को किस भाषा में लिख रहे हैं।' इसलिए 'प्रसंगों के प्रारंभ में ही प्रायः व्रजदेशीया-प्राकृत मिश्रित भाषा, शुद्ध प्राकृत, संस्कृत, शुद्ध व्रजभाषा, अपभ्रंश मिश्रित मरुभाषा आदि शीर्षक देकर आगे पद्य लिखे हैं।'[1] वंश भास्कर में 'प्रायो व्रजदेशीया प्राकृत मिश्रित भाषा' का ही प्राधान्य है। 'वीर सतसई' की भाषा इससे भिन्न है। वह है 'उत्तरकालीन डिंगल' जो बोलचाल के अधिक निकट है।

उपर्युक्त प्रतिपादन से स्पष्ट हो जाता है कि सूर्यमल्ल बहुभाषाविद् समर्थ कवि थे और वे अपनी रचनाओं में अपने भाषा-ज्ञान की स्पष्ट छाप छोड़ते रहे हैं। वे भाषा-विशेष का प्रयोग सम्पूर्ण जागरूकता के साथ करते रहे। इसके मूल में उनका विभिन्न भाषाओं का सुव्यवस्थित अध्ययन रहा। इसी का परिणाम यह था कि उन्होंने

---

१ सूर्यमल्ल मिश्रण-वीर सतसई (सं० पतराम गौड़ प्रभृति) की भूमिका, पृष्ठ ६५

संस्कृत के सुस्थापित व्याकरण-ग्रन्थों के होते हुए भी 'धातु रूपावलि' की रचना कर डाली और उसे अपनी व्यवस्था प्रदान की। अपने शैशव काल मे ही उन्होंने संधि-ज्ञान प्राप्त कर लिया था और १२ वर्ष की अवस्था मे तो वे पद-ज्ञान मे प्रवीण हो गये थे—

शिशु चरितरत प्राक्यद्विषड्ढायनोऽपि ।
प्रतिपदमधिकृतोऽह शाब्दबोध प्रवीण ।

वंश भास्कर प्रथम राशि, प्रथम मयूख पृ० १५
(वीर सतसई की भूमिका मे उद्धृत)

सूर्यमल्ल मिश्रण अपने काल के सर्वाधिक जागरूक व्यक्ति थे। कवि कर्म के अतिरिक्त वे अपने काल के जीवन-मूल्यों राजनीतिक घटना-चक्र, समाज संस्कृति आदि पर भी सजग दृष्टि रखते थे। उनके जीवन-काल मे देश मे स्वतन्त्रता की प्रथम शक्तिशाली लहर उठी थी। तब वे राजाश्रित कवि थे और अपनी कलम राज-परिवार एवं जागीरदारों के प्रशस्ति-लेखन पर चला रहे थे। जब उन्हे स्पष्ट संकेत मिले कि देश मे स्वतन्त्रता का बिगुल बज चुका है, देशवासी अंग्रेजी शासन को उखाड़ फेंकने के लिए उठ खड़े हुए हैं और अनेक स्वतन्त्रता-सेनानी मर मिटने के लिए आगे बढ़ चुके हैं तब उनका प्रसुप्त स्वतन्त्रता-सेनानी जाग उठा। उन्होंने अपना कर्त्तव्य पक्ष निश्चित कर लिया। उन्होंने तलवार तो नहीं उठाई पर उससे कहीं अधिक शक्तिशाली शस्त्र उठाया और वह थी उनकी कलम। उसके द्वारा उन्होंने अनेक स्वतन्त्रता-सेनानियों को जगाया और उन्हें दिशा दी। यह काम किया उन्होंने 'वीर सतसई' के सशक्त दोहे लिखकर और अनेक पत्रों द्वारा। जिन्हे उन्होंने पत्र लिखे वे राजस्थान एवं मध्यप्रदेश के ऐसे वीर थे जो कुछ कर गुजरना चाहते थे और दिशा-बोध की तलाश मे थे। सूर्यमल्ल ने इस गुरुतर दायित्व को समझकर कुशल नेतृत्व की महती भूमिका निभाई।

तब उन्हें ऐसी भाषा की आवश्यकता थी जो सहज, सरल स्पष्ट समर्थ एवं सुस्थापित हो और उनका संदेश सम्बन्धित व्यक्तियों तक सम्पूर्ण रूप से पहुंचा सके। राजस्थान एवं मध्यप्रदेश मे एक समर्थ गद्य भाषा तब प्रचलन मे थी जिसका प्रयोग तत्कालीन राजपरिवारों, राज दरबारों मे पत्र व्यवहार, पट्टे परवानों मे हो रहा था। वह शिष्ट समाज मे भी सम्मानित थी और ख्यात, वात, वचनिका आदि गद्य विधाओं मे अपना रूप संवारती हुई अवतरित हुई थी। उसमे समग्र संप्रेषणीयता की समस्त विशेषताएं विद्यमान थी। जिसे राजस्थान मे एवं मध्यप्रदेश के सभी विद्वान सहज रूप मे समझ सकते थे और जो माध्यम भाषा के रूप मे सम्मानित थी। डा० ग्रियर्सन ने अपने भाषा-सर्वेक्षण मे इसी के प्रसार को राजस्थान के बाहर 'मालवी' एवं 'निमाड़ी' रूप मे पाया था। सूर्यमल्ल मिश्रण ने अपनी काव्य भाषा को इसके लिए उपयुक्त नहीं समझा, क्योंकि गद्य भाषा मे वे काव्य भाषा के समान नया प्रयोग नहीं करना चाहते थे। वे सुस्थापित एवं परंपरा से प्राप्त मानक भाषा रूप को अपनाकर चलने मे उभय पक्षीय सहज बोधगम्यता से परिचित थे। अतः उन्होंने अपने पत्रों मे राजस्थानी के मानक रूप का प्रयोग किया।

सूयमल्ल मिश्रण बहुभाषाविद् एवं व्याकरण के पंडित थे। उन्होंने अध्ययन काल में ही संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश के व्याकरणों का अध्ययन किया था। जब वे राजस्थानी गद्य का पत्र व्यवहार में प्रयोग कर रहे थे तब उस भी व्याकरण-सम्मत, परिष्कृत एवं मानक रूप प्रदान करने की इच्छा प्रथम बन कर आई होगी। राजस्थानी उनकी मातृभाषा थी और परम्परा से प्राप्त काव्य भाषा भी थी। उसमें अनेक रूपता थी और चारण कवियों द्वारा उसके शब्दों को विकृत करके प्रयोग करने की परम्परा थी। गद्य भाषा लोक-व्यवहार में उद्भूत होती है और समय के द्वारा उसका परिष्कृत रूप प्रयुक्त होता है। सूयमल्ल ने अपना पत्रों में पूर्वापर स्थितियों को समझकर उसका प्रयोग किया। प्रतिभा-सम्पन्न व रचनाकारों के द्वारा इसका अनायास ही हो जाता है और व भावी पीढ़ी का दिशा बोध कर जाते हैं।

सूयमल्ल मिश्रण का मानक राजस्थानी भाषा को सब प्रथम निरूपणीय किया गया है कि वह भारतीय संस्कृति की अखण्ड स्मृति को स्थापित करने के लक्ष्य को सम्मुख रखकर चली है। यद्यपि भारतीय संस्कृति एवं संस्कृत भाषा परस्पर पर्यायवाची बन गई हैं अतः उनकी भाषा में संस्कृत शब्दों का तत्सम रूप में स्वीकार करके चलने का आग्रह है। यद्यपि भाषा में शुद्ध तत्सम शब्दों का प्रयोग होता है पर उसमें उन्हें गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं हो पाता। अतः वे अल्प सख्यक ही रह जाते हैं। किसी भी भाषा में तत्सम एवं तद्भव शब्दों का ही प्राधान्य होता है। तत्सम शब्दों का विकृत करके लिखने में व शुद्ध तत्सम नहीं रह जाते हैं व जब शिष्ट समाज द्वारा व्यवहृत किये जाने पर ही भाषा-विशेष की सम्पत्ति बनते हैं। शब्दों को भाषा-विशेष की प्रकृति के अनुसार ढालने के नाम पर उन्हें विकृत करना और विशिष्ट शुद्ध तत्सम शब्दों को उसमें स्वीकार करना दो भिन्न दृष्टियाँ हैं। प्रथम में कृत्रिमता है और द्वितीय में सहजता है। सूयमल्ल राजस्थानी में तत्सम शब्दों का आवश्यकतानुसार अपनाने के पक्षधर थे उन्हें विकृत करना उन्हें रुचिकर नहीं था—

और शरीर की नित्यचर्या मे निपट सावधानी रखावसी। या शरीर ही सब कार्यों का आधार छै सब बाधा ता तणा सो भी तुच्छ गिण्या जाव छ सो तो ठीक छ नहीं तो म्हाने भी निश्चित भरोसो छ परन्तु ऊ सब बिना और समय म सदा ही या शरीर प्रयत्नपूर्वक रक्षा करबा को छ।

(ठा पूर्नसिंह जी (पापल्या) को पोष शुक्ल प्रतिपदा स १९१४ को लिखा पत्रांश)[1]

आज राजस्थानी म वतनियाँ ने अनेकमुखता अपना रखी है— संस्कृति/संस्क्रति/सँस्क्रति सिस्टी/स्रिस्टी/सृष्टी, कृति/क्रिति, साहितिक/साहित्यिक आदि सकडो शब्द अपने उनभ भविष्य के विषय में चिंतित है। सूयमल्ल इस वतनी-भ्रम मे मार्ग दर्शन कराते हैं। वे कहते हैं कि शब्द का तत्सम रूप ही ग्राह्य बनना चाहिए। तत्सम

---

१ पतराम गौड द्वारा सपादित 'वीर सतसई' मे उद्धृत पृष्ठ ३५

शब्दों का बहुधा प्रयोग करके हम अपनी भाषा को समृद्ध, नवीन व जोड़ते हैं और उसे अन्य भारतीय भाषाओं के निकट ले जाते हैं। देश की अनेक भाषाओं ने—हिन्दी, बंगला आदि ने तत्सम शब्दावली को अपना कर उन्हें समृद्ध बनाया है। तत्सम शब्दों का राजस्थानी प्रकृति में शासन की प्रवृत्ति अपनी-भ्रम उत्पन्न करती है और लेखक-पाठक के लिए दुरूहता।

सूयमल्ल भाषा की एकरूपता के पक्षधर थे। वे अनेक भाषाओं के ज्ञाता होते हुए भी अपनी गद्य-भाषा राजस्थानी को मिश्रभाषा नहीं बनाते। शब्द-भण्डार तो संस्कृत, उर्दू-फारसी, ब्रज आदि के शब्दों से भर लेंगे पर व्याकरणिक रूप तो राजस्थानी के ही होंगे। शब्द-भंडार किसी भाषा की प्रकृति का इतना सा संकेत देता है कि उस भाषा में अनेक भाषाओं के शब्दों को अपनाने एवं उन्हें पचाने की क्षमता है, पर उसकी मूल प्रकृति तो उसकी व्याकरणिक संरचना द्वारा ही निर्धारित होती है। मूल-प्रकृति का निर्वाह करना सूयमल्ल को प्रिय लगता है, इससे उनके भीतर विद्यमान वैयाकरण परितुष्ट होता है। अतः राजस्थानी में प्रचलित रूप-वैविध्य में से सुस्थापित रूपों का चयन कर उन्हें ही वे अपनाते हैं। जहाँ अनेकरूपता उनके गद्य में दिखाई देती है वह वस्तुतः अनेकरूपता नहीं है अपितु 'परिपूरक वितरण' अवस्था है जो संसार की सभी विकसित भाषाओं में मिलती है। केवल एस्पिरेन्तो जो कृत्रिम भाषा है, अपवादों से रहित भाषा है।

नीचे सूयमल्ल मिश्रण द्वारा सं० १६०० से १६१५, १६२४ के मध्य में लिखे गये पत्रों की भाषा के आधार पर उनकी भाषा की विशेषताओं पर विचार किया जा रहा है, जिनका उपयोग वीर सतसई की भूमिका में विद्वान् संपादकों ने किया है—

१ स्वरों की संख्या तो परम्परागत है, 'ऐ' एवं 'औ' के उच्चारण में अन्तर आया है। शास्त्रों में मिलने वाला 'ऐ' विलम्बित 'अै' रूप में उच्चरित होता है। शब्द में प्रायः इसका प्रयोग प्रायः नहीं मिलता। 'ऐ', 'बरै' में विलम्बित अ मिलता है। 'औ' एवं 'ओ' के उच्चारण का अन्तर मिटता सा दीख पड़ता है। अतः वालो/वालौ की वैकल्पिक वर्तनियां मिलती हैं। 'ओ' ही स्पष्ट उच्चरित होता है।

२ इ स्वर का प्रयोग शब्द में सर्वत्र मिलता है—और वह शुद्ध रूप में उच्चरित होता है—इंग्रेज/इंगरेज होइ।

३ ऋ स्वर का तो एकान्त अभाव है पर ऋ स्वर तत्सम शब्दों में मिलता है। इसका उच्चारण रि है—तृण वृत्तान्त।

३ A सानुनासिक स्वरों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में मिलता है—तीनों साहैं।

४ 'ङ' अनुनासिक व्यंजन का अस्तित्व केवल संयुक्त व्यंजन में मिलता है पर 'ञ' का प्रयोग किसी भी रूप में नहीं मिलता। लिखावट में '—' लिपि-चिह्न उसका स्थानापन्न बना है और उच्चारण में वह 'न्' बन गया है—पंच-पन्च।

५ 'ड़' एवं 'ढ़' उत्क्षिप्त व्यंजनों ने अपना स्पष्ट अस्तित्व बना लिया है, और ये शब्द के मध्य या अन्त में प्रयुक्त होते हैं—लड़ चढ़ि

६ 'ण' व्यंजन का प्रयोग बाहुल्य है और वह सं० 'न' का स्थानापन्न बना है। संयुक्त व्यंजन में इसका उच्चारण 'न' है, पर असंयुक्त व्यंजन रूप में वह शुद्ध रूप में उच्चरित होता है— खण्ड, छावणी।

७ 'श' व 'ष' शिन ध्वनियों का प्रयोग तत्सम शब्दों में मिलता है। तद्भव शब्दों में 'स' तीनों सं० शिन ध्वनियों का स्थानापन्न बना है— आसी, चालीस सोभि।

८ 'म्ह' 'न्ह' ल्ह महाप्राण व्यंजनों का विकास स्पष्ट रूप में दीख पड़ता है। ये शब्द के प्रथम अक्षर में प्रयुक्त होते हैं— म्हाको, न्हावा ल्हाडक्यो।

९ पार्श्विक उत्क्षिप्त 'ल' व्यंजन ने अपना स्पष्ट स्थान बना लिया है और यह असंयुक्त 'ल' का स्थानापन्न बना है— टलि मल। इसका प्रयोग शब्द के प्रारंभ में नहीं मिलता।

१० महाप्राणता शब्द में मध्य मिलता है— कोढि रासबा, मूढा उठ।

११ प्रयत्न-लाघव के कारण ध्वनि-सकोच की प्रवृत्ति स्पष्ट रूप में उभरी है— लिम्यो ग्या जाण्यो क्या (क्रिया)

१२ संज्ञा शब्द व्यंजनांत एवं स्वरान्त होते हैं। जहां वे स्वरान्तता है वहां उनकी पुल्लिंग-एक वचनता ओकारान्तता से और स्त्रीलिंग-एक वचनता ईकारान्तता से प्रकट होती है। आकारान्तता एवं ईकारान्तता की यह प्रवृत्ति सर्वनामों विशेषणों, सम्बन्ध कारकीय परसर्गों, कृदन्तीय रूपों में भी दीख पड़ती है।

बहुवचन बनाने के लिए पुल्लिंग ओकारान्त रूप — आ प्रत्यय अपनाते हैं और स्त्री लिंगीय ईकारान्त रूप —'आं' प्रत्यय।

१३ शब्द मूल रूप से पुल्लिंगवाची होते हैं और स्त्रीलिंग शब्दों का निर्माण स्त्रीलिंगीय प्रत्ययों द्वारा है, जिनमें से प्रमुख है— 'ई' एवं 'अण'।

१४ कारक-रचना में विकारी शब्दों के साथ परसर्ग जोड़ जाते हैं। कर्ता कारक का परसर्ग प्रति 'नै' है कर्म सम्प्रदान के कू है ड, करण-प्रति करण अपादान के मूं सों सैं सम्बन्ध के का रा, री अधिकरण के में माहि मालि है। सम्बन्ध कारकीय परसर्गों में— 'र' युक्त परसर्गों का अभाव उल्लेखनीय है— म्हाको राजा को।

१५ सम्बन्ध वाचक सर्वनामों में जोन 'जीको' तथा 'ज्यानै' 'ज्याको' रूप आकर्षक हैं। नित्य सम्बन्धी सर्वनाम सो के तीनै तीको रूप आकर्षक है। त्याहि वाहैं (उनको) रूप भी आकर्षक है।

१६ सप्रत्यय विशेष्य से अन्वित रहते हैं। यह अन्विति लिंग-वचन-स्तर पर होती है।

१७ अस्तिवाचक क्रिया के सामान्य वर्तमान एवं सामान्य भूत के रूप है— छ, छो था। अन्य क्रियापद हो धातु से सम्पन्न होते हैं।

१८ सामान्य वर्तमान हिन्दी से भिन्न सं० 'लट' लकार से विकसित है। इसका प्रत्यय 'अ' है। अनेक अवस्थाओं में इसका दुहरा प्रयोग मिलता है— आवैं छ करै छ जिनसे 'आवैं' एवं 'करै' की अर्थ बोधकता ही प्रकट होती है।

१६ सामान्य भविष्यत् का प्रत्यय– 'स्' है और सबत्र– 'ई' प्रत्यय के साथ प्रयुक्त इसका यह रूप अविकारी है– तू जासी, म्हा जासी। 'गा' प्रत्यययुक्त रूप प्र है– राखागा, आणोगा।

२० सामान्य भूतकाल के लिए स० भूतकालिक कृदन्तों से विकसित क्रिया रूप है– चाल्यो दियो। पर 'दीन्हो' जैसे रूप भी मिलते हैं।

२१ वर्तमान कालिक कृदन्त का प्रत्यय– 'त्' है। क्रियार्थक संज्ञा का –ण्' और कालिक कृदन्त का –'य्'। पूर्वकालिक कृदन्त –'इ' प्रत्यय से सम्पन्न होता कढि, चलि, और –'कर, –'कै' म भी।

२२ संयुक्त क्रियापदों का प्रयोग बहुलता से मिलता है। संयुक्त क्रियापद भी सम होते हैं इनमे भाषा-सामर्थ्य बढ़ती है– लिखि दियो, विचि गयो कढि भा प्रथम प्रकार के पूर्वकालिक कृदन्त इनमे पूर्वपद बनाते हैं।

२३ अवार, अठी, उठी उठा पछै, जद, क्यूंकि तीपर, इनके कुछ प्रमुख अव्यय

२४ निषेधवाचक वाक्यो मे निषेधवाचक अव्यय का प्रयोग वाक्यान्त मे हो सकसी नही, मिले नही, सुणवाई करै नही। अन्य प्रकार की वाक्य-रचना से मिलती जुलती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सूयमल्ल मिश्रण की भाषा मे विश्लेष का विकास हिन्दी के समान मिलता है। हिन्दी एव राजस्थानी के वर्तमान रूप का एक ही काल मे हुआ। हिन्दी का यह सौभाग्य रहा कि उसे समर्पित लेखको गति से आगे बढ़ाया और राजस्थानी मे सूयमल्ल मिश्रण के बाद गद्य लेखन-रिक्तता-सी आ गई। और वे राजस्थानी गद्य परम्परा के अन्तिम दीप शिखोदय रह गये। बाद म जब नये सिरे से गद्य रचना आरम्भ हुई तो उसके लेखक परम्परा जुड़े और सुविधानुसार अपनी अपनी बोलियों म गद्य-रचना आरम्भ कर दी। यदि मल्ल मिश्रण क गद्य को आधार बनाकर रचना क्रम को अपनाते तो अनेकरूप वर्तमान सकट प्रस्तुत नहीं हो पाता और भाषा मे विखराव नही आ पाता।

□

महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण के काव्य में नारीतत्व

डॉ० मनोरमा सक्सेना

'मानव विधाता की सर्वोत्कृष्ट कृति है। नारीतत्व व पुरुषतत्व के समीकरण से सृष्टि की सरंचना हुई। अन्य काव्य में प्रकृति पुरुष व नारी सभी, अभिन्न उपादान बने। पुरुष कर्मस्वरूप शक्तिस्वरूप है तो नारी उसकी प्रेरणा स्वरूप रही है। पुरुष व नारी दोनों ही एक दूसरे के बिना अपूर्ण हैं। सम्पूर्ण विश्व के साहित्य का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि सभी साहित्यकारों ने नारी को अपनी अपनी नजरिए' से अपनी दृष्टि से देखा है।

यदि वाल्मीकि जी ने उस नारी को आदि शक्ति सीता के रूप में देखा है तो कालिदास के काव्य में वह नारी शकुन्तला, अपर्णा व सतीरूपा पार्वती बनी है। रविबाबू उस नारी की छवि को देख कह उठे हैं— O Women ! thou are half dream and half reality शरद ने उस नारी को पारो व चन्द्रमुखी के त्याग — सहनशील स्वरूप में देखा, वीर गाथा काल में नारी युद्धों का कारण रही। तुलसी ने धीरज धरम मित्र अरु नारी कह कर नारी को धर्म के समकक्ष ठहराया है। कबीर के लिए नारी मोह की खान व साधना में बाधा रही। सूर ने नारी का वात्सल्य स्वरूपा हृदय देखा। बिहारी की दृष्टि केवल नारी के अनियारे दीरघ दृगन को ही देख पाई।

सूर्यमल्ल मिश्रण ही एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने नारी को सच्चे अर्थों में चित्रित करने का सफल प्रयास किया है। उनकी नारी न तलवार से अधिकार कर लेने वाली सचल सम्पत्ति थी न माया की प्रतीक न वासना की पुतली। यह नारी है अपने राष्ट्र

के लिए समर्पित रहने वाली पत्नी जो क्षात्र धर्म निभाने के लिए सहर्ष वीरपति को रण मे भेजती है। एक जागरूक माँ है यह नारी जो अपनी सन्तान मे बचपन से ही मातृ भूमि पर मर मिटने के सस्कार भर देती है। यह नारी एक ऐसी बहिन भी है जो अपने भाइ के राखी बाधते समय भी उससे अपनी मातृभूमि की रक्षा का वचन मांगती है।

राजस्थान की धरती बलिदानियो के बलिदान व वीरागनाओ के जौहर से भरी पडी है। यहा की मिटटी भी नमन करने योग्य है यहाँ की नारी भी।

सूर्यमल्ल मिश्रण ने नारी के उस उदात्त स्वरूप को अपने काव्य का विषय बनाया है जो प्रेरणा का आगार है। सूर्यमल्ल मिश्रण ने वस्तुत भारतीय नारी का नये अर्थों मे मौलिक सस्कार किया है। जहाँ नारी का हृदय प्रणय का सागर है वही उसमे राष्ट्र कल्याण की गरिमा भी है। तलवारो की झकार के मध्य जब सारा देश अग्नि की लपटो मे जल रहा हो उस समय यह नारी अपने पति व पुत्र की युद्ध मे सफलता की मगल कामना करती है। कवि ने 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' की भावभावना को कितने सुन्दर ढग से अभिव्यक्त किया है—

इला न देणी आपणी हालरिया हुलराय,
पूत सिखावें पालणे मरण बडाई माय।

वीरमाता बालक को पालने मे झुलाती हुई वीरता के लिए सस्कारित कर रही है। मातृभूमि के महत्व को समझा रही है—

हे पुत्र ! अपनी धरती कभी भी शत्रु को न देना। मातृभूमि के लिए मर मिटने के महत्व को समझा रही है।

जिस देश की नारी जागरूक तथा अपने बच्चो के सस्कारो के प्रति प्रारभ से ही जागृत होगी उस समाज का निर्माण व सरचना कितनी उत्कृष्ट होगी यह कवि की इन पक्तियों मे दिखाई देती है—

आज घरे सासू कहे हरख अचानक काय,
बहू बलेवा हुलस पूत मरबा जाय

पति यदि वीर गति को प्राप्त हो तो यह परम सौभाग्य की बात है क्यों कि वह मरण पर्व समस्त परिवार मे असीम उल्लास भर देता है। बहू के उल्लास का कारण साम का शीघ्र ही समझ मे आ जाता है। वीर वश की रीति नीति ही यही है। दुर्भाग्यवश यदि पति रणक्षेत्र से पीठ दिखा कर लौट आता है तो वीर नारी उस कायर पति के रणक्षेत्र से भाग आने पर अत्यन्त लज्जा का अनुभव करती है। माता समझती है कि भागे हुए कायर पुत्र ने उसके 'दूध' को लज्जित कर दिया है तो पत्नी सोचती है उसका 'चूडा' लज्जित हो गया है।

वीर रानी मनिहारिन से जब यह कहती है कि अब इन महलो मे तुम्हारा क्या काम अब तुम यहा मत आना क्यो कि रण से भागा हुआ पति तो मृतवत ही है—

मणिहारी जारी सखी, अब न हवेली आव
पीव मुवा घर आविया, विधवा किसौ बणाव

कवि दिनकर ने इसी वीरता को देख कर अपने ये भावोद्गार प्रकट किए थ—

राजस्थान की मिट्टी वीरता की समाधि है। इस मिट्टी पर खड़े हो कर भावनाओं को रोक सकना कठिन है। यहाँ आते ही भावनाशील मनुष्य की कल्पना म अनेक तलवारें एक साथ झनकार उठती हैं पूवजो का रक्त मानो नीद से जगकर धमनियों मे खौलने लगता है तथा भारतीय नारी के बलिदान की गौरव शिखा, चित्तौड की चिता मनश्चक्षु के सामन साकार हो जाती है। पैर यह सोचकर ठिठकन लगत हैं कही अगले कदम पर किसी सूरमा की समाधि न हो और हृदय अधीर होकर धरती स यह अनुरोध करने लगता है कि— वह्दे उनस जगा कि कब से उनका रथ खाली है।

इस वीरांगना का तो कायर का पडौस तक भला नही लगता। कवि न एक नारी की वेदना को उसकी सखी मे कहत हुए चित्रित किया है—

नहँ पडोस कायर नरा हली वास सुहाय।
बलिहारी जिण देसडै, माथा मोल बिकाय।

यह वीरांगना की भावना है कि जिस देश म वीर अपने शीश को मातृभूमि को समर्पित कर देने म नही हिचकते ऐस दश पर न्योछावर हो जाने को जी चाहता है लेकिन कायर के पडौस म तो रहना भी अच्छा नहीं।

नागण जाया चीटला, सिंही जाया साव
राणी जाया जहँ रुवें सो कुल बाट स्वभाव

वीरता क सजग प्रहरी कवि ने भारतीय नारी क उस उज्ज्वल राष्ट्रप्रमी शक्तिमत, प्रेरक समय तथा सतीत्वमय स्वरूप की स्थापना की है जिसस भारतीय नारी एक देवी-प्रतिमा के सदश काव्य म स्थापित हो गई है। वीर सतसई की नारी क्षात्रधम की विजय ध्वजा है।

सूयमल्ल ने माँ के द्वारा अपने पुत्रों बहनो के द्वारा अपने भाइयो को और पत्नियो के द्वारा अपने पतियो को प्रेरित करन का माध्यम सफलतापूवक अपनाया है।

बाला चालम बीसरै मोयण अहर समाण
रीत मरता ढोल की उठ कियो घमसाण

हे प्रिय पुत्र! तू अपनी परम्परागत चाल का मत भूल क्योंकि मेरा दूध जहर के समान है अथात जो इसको पीता है वह शीघ्रातिशीघ्र मरता है तुमन व्यथ ही मरन म विलम्ब किया अब युद्ध प्रारभ हो गया है अत शीघ्र ही मरन क लिए तयार हो जाओ।

पूजाण गज मातियों मोडाणो वर मूझ।
बीजाणै घण चामरा है चूडो बल तूझ।

पतिदेव तुम गजमोतियो से पूजे गये मेरे हाथ द्वारा सहलाए गय और आप पर अनेक चँवर चिन्ह ढुलाए गय मेरा सुहागचिन्ह चूडा ही तुम्हारा बल है। इसी मे मेरा सुहाग सार्थक है।

सूर्यमल्लजी के समय तक आकर सतीप्रथा पर रोक लगा दी गई थी पर कवि सतीप्रथा की महिमा को आजीवन नही भूले। वे केवल नारियो से ही बलिदान की आकाक्षा नही करते थे अपितु नरो से भी उन्हे यही उम्मीद थी। आश्रयदाता राजा के लिये व कामना करते थे— हमारे राजा का मस्तक घोडे के टापो की ठोकरें खाता फिरे अर्थात युद्ध क्षेत्र मे राजा मर कर अमर हो।

सतीप्रथा के पीछे शायद तत्कालीन परिस्थितियाँ व परिवेश का दायित्व था। हमारे यहा नारी की पूजा की जाती है तथा उसकी देह को देवमन्दिर के सदृश पूजा जाता रहा है। उसकी दैहिक व मानसिक दोनो पवित्रताओ का महत्व रहा है। यही कारण है कि रानियो ने बर्बर आक्रान्ताओ की लोलुप कामी दृष्टि से बचाकर अपनी देह को अग्नि समर्पित कर पवित्र रखने का प्रयास किया होगा।

भारतीय नारी ने अपने मुख से समाज को जो प्रेरणा दी वे इस प्रकार थी—

(१) युद्ध मे छाती पर घाव खाने चाहिये, पीठ पर नही।

(२) इला न देणी आपणी— धरती दूसरे के कब्जे म नही जानी चाहिये।

(३) जौहर या सतीप्रथा की।

(४) महत्व सुमरण का है— लम्बी आयु का नही।
पुरुष की वीरता म ही सुहाग की सार्थकता है।

यदि भारतवर्ष मे यह काव्य पढकर इसके महत्व को समझा होता तो हमारे देश का इतिहास ही कुछ और होता।

सभ्यता व सस्कृति के समतल आगन मे प्रेरणा व राष्ट्रप्रेम से दिप-दिप जलती भारतीय नारी आज कहा से कहा आ गई है। आधुनिकता के बीहड जगल ने उसे भटका दिया है।

आज की नारी के हृदय मे सन्नाटा है मस्तिष्क मे उलझन खीझ और खोखलापन, आज की नारी विस्मृता है मूर्छिता है। नारी जिसकी आखो मे सूनेपन की आग है हृदय मे अभाव का हाहाकार है नारी जिसके घुघराले बालो मे कालसर्पों का फुत्कार है जिसका अन्त स्रोत सूख गया है, जिससे उसकी महत्ता तथा मृदुता थी। आज की नारी को कवि का काव्य पढकर सीखना चाहिए कि स्त्री को योषा, नारी वामा, अबला, सुन्दरी, प्रमदा, ललना मानिनी महिला दुहिता जाया और माता इन रूपो का विभिन्न भूमिकाओ मे गरिमा से निवहन कर राष्ट्र के कर्णधारो को सस्कारित करना है।

कवि सूर्यमल्ल ने जिस नारी का चित्रण अपने काव्य मे किया है वह स्त्रीत्व

का मधुरतम आदर्श है। वह उत्सर्गमयी है, महाशक्ति है त्याग है, बलिदान है, उसके इसी स्वरूप से पुरुष युग-युग से उससे आबद्ध है।

वर्तमान परिवेश में कवि का काव्य इसीलिए समकालीन उपयोगिता, उपादेयता तथा महत्व का है कि आज की नारी उस नारी से प्रेरणा ले तथा हमारे चिंतन हमारे सांस्कृतिक मूल्यों व हमारे संस्कारों को सुधारने में योगदान दे।

राष्ट्र का आधार है नारी,
नींव की दीवार है नारी।

कवि ने नारी के इसी समर्थ, साधक व सतीत्व मय स्वरूप का नवोन्मेषित किया है।



महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण और उनका वंश भास्कर

एस आर खान

राजस्थान के प्रसिद्ध कवि एवं इतिहासकार सूर्यमल्ल मिश्रण बूंदी राज्य के महाराव राजा रामसिंह के राजकवि एवं दरबारी थे। आपका जन्म बूंदी राज्य के हिंडोली कस्बे के समीपवर्ती गांव हरणा में कार्तिक कृष्ण १, विक्रम संवत् १८७२ को हुआ था। आपकी मृत्यु बूंदी नगर में आषाढ़ शुक्ला ११, मंगलवार, विक्रमी संवत् १९२५ को हुई थी। आपके पिता का नाम चंडी दान, माता का नाम भावना बाई और अनुज का नाम जयलाल था। सूर्यमल्ल चारणों की १२० शाखाओं के अंतर्गत सर्वाधिक प्रसिद्ध 'मिश्रण' शाखा से संबंधित थे। मिश्रण' नाम होने का कारण यह है कि इस शाखा के मूल पुरुष चंड कोटि ने षडभाषा मिश्रित उक्तियों द्वारा शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त की थी। इस बात का वर्णन वंश भास्कर' में उन्होंने स्वयं इस प्रकार दिया है—

चंड कोटि कवितें चली सूरिन साहि सम्मान ॥ ६ ॥
भाखा खट मिश्रण भाणिति वदि जिहू जितवाद।
उनको मिश्रण नाम इम हुवसुलाक्षनिरल्हाद ॥ वंश भा ३८/१०

इनके पिता चंडीदान उस समय के प्रकांड पंडित और एक अच्छे कवि थे। बूंदी के राजा महाराव राजा रामसिंह आपका बहुत सम्मान करते थे। चंडीदान द्वारा रचित तीन ग्रंथ प्रसिद्ध है। बाल विग्रह, सार सागर और वंश भारण। इस प्रकार सूर्यमल्ल को बाल्यकाल में ही साहित्यिक वातावरण प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त वह स्वयं भी एक कुशाग्र बुद्धि एवं अद्भुत स्मरण शक्ति के धनी थे।

उन्होंने उनके रचित ग्रन्थ 'वश भास्कर' मे लिखा है कि दस वष की अवस्था मे ही उनकी गिनती अच्छे कवि के रूप मे होने लगी थी। इसी आयु मे उन्होंने 'रामरजाट' की रचना भी कर डाली थी। बारह वष की आयु में वह व्याकरण एव गद्य ज्ञान म पार गत हो गये थे। सूयमल्ल का स्वय चारण जाति का होने के कारण डिंगल और पिंगल भाषा का ज्ञान तो उन्हें अपने जन्मजात सस्कारों मे ही मिल गया था। परन्तु इसके उपरात वह सस्कृत भाषा के भी एक महान विद्वान थे। आपको चारण लोग अपनी जाति का सवश्रेष्ठ कवि मानते है। उनके जीवन काल मे ही उनकी प्रसिद्धि राजपूताना मे ही नही, अपितु मालवा तक मे हो चुकी थी। बूदी के राज दरबार मे भी आपका विशेष सम्मान था। उनकी गणना बूदी के पच रत्नो मे की जाती थी। इसका वणन 'वश भास्कर' म इस प्रकार किया गया है —

'आशा नन्दो जीवणो ज्ञान भाडा रुडी चण्डीदानज सूयमल्ल
खा शायन्ते तत्समीपे जमीता भ्रूभद्रल पचरत्नानि बुधाम।

अर्थात् बूदी के राव राजा रामसिंह के राज दरबार मे पाच रत्न हैं। आचाय आशानन्द ज्ञान के भडार प्रधान मत्री जीवणलाल, आयुर्वेद निष्णात दडी आत्माराम, चडी दान के पुत्र सूयमल्ल और जमीत खा पठान।

सूयमल्ल की प्रसिद्ध रचनाए निम्नलिखित है —

(१) वश भास्कर (२) वीर सतसई (३) धातु रूपावली (४) बलवद् विलास (५) छन्दो मयूख (६) सतीरासो (७) राम रजाट और (८) प्रकीणक गीत सवैये आदि।

परतु उपरोक्त रचनाओ म सूयमल्ल की सबस प्रसिद्ध रचना वश भास्कर ही मानी जाती है और यह राजस्थान का एक अत्यत प्रसिद्ध ग्रथ है। इस ग्रन्थ को यदि हम उसकी समस्त रचनाओ का कीर्ति स्तभ कह तो कोई अतिश योक्ति नही होगी। वश भास्कर' पद्य म लिखा एक वृहद् काव्येतिहास ग्रन्थ है और हिन्दी साहित्य मे इसस बडा कोई ग्रन्थ नही है। इसमे लगभग सवा लाख पद्य हैं। अधूरा होते हुए भी यह लगभग ढाई हजार पृष्ठो मे छपा है और सक्षिप्त टीका सहित इसके पृष्ठों की सख्या ४३६८ तक जा पहुची है। 'वश भास्कर एक मिश्रित भाषा का काव्य एक मिश्रित शैली चपू शैली' का ग्रन्थ है। इसमे मुख्यतया सस्कृत प्राकृत, मागधी पशाची शौर सेनी अपभ्रश, वृज और मरुदेशीय भाषा का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार की का य रचना का प्रचलन हिंदी साहित्य म प्राचीन काल स चला आ रहा है। विश्लेषण की दृष्टि स वश भास्कर का पिचहत्तर प्रतिशत भाग वृज भाषा अथवा पिंगल म दस प्रतिशत मरुदेशीय भाषा अथवा डिंगल मे और शेष पद्रह प्रतिशत भाग अन्य छ भाषाओ म लिखा गया है। इसके पश्चात अपभ्रश का नबर आता है। पशाची भाषा का उपयोग केवल दो या चार स्थानों पर किया गया है। मागधी और शौर सेनी का उपयोग सबसे कम किया गया है।

वश भास्कर हिंदी साहित्य की सबसे विशाल कृति होते हुए भी विद्वानो

द्वारा उपेक्षित ही बना रहा। इसके दो मुख्य कारण हैं— प्रथम इसका आकार अर्थात् वृहदाकार होना और दूसरा इसकी भाषा अर्थात् इसकी क्लिष्ट भाषा का होना। डा० मोतीलाल मनारिया ने अपनी पुस्तक 'राजस्थान का पिंगल साहित्य,' पृष्ठ २२० पर वंश भास्कर' की भाषा के विषय में जो मत प्रकट किया है वह इस प्रकार है—

'इसकी भाषा बहुत कठिन है। सूरजमल ने कहीं-२ अपने गढ़े हुए शब्द रख दिए हैं और कहीं २ ऐसे क्लिष्ट और अप्रचलित शब्दों का प्रयोग किया है कि एक साधारण पढ़े लिखे व्यक्ति के लिये इन ग्रंथों को समझना तो दूर रहा, उनको हाथ में लेने का साहस ही कम होता है।'

सूर्यमल्ल मिश्रण एक महाकवि एवं सत्यवक्ता के रूप में काफी प्रसिद्ध रहे हैं। जब उन्होंने बूंदी नरेश राव राजा रामसिंह के आग्रह पर राजकीय सहायता से बूंदी के हाडा वंशीय राजाओं का इतिहास 'वंश भास्कर' इसी शर्त पर लिखना प्रारम्भ किया कि वह जो भी लिखेंगे सत्य ही लिखेंगे। इस ग्रंथ की रचना से पूर्व बूंदी नरेश ने उस समय के विद्वानों और चारण भाटों की एक विशाल सभा का आयोजन ऐतिहासिक सामग्री के संकलन के हेतु बूंदी नगर में किया था।

सूर्यमल्ल के अनुसार 'वंश भास्कर' का रचना कार्य वैशाख सुदि तृतीया, सोमवार, विक्रमी संवत् १८९७ को प्रारंभ हुआ। इसके लेखन को लिपिबद्ध करने के लिए बूंदी राज्य की ओर से लेखक नियुक्त किए गए थे। परंतु अचानक 'वंश भास्कर' का रचना कार्य विक्रम संवत् १९१३ में बंद हो गया। इस बात का विवरण सूर्यमल्ल जी के लिखे हुए एक पत्र से होता है, जो उन्होंने पीपल्या (जयपुर राज्य) के ठाकुर फूलसिंह को पौष शुक्ल प्रतिपदा विक्रम संवत् १९१४ को लिखा था। इसका मुख्य कारण यह बतलाया जाता है कि जब वंश भास्कर में महाराव राजा रामसिंह जी के शासन काल में उनके दोषों को लिखने का समय आया तो महाराव ने अपने दोषों का वर्णन लिखने से मना किया। इस बात पर सूर्यमल्ल सहमत नहीं हुए और उन्होंने वंश भास्कर का लेखन कार्य बंद कर दिया। इसके पश्चात् फिर विक्रम संवत् १९१४ में महाराव राजा रामसिंह ने फिर दुबारा वंश भास्कर' लिखने का आदेश दिया। परंतु अब कवि की रुचि इस लेखन कार्य में नहीं रही। यद्यपि यह लेखन कार्य के बंद हो जाने के पश्चात् भी कवि आठ दस वर्ष तक निरोगता पूर्वक जीवित रहा। विक्रमी संवत १९१३ तक 'वंश भास्कर' में राव राजा रामसिंह के राज्य का लगभग संवत् १८९० तक का इतिहास लिखा जा चुका था। यह राम चरित्र का उज्ज्वल पक्ष ही है और आगे सूर्यमल्ल के दत्तक पुत्र मुरारी दान द्वारा रचित निरा स्तुति परक 'राम चरित्र' प्रारंभ हो जाता है और इस वर्णन के साथ ही वंश भास्कर' की समाप्ति हो जाती है।

'वंश भास्कर' चौहान वंश की हाडा शाखा के लगभग दो सौ राजाओं का एक वृहद इतिहास है। इसमें केवल बूंदी का ही इतिहास नहीं वरन समस्त राजस्थान और भारतवर्ष का इतिहास प्रसंगवश लिख दिया गया है। इस ग्रंथ में सृष्टि की रचना से

लेकर भारत मे अंग्रेजी राज्य की स्थापना तक का ऐतिहासिक विवरण दिया गया है। 'वंश भास्कर' को सूर्यमल्ल की सत्यवादिता के कारण ही एक प्रमाणित इतिहास ग्रंथ माना जाता है।

'वंश भास्कर' के ऐतिहासिक महत्त्व के विषय में विभिन्न विद्वानो के विभिन्न विभिन्न मत है जो इस प्रकार हैं —

डा० कानूनगो का कथन है कि 'वंश भास्कर का सबसे अधिक महत्त्व ऐतिहासिक सामग्री का विशाल संकलन है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह ग्रंथ 'पृथ्वीराज रासो' से भी अधिक महत्वपूर्ण है व साहित्यिक दृष्टि से उन्नीसवी शताब्दी के महाभारत की गणना में रखा जा सकता है।'

गहलोत का कथन है कि 'वंश भास्कर टाड की तरह राजस्थानी इतिहास के आधार पर और अंग्रेजी सरकार की रिपोर्टों के सहारे पर लिखा गया है। उसमे भी आधुनिक खोज से काम नही लिया गया।'

डा० गौरी शंकर हीराचंद ओझा ने कहा है कि वंश भास्कर ने उस समय तक इतिहास लिखने में विशेष खोज की हो, ऐसा नही पाया जाता। कवि का लक्ष्य कविता की ओर ही रहा है, प्राचीन इतिहास की शुद्धि की ओर नही।'

कृष्णसिंह बारहठ का भी यही मत है कि वह सूर्यमल्ल को इतिहासकार तो कहते हैं परंतु साथ मे यह भी स्वीकार करते हैं कि विश्लेषणवादी प्रतिभा का 'वंश भास्कर' मे अभाव है। उस जहा से जो सामग्री मिली उसको बिना ऐतिहासिक परीक्षण के जैसा का तैसा लिख दिया।

उपरोक्त विद्वानो के मतो में विरोधाभास का केवल एक मुख्य कारण है। प्राचीन समय मे पुराणो की पद्धति पर इतिहास लिखने की परंपरा थी, जिसमे राजवंशों का ही विशेषतया वर्णन किया जाता था। परंतु वर्तमान समय मे इतिहास लेखन की कला मे जो वैज्ञानिक पद्धति का प्रचलन हुवा है जिसके अनुसार ऐतिहासिक तथ्यो का विश्लेषण करके सत्य घटनाओ की खोज की जाती है। प्राचीन समय में इस पद्धति का अभाव था। फिर भी वंश भास्कर की ऐतिहासिकता के संदर्भ में यह एक सर्वमान्य धारणा है कि इसमे विशाल ऐतिहासिक तथ्यो का संकलन किया गया है। इसके अतिरिक्त उस समय के धार्मिक विश्वास सामाजिक रीतिरिवाज उत्सव और त्योहारो का भी इसमे विस्तृत विवरण है। इन सब तथ्यो से वंश भास्कर की उपयोगिता एक इतिहास ग्रन्थ के रूप में अधिक हो गई है।

वंश भास्कर सूर्यमल्ल मिश्रण की मृत्यु के तीस वर्ष पश्चात छपा है। इस ग्रंथ का बुद्ध चरित्र' विक्रम संवत् १९४५ मे तथा उम्मेदसिंह चरित्र विक्रम संवत् १९४८ में लीथो में छपा। परंतु वंश भास्कर जोधपुर मे संवत् १९५६ (१८९९ ई०) मे जोधपुर निवासी महामहोपाध्याय कविराजा मुरारी दान के प्रयत्नो से चार भागों में टीका सहित संपूर्ण रूप से प्रकाशित हुवा। इस ग्रंथ की टीका राम कृष्ण आसोपा ने

लिखी थी और इसका मुद्रण काय प्रताप प्रेस, जोधपुर द्वारा किया गया। वतमान मे केवल इसी रूप मे आज 'वश भास्कर जीवित है।

सदम ग्रथ —

१ वश भास्कर– ले० महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण

२ वश भास्कर एक अध्ययन– ले० डा० आलमशाह खान

३ नागरी प्रचारिणी पत्रिका सवत् २०२६ वि० वर्ष ७४ अक २

४ राजस्थान के इतिहासज्ञ– ले० राजेन्द्र शकर भट्ट

५ मध्यकालीन एव राजस्थानी इतिहास के प्रमुख इतिहासकार
लेखक– आर एन चौधरी और मिश्रीलाल माडोत

६ ऐतिहासिक ग्रन्थमाला– सपादक– विजयसिंह गहलोत

७ राजस्थान का पिंगल साहित्य– ले० डा० मोतीलाल मेनारिया

८ लेख– बूदी भी कभी छोटी काशी कहलाती थी– ले० डा०–नाथूलाल पाठक

९ लख– महाकवि सूर्यमल्ल एव १८५७ का स्वातन्त्र्य सग्राम–हाडौती की रक्त रजित भूमिका– ले० ओकारनाथ चतुर्वेदी

१० लेख– नगर से डगर तक– दनिक राजस्थान पत्रिका– ले० वररुचि।



महाकवि सूर्यमल्ल और उनका काव्य

माधवसिंह दीपक

वीर भूमि राजस्थान ने जहा स्वाधीनता के लिये मर मिटने वाले अगणित वीरो को जन्म दिया वहा ओजस्वी वाणी मे उन वीरो की गाथा कहने वाले चारणो और कवियो को भी जन्म दिया है। वीर गाथा की परम्परा खुमाण रासो बीसलदेव रासो पृथ्वीराज रासो रतन रासो, हम्मीर रासो आदि पर ही समाप्त नही हो गई अपितु प्रत्येक युग म राजस्थान के कवि वीरो का वणन करते रहे हैं। तथापि राजस्थानी साहित्य म वीर रस के कवियो मे चन्द बरदाई के बाद जो दूसरा नाम सूय की भाति चमकता है वह महाकवि सूयमल्ल मिश्रण का है जो उन्नीसवी शताब्दी मे बूदी नरेश रामसिह जी (१८२१—१८६२) के दरबार म राजकवि थे। वसे तो सभी राज दरबारों म कवि होते थे किन्तु चौहानो ने सभवत अपनी वीरता और उदारता से कवियो का मन अधिक मोह लिया। यही कारण है कि दो महाकवियों ने अर्थात् चन्द बरदाई और सूयमल्ल ने क्रमश अपने ग्रथ पृथ्वीराज रासो और वश भास्कर मे चौहान वश की गौरव गाथा गाई है। वश भास्कर' मे उत्तरवर्ती चौहानो विशेषत कोटा-बूदी के हाडा चौहानो का वणन है। चन्द बरदाई और सूयमल्ल के समय के बीच सात सौ वष का अन्तर है। किन्तु जसे विक्रमादित्य की नव रत्न की परम्परा को हजार वष बाद उसके वशज राजा भोज ने यथावत् निभाया, उसी प्रकार पृथ्वीराज और चन्द बरदाई का नवीन सस्करण हम महाराजा रामसिह और महाकवि सूयमल्ल म मिलता है।

सूयमल्ल कवि ही नही एक प्रमुख इतिहासकार और बहुत बडे विद्वान भी थे। उनके महाग्रथ वश भास्कर म सवा लाख छन्द कहे जाते हैं। यह ग्रथ आठ खण्डों मे

विभाजित है। काव्य और इतिहास के अतिरिक्त महाभारत की भांति इस ग्रन्थ को भी सवसग्रह अर्थात् एनसाइक्लोपीडिया की तरह बनाने का प्रयास किया गया है इसमे वष्णव शव और जैन दशन, षटशास्त्र, वाराही सहिता, वृक्षायुर्वेद, सगीत कामसूत्र ज्योतिष खगोल भूगोल राजनीति आदि अनेक विषयो का वणन है। प्रकाण्ड पण्डित होने के कारण महाकवि का सस्कृत प्राकृत मागधी पैशाची, पिंगल और डिंगल इन भाषाओ का विशेष ज्ञान था और उन्होने अपने काव्य म इन भाषाओ का खूब प्रयोग किया है। इस दृष्टि स उनका नाम सूयमल्ल मिश्रण यथाथ है। फिर भी वशभास्कर म पिंगल और डिंगल के शब्दो का बाहुल्य है और टीका की सहायता से इस महाग्रथ का समझने म विशेष कठिनाई नही होती।

सूयमल्ल क देहान्त के तीस वष बाद अर्थात् सन् १८९९ ई० स बारहठ कृष्णा सिंह जी सौदा ने जोधपुर क कनल प्रतापसिंह जी और कविराजा मुरारीदान जी की सहायता स वशभास्कर को उसकी उदधिमथिनी टीका सहित प्रकाशित करना प्रारम्भ किया और आठ खण्डो म वह सम्पूण प्रकाशित कर दिया गया। इससे पहल वह बिना टीका के बूदी के राजकीय प्रेस स छपा था और बूदी के दीवान पडित गगा सहाय जी ने हिन्दी गद्य मे उसका साराश लिखकर वश प्रकाश के नाम स बूदी के रगनाथ प्रेस से ही मुद्रित कराया था। जो भी हो इस समय वश भास्कर की बहुत कम प्रतियाँ उपलब्ध हैं और उसका नवीन सस्करण छपने की नितान्त आवश्यकता है।

महाकवि सूयमल्ल का एक ग्रन्थ और है जो राजस्थान म लोकप्रिय है और वह है वीर सतसई। इस के दोहे वीरता से ओत-प्रोत है। एक दो उदाहरण लीजिए —

नायण आज न माड पग काल्ह सुणी जै जग।
धारा लागे मो धणी ता भीजै घण रग॥
पथी एक सदेसडो बावल न कहि आह।
जामा थाल न बज्जिया, ढामक ठह ठहियाह॥
तन तलवारा तिलछियो, तिल तिल ऊपर सीव।
भाला धावा उठगी विण इक ठहर नकीब॥

वीर सतसई ग्रन्थ कलकत्ते स प्रकाशित हुआ था। और इस वीर काव्य का सुनकर गुरुदेव रवीन्द्रनाथ न ठीक कहा था कि सूयमल्ल की कविता म सौ हाथियो का बल है।

इसी प्रकार एक और प्रकाशित ग्रथ है बल-विग्रह जिसकी रचना सूयमल्ल के पिता चण्डीदान ने आरम्भ की थी किन्तु जिसे वे अधूरा ही सूयमल्ल को सौप कर स्वग सिधार गए। पिता क बाद पुत्र ने वह ग्रन्थ पूरा किया इसीलिये इस ग्रथ का उत्तरार्द्ध पूर्वार्द्ध से भी अधिक सुन्दर है। इस ग्रन्थ मे बूदी के महाराजा बलवन्तसिंह का जीवन चरित्र है जो अग्रेजा से युद्ध करते हुए वीर गति को प्राप्त हुए थे। उनके अंतिम युद्ध के वणन के कुछ अश देखिए —

पहर सात गोला जुध पडियो, रावण रड रडियो जमराण।
आवण काम खाग ऊ कढियो, चीता जिमि चढियो चहुवाण॥

पाचर क्वल उडे धड फूटे, तोपा झड टूटे गजब ।
शीषा समर उमेद वलोधर पैड पैड ग्रममेघ प्रब ।।

चावल नीर श्रोन रग चाढे पडियो दले पाने पचरग ।
खल रूडा रूठो झडखागा वल खूटा टूटो उतवग ।।

यद्यपि महाकवि सूयमल्ल केवल 'वीर सतसई' लिखकर साहित्य मे अपना अमर स्थान बना सकते थे तथापि उनका वशभास्कर भारतीय साहित्य म एक अनूठा ग्रथ है और हिन्दी साहित्य मे वीररस का शायद यह सब से बडा ग्रथ है। अब तक हिन्दी म भूषण को वीररस का सबसे वडा कवि माना जाता है किन्तु सूयमल्ल तो अनेक भूषणो के भूषण है। उनके काव्य मे जहा कही वीर रस के अतिरिक्त वणन है उस पर भी वीर रस की स्पष्ट छाप है। उदाहरण के लिये नतकी के नत्य का वणन देखिए —

घुमत पाय घुम्मरी छमकि घोर घटिका, उपग ग्रग क बज मदग ग्रग ग्रटिका।
बनाव हाव भाव मे रनकि हृत्य नारी, किधो पिकादि चपझप रोर सोर की करी ॥

पलट्टि ग्रग के झुके नचक्क लक प पर उरोज भार निट्टि जो बली निबध उद्दरै।
उरोज अग्र चारु हार इन्द्र छद है, अगर इक्क थान क्यो न तान सग ही घट ॥

सूयमल्ल युद्ध के वणन मे अत्यन्त कुशल है। वश भास्कर म आदि स ग्रत तक सकडो युद्धो का वणन है फिर भी उनम सब जगह नवीनता है और पिष्टपषण मात्र नही है। उदाहरण के लिये बूदी नरेश रावराजा बुद्धसिह जी का युद्ध वणन देखिए —

चली भली कृपान सानसुद्ध राव बुद्ध की अरीन जुद्ध की उमग राजरग रुद्ध की।
प्रहार खग्ग धार मारि लुत्थि लुत्थ पै परे चिरे बितुड गडझड खडखड है झरे।
दिसा दिसान म कृपान विज्जुमान निक्कसी भिरे गरूर पूरसूद पिक्खि हूर हुल्लसी।
चलम मग्ग खग्ग के कटार पार निक्कसी, सुबीर सीस सचमी गिरीस हुलस हम।
डराल डाक डिडिमी डमकि डाकनीन की, नस उमगि साकिनीन नारि नाकिनीन की॥

वास्तव म महाकवि क काव्य की सारी विशेषताम्रो क वणन ग्रौर उनकी समालोचना के लिये एक वृहत् ग्रथ की आवश्यकता होगी। उनके काव्य पर शोध की बडी जरूरत है ताकि उसके उत्कृष्ट ग्रश पाठको के सामने आ सकें।

इसी प्रकार महाकवि सूयमल्ल के जीवन पर भी अभी बहुत प्रकाश डालने की आवश्यकता है। वे बडे प्रतिभाशाली कवि थे। आठ पडितो को अपने आगे बठाकर व आठ प्रकार के भिन्न भिन्न छन्द बनाकर उन्हें लिखवा सकते थे। इतिहास को ज्यो का त्यों चित्रित कर देना सूर्यमल्ल का बहुत बडा गुण है। जब उन्होने एक बार बूदी के एक राजा की पराजय का वणन अपने आश्रयदाता महाराज रामसिहजी को सुनाया तो राजपूत के रक्त म उबाल आना स्वाभाविक था और उन्होने सूयमल्ल से कहा कि तुम हमारा नमक खाकर ऐसा लिखत हो वह सच्चा काव्य नही बल्कि चापलूसी मात्र है यह कहकर वे घर चले गए। क्रोध शात होने पर महाराज रामसिह जी को बहुत पश्चाताप हुआ और उन्होंने सूयमल्ल के घर आकर उनसे करबद्ध रूप मे क्षमा मागी। तब जाकर वशभास्कर जस महाग्रथ की रचना हुई और महाराज रामसिह जी न भी

उसे बिना हेरफेर के ज्यों का त्यों छपवाया। यही कारण है कि इस ग्रंथ में जैसी निर्भीकता और स्पष्टवादिता मिलती है वैसी संसार के बहुत कम ग्रंथों में मिलेगी।

अंत में हम एक रोचक प्रसंग के साथ अपना निबंध समाप्त करेंगे। सूर्यमल्लजी बड़े रसिक और भावुक व्यक्ति थे। मद्यपान के बाद तो वे कविता करते ही थे साथ ही उन्हें अपनी पत्नी गोविन्द कंवर से बड़ा अनुराग था। गोविन्द कंवर काव्य मर्मज्ञ और स्वयं अच्छी कवयित्री थीं। वे यथाशक्य अपने पति की काव्य रचना में सहायता भी करती थीं जो पति-पत्नी में मनोविनोद का अच्छा साधन था। सूर्यमल्ल जी के कान छन्दों को सुनने में ऐसे अभ्यस्त थे कि यदि उन्हें नींद से जगाना हो तो कोई भी व्यक्ति यदि छन्दोभंग के साथ काव्य-पाठ करता तो वे तुरंत जगकर उसे टोक देते थे। अनेक छन्दों की रचना उन्होंने स्वप्न में की थी। एक बार यह चर्चा चलने पर कि ब्रज भाषा के कवित्त और सवैया छन्द राजस्थानी में अच्छे नहीं बन सकते, जोधपुर के एक संन्यासी ने एक सवैया लिखा—

> बीलवा फून म्हें आवा नहीं अठे और ही भांति का लोग बसे छे।
> काला लगाय शराब करे मन ही मन गायण्यां देख हसे छे।
> सास का सांच सदा उर में नणदीनित नाचण नाण कसे छे।
> लाज को वरी बुरा सबरा बालमा देखता ही ये जीव डसे छे।

यह छन्द जब सूर्यमल्ल जी ने सुना तो उन्हें पसन्द आया और उन्होंने इस अपनी पत्नी को सुनाया जिस पर पत्नी ने हंसकर कहा कि यह तो सीधा सादा सधुक्कड़ी छन्द है इसमें कोई चमत्कार नहीं है तो सूर्यमल्ल ने उनसे पूछा कि क्या इससे अच्छा छन्द तुम लिख सकती हो तो उन्होंने कहा क्या नहीं। थोड़ी ही देर में उन्होंने यह छन्द बनाकर सुनाया—

> पावडा बिछास्यां छास्यां चदवा गुलाब चोवा, फूल बरसास्यां मोती वारस्यां सुहावणा।
> अतर लगास्यां पान खास्यां मुरकास्यां गास्यां, गोविन्दजी साजस्यां सिंगार मनभावणा॥
> आयो भेंट भरस्यां मुजरा में वाने भरस्यां औ करस्यां जी रागरंग रंग सूं बधायणा।
> मभकल्या माणीगर मानजो अनन्त सुख आज्यो बसंत कंत म्हारे घर पावणा॥



महाकवि की कविताओं का चित्रांकन

प्रेमजी प्रेम

ललित कलाओं में साहित्य का स्थान सदैव ही रहा है। लोकसंस्कृति में लोक साहित्य और नागरिक कलाओं में नागरी साहित्य की प्रचुरता देखी जा सकती है। समय समय पर कलाकारों ने इस बात के प्रयत्न किए हैं कि वे उत्कृष्ट समकालीन कृतियों को संगीत चित्रकला मंचन आदि के माध्यम से जन जन के सम्मुख प्रस्तुत करें। ऐसे प्रयासों को जहां एक ओर आदर के साथ स्वीकार किया जाता है वहीं दूसरी ओर उनमें निहित कलाप्रतिभा का आकलन भी किया जाता है। समय समय पर ऐसे प्रकरण सामने आते हैं जिनमें किसी कलाकार द्वारा प्रस्तुत किसी साहित्यिक कृति पर विस्तार से चर्चा की गयी हो।

कला और साहित्य का ऐसा ही सुंदर संगम राजस्थान की कलानगरी बूंदी में पिछले कुछ दशकों में देखने को मिला है। बूंदी में स्वतंत्रता संग्राम (१८५७ ई) के साक्षी महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण की कविताओं को चित्रों के माध्यम से प्रस्तुत करके उसी नगर के निवासी चित्रकार कांतिचंद्र भारद्वाज ने न केवल अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है वरन बूंदी शैली के चित्रांकन में एक नया अध्याय जोड़ने का सफल प्रयत्न किया है। कांतिचंद्र भारद्वाज चित्रकला में स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा प्राप्त विविध प्रकार के डिप्लोमा उत्तीर्ण कर चुकने वाले ऐसे आधुनिक कलाकार हैं जो परम्परागत चित्रकला की तमाम बारीकियों को समझने की क्षमता रखते हैं। बूंदी के ही राजवैद्य परिवार में जन्मे कांतिचंद्र भारद्वाज ने अपने जीवन के चालीस खूबसूरत बसंतों में से

अधिकाश को चित्रकला के प्रति पूर्ण समर्पण के साथ जिया है। वे राजस्थानी शैलियो का वशिष्टय लिए बूँदी कलम का चित्राकन करने मे कुशल हैं।

घनी वक्षावलियाँ, उन्नत ललाट वाली नायिकाएं जल और मेघ, मयूर, चौकोर भवन कदली वर्क्षो का बाहुल्य हाथियो का सुदर चित्रण बूंदी की चित्रशैली की विशेषता माना जाता है। कातिचन्द्र भारद्वाज के चित्रो मे यही सब प्रमुख है। स्व भोलाशकर जी ओदोच्य, परमानद चोयल रामगोपाल विजयवर्गीय, गोवर्द्धनलाल जोशी बाबा आदि से कला की शिक्षा दीक्षा ग्रहण करने वाले कातिचद्र भारद्वाज द्वारा जलरगो, तैल रगों और एनामल रगो का प्रयोग सफलता पूर्वक किया जाता रहा है। स्वप्रेरित शैली से स्वय चित्राकन उनका अपना योगदान है।

पिछले कुछ वर्षों से कातिचद्र भारद्वाज ने ऐतिहासिक विषयो का चयन करके रणथभोर चित्तौडगढ, बूदी उदयपुर कोटा आदि राजस्थान के विशिष्ट नगरो के बारे मे इतिहासपरक चित्रो की रचना करके पर्याप्त प्रशसा अर्जित की है। इसी क्रम मे उनके द्वारा बूदी के महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण की कविताओ को आधार बनाकर किया गया चित्राकन अत्यत महत्वपूर्ण प्रमाणित हुआ है। अतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओ मे उनके इस विषय के चित्रो को प्रकाशन मिला है। प्रदर्शनियो और सग्रहो के माध्यम से उनके चित्रो को प्रकाश मे आने का अवसर मिला है।

बूदी के महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण, प्रथम स्वाधीनता सग्राम के मुखर साक्षी रहे है। उन्होने तत्कालीन शासको को बार बार इस बात से अवगत करवाने मे अपना कदम कभी पीछे नही हटाया कि वे अग्रेजो के सम्मुख समर्पण करने के स्थान पर उनसे जूझें और एक होकर उन्हें देश से बाहर खदेड दें। पत्रों और कविताओ के माध्यम से उन्होने स्वाधीनता और देश प्रेम का जो शखनाद किया वह अब सबके सामने है। चार हजार से अधिक पृष्ठो का वश भास्कर नामक महाकाव्य उनके सृजन का कीर्तिस्तभ है। सती रासो बलवद्विलास राम रजाट वीर सतसई आदि उनकी अमर रचनाएं हैं। उन पर शोध कर चुकने वाले शोधको ने यह निष्कर्ष निकाला है कि वे षटभाषाविद थे और राजस्थानी डिगल मे गद्य तथा पद्य का समान मात्रा मे सृजन करते थे। अपने काव्य का वे स्वय नही लिखते थे वरन वे कविता बोलते थे। उनके साथ बैठे लेखक उसे लिखते जाते थे। यही कारण है कि उनकी कृतियो की चार पाच पाडुलिपिया उपलब्ध होती हैं। वे स्वतत्रता का शखनाद करने के लिए न केवल प्रसिद्ध हुए, वरन ऐसी मिसाल कायम कर गए कि उन्हे उस काल का भूषण कहा जा सके। वे मरण की प्रेरणा देने वाले अकेले कवि रहे। बूदी के शासको की वशावली के रूप मे लिखे गए ऐतिहासिक ग्रथ का लेखन उन्होने केवल इसलिए रोक दिया था क्यो कि बूदी के तत्कालीन शासक अपना गौरव नही निभा सके थे और उन्होने ब्रिटिश कम्पनी के सम्मुख आत्मसमर्पण करके मत्री कर ली थी। सन् १८६४ मे महाकवि सूर्यमल्ल की मृत्यु के कारणो की तह मे जाने वाले लोग बताते हैं कि वे इसी पीडा के कारण स्वर्गधाम सिधार गए कि देश मे ब्रिटिश हुकूमत का साम्राज्य हो गया। उनके एक दोहे का आशय

कुछ इस प्रकार है, कि जिस वन म हाथी और सिंह भी आने स भयभीत होत थ, उस मे सियार विचरण करने लगे हैं।' सियारो स उनका तात्पय शासकों से था और वन से देश का। उनका दोहा था —

जिण बन भूल न जावता, गयँद गिवय गिडराज।
उण बन जबुक ताखड़ा ऊधम मड आज॥

वीर सतसई नामक कृति में महाकवि सूयमल्ल के ऐसे दोहो को सकलित किया गया है जिन दोहो से मरण की प्रेरणा मिलती है मातृभूमि की रक्षा का सकल्प, जिन दोहो के पठन मात्र से ही मन म घर बना लेता है। सूयमल्ल जी ने स्वय ही सतसई क बारे मे लिखा है कि यह दोहामयी सतसयी जहा एक ओर वीरो को भा जाने वाली है वहीं दूसरी ओर यह कायरो के लिए शूल जसी भी है।' उनके अनुसार

सतसई दोहामयी, मीसण सूरजमाल।
जप भडआणी जठै उठ कायरा साल॥

ऐस महाकवि की कविताओं पर कातिचद्र भारद्वाज ने पचास स अधिक चित्र बनाय हैं। बूदी की चित्रशैली और बूदी का ही परिवेश। बूदी का कवि और उसी नगर का चित्रकार। सब कुछ एसा घुला मिला है कि चित्रो को देखते ही वाह वाह कहने को जी करता है। रगो का प्रयोग पूर्णरूपेण पारपरिक है। चौकोर भवनो म लेकर उन्नत ललाट वाली लम्बी नायिकाओं तक सब कुछ बूदी कलम की उत्कृष्टता को दर्शाने वाला है। स्थान स्थान पर हुए प्रदर्शनों मे कातिचद्र भारद्वाज को इस बात के लिए बार-बार बधाई दी गयी है कि इतन जटिल विषय का चयन करके उन्होन उस उतनी ही सरलता स प्रस्तुत कर दिया है। दोहो पर सुविधा की दृष्टि से उन्होने चित्र के नीचे मूल पद्य का अकन भी कर दिया है।

देश भर म हुए अनेक सफल प्रयासो की कडी म बूदी क इस प्रयास को जोड-कर देखा जाए तो इसकी श्रेष्ठता के कुछ और आधार देखन को मिल सकते है। इन आधारों मे लोकशाली लोककाव्य और उसकी सहजाभिव्यक्ति मुख्य है। भारद्वाज न जल रगों और तैल रगो का प्रयोग करके छोटे बडे कई फलको पर महाकवि के दोहो का चित्राकन किया है। कुछ फलक चार गुणा पाच फीट क हैं तो कुछ दो गुणा दो फीट के भी हैं। लाल और पीले रग के साथ साथ बूदी की हरियाली का प्रयोग किया गया है। जैसा कि माना जाता है दोहा छोटा होते हुए भी उसका कथ्य बहुत बडा होता है। कम शब्दों मे बहुत कुछ कह देना ही दोहे की विशेषता है। चित्रो मे भी यही खूबी है। कम से कम म ही बहुत कुछ कह दिया गया है। लेकिन जहा आवश्यक हुआ है अधिक दृश्यो का प्रयोग करके दोहो की मूल भावना को चित्र फलक पर उतार दिया गया है। भारद्वाज की सफलता का एक राज यह भी है कि वे राजवद्य परिवार से सबध रखने के कारण बचपन म ही बूदी के महलों म जाते रहे हैं। महाकवि सूयमल्ल राजकवि स बढकर माने जाते थे। राजा के साथ बैठकर वे युद्ध मे लडते थे। उनक चित्रो मे तल वार और कलम साथ साथ मिलती हैं। महलो के भीतरी भागो का चित्रण कविता

ग्रौर चित्रों में समान रूप से आया है। परिणामत भारद्वाज के चित्र संपूर्ण चित्र बन गए हैं।

महाकवि ने कहा था कि 'पालने में झुलाते हुए मा अपने शिशु को सिखाती है कि अपनी भूमि किसी को नहीं देनी चाहिए। ऐसा करके वह जन्म लेते ही पुत्र का मरण की ओर बढ़ा रही है। दोहा है

इला न देणी आपणी हालरिए हुलराय।
पूत सिखावै पालणै मरण बढाई माय॥

कालिचन्द भारद्वाज ने चित्रों में नायकों और नायिकाओं के मन में मातृभूमि पर मिटने की प्रेरणा के दर्शन करवाने का प्रयत्न किया है। दोहे के अनुसार नायिका कहती है, 'हे नायन आज मेरे पांवों में मेहँदी मत लगा क्योंकि कल युद्ध के बारे में सुना है। युद्ध में जब पति के शरीर पर असंख्य घाव हो जाएँ तो मेहँदी को और ज्यादा रंग दे देना।' महाकवि कहते हैं

नायण आज न मांड पग काल सुणीजे जंग।
धारा लागे जे धणी, तो दीजै घण रंग॥

दोहे को चित्रांकित करते समय जहां नायिका के पांवों में मेहँदी रचाती हुई नायन दिखाई गयी है वहीं युद्ध का संदेश लेकर नायक के पास आया हुआ पुरोहित चित्रित किया गया है। समर भूमि में जाने के लिए तैयार खड़े अश्व का अंकन इस दोहे के चित्रांकन में पूर्णता भरता है।

चूंकि देश भर में कलाकारों ने अपनी कला के माध्यम से विशिष्ट कवियों को प्रस्तुत किया है, इसलिए भारद्वाज के इस प्रयास को प्रयोग नहीं कहा जा सकता। यह उसी शृंखला में किया गया एक कार्य है। लेकिन कविता के सृजन से लेकर उसके चित्रांकन तक की तमाम बातें भारत की विख्यात कलानगरी के संदर्भों से सीधी सीधी जुड़ी हैं इसलिए इस कार्य का महत्व दूसरे तमाम प्रयासों से कहीं अधिक है। विशेष बात यह है कि एक फलक में पीढ़ियों का इतिहास अभिव्यक्त हुआ है। प्रथम स्वाधीनता संग्राम के सेनानी का काव्य और स्वतंत्र भारत में सोचने वाला चित्रांकन। दोनों एक ही नगर से आए हैं।

वीरो का वह प्रदेश राजस्थान जहा मरणोत्सव मनाया जाता है

डॉ० कृष्ण बिहारी सहल

मृत्यु जसी भयकर वस्तु पर भी मरणोत्सव मनाया जाना राजस्थान की अद्वितीय विशेषता रही है। रण स्थल मे वीर-गति को प्राप्त करना तथा जौहर की ज्वालाओ मे भस्म हो जाना, यहा के बडे गौरव और सम्मान की किन्तु साधारण सी बात समझी जाती थी। मैं समझता हू कि राजस्थान क अलावा अ य किसी प्रदेश की सस्कृति म, वहा क जीवन म मृत्यु का इस प्रकार जय-जयकार नही किया गया है। यहा तो मृत्यु का स्वागत किया गया है तभी तो कहा गया है—

मगल मरण मनावती रणचण्डी रणदास।

विश्व म शायद ही ऐसा कोई देश होगा, जहा मृत्यु के समय म भी हर्ष हो। घर के घर उजड जात हैं कबीले खतम हो जाते हैं, कितने ही वीर रण क्षेत्र म सदा के लिए सो जात हैं कितनी ही स्त्रिया ज्वाला की लाल-लाल लपटो की गोद म बैठकर स्वाभिमान की रक्षा करती हैं पर क्या मजाल है कि दु ख की रेखा भी किसी क चेहरे पर आ जाए। पुत्र और पुत्रवधू दोनो ही मृत्यु की तैयारी कर रह हैं, ऐसी स्थिति को वीर सतसई मे चित्रित सास जब देखती है तो प्रसन्न होकर कहती है—

नखिया डुगर लाज रा, सासू उर न समाय।

इतना ही नही, घर म अकस्मात् मनाते हुए हर्ष को देखकर सास कहती है

आज यह रूप कैसा ? तब ज्ञात होता है कि पुत्र–वधु और उसका पुत्र प्राण न्यौछावर करने जा रहा है तो वह बडी प्रसन्न होती है। देखिए—

आज घर सासू क्हे, हरख अचाणक काय।
बहू वलेवा हुलसै पूत मरेवा जाय॥

राजस्थान की नारी न तो कभी मृत्यु को महत्व देना ही नहीं सीखा। राजस्थान की नारी सदैव पुरुष को प्रेरणा देती रही है। इस प्रदेश की नारी वीरता और प्रेम दोनो का निर्वाह करती है। यहा तो वीरता और प्रेम दोनो हाथ मिलाकर चलते हैं। वीर सतसई कार की नारी ने जब सेना का शोरगुल सुना तो वह शृगार मे डूबे हुए अपने वीर पति को सजग करती है और कहती है अब तो इन दबे हुए पीन स्तनो का छोडना ही होगा। यथा—

सूण ता हाक्रै सहज ही, कीधो जज कधी न।
मीदा लू अब छोड्गा, भीडाणा कुच पीन॥

ऐसी नारिया क्या कायरता का भीरुता को पसन्द कर सकती हैं। घमासान युद्ध शुरू होने पर भी प्रासाद मे पडे हुए अपने पुत्र को चेतावनी देती हुई वीर माता युद्ध के लिए उसे प्रोत्साहित करती है और कहती है पुत्र ! अपनी कुल क्रमागत रीति का मत भूल। क्या तू नही जानता कि मेरे स्तनो मे तो जहर समाया हुआ है अर्थात् मरा स्तनपान करने वाले के लिए अवसर पडने पर प्राणोत्सर्ग करना अनिवार्य है और फिर रणभूमि मे वीर गति पाना की तो अपन यहा रीति ही है। तब देर कसी ? उठ, घमासान युद्ध शुरू हो गया है। कहा भी गया है—

बाला बाल भी बीस रेमा थण जहर समाण।
गीत भरता ढील की, उठ थियो घमसाण॥

ऐसी माताए ही अपने बच्चे को युद्ध मे भेज सकती हैं। इतना ही नहीं जब वीरागना का पति युद्ध मे पीठ दिखलाकर भाग आया तो वह व्यग्यपूर्ण उक्ति के साथ कहती है— आओ लहग मे छिप जाओ। शत्रु का कुछ भरोसा नही यहा (घर मे) भी पहुँच जाय। कल्पना कीजिये ऐसी नारी की जो पति का ललकारती है और उस मृत्यु के मुह म जाने को बाध्य करती है। भागे हुए पति को वह कहती है कि तुमने घर मे आकर यह क्या किया ? युद्ध मे मर जाते तो मैं अग्नि से आलिंगन करती सती होती। वह आज की नारी की तरह कायर नहीं है जो आखो मे आसू और आचल मे दूध जसी उक्ति को चरितार्थ नही करती वह तो धरती मे अपन सतीत्व के कारण समा जाना चाहता है। वह तो चाहती है कि पति युद्ध–स्थल म ही शत्रु को मारता-मारता भले ही प्राण दे दे लौटकर न आवे अर्थात् पीठ दिखलाकर न आवे। वह नही चाहती कि उसका पति कायर बनकर भाग आवे। वह तो स्पष्ट कह देती है कि हे पति ! युद्ध स्थल म जाकर तुम अपने और मेरे कुल की प्रतिष्ठा रखना। युद्ध–स्थल से लौट आओगे तो फिर सिरहाने के लिए तकिया भले ही मिल जाये, प्रियतमा की भुजायें तो मिलन की नही।'

पत लसीज दोहि कुल नथी फिरती छाह ।
मुंडिया मिलसी गोम्यों, वस न धण री बांह ॥

दूसरी पक्ति म क्षत्रिय वाला का आत्मगौरव वर्णित हुआ है । जो कायर पति का स्पर्श भी नहीं करना चाहती । यह तो आनबान की रक्षा करना जानती है और इसके लिए प्राणों की आहूति देना उसके स्वभाव म है । यह गौरवशाली देश है, जहा मृत्यु का हृष से आलिंगन किया जाता है, मृत्यु तो त्योहार है पर्व है ।

राजस्थानी साहित्य म राष्ट्रीय भावना' नामक लेख मे डा कन्हैयालाल महल ने लिखा है कि ब्राउनिंग ने अपनी एक कविता म कहा है कि जीवन भर सघर्ष करता रहा हू किन्तु मेरी अन्यतम इच्छा है कि मृत्यु जब कभी भी तू आवे, चुपके चुपके आकर मेरा प्राणात न कर डालना प्रत्यक्ष होकर मुझसे युद्ध करना । मैं तो जूझता ही रहा हू । यह एक युद्ध और सही । मृत्यु स लोहा लेने की इस वीर भावना की बडी प्रशसा की जाती है और वस्तुत यह सराहनीय है भी । किन्तु ब्राउनिंग को यदि यह ज्ञात होता कि भारतवर्ष मे राजस्थान जसा एक अद्वितीय प्रदेश भी है जहा मृत्यु को त्यो हार के रूप मे मनाया जाता है । धारातीर्थ म स्नान करना जहा परम पुण्य और पवित्र कत्तव्य समझा जाता है तो निश्चित ही उनकी वाणी प्रफुल्लित होकर प्रशसा के बहुमुखी उदगारो म फूट पडती । राजस्थान न अपने रक्त स जिस साहित्य का निर्माण किया है उससे टक्कर लेने वाला साहित्य कही भी नही मिलता । राजस्थान का यह मरण त्यो हार तो एकदम नवीन है और यह कोरी कवि कल्पना ही नही यह एक ऐसा समुज्ज्वल एतिहासिक तथ्य है कि जिस पर सहस्रो सुन्दर भावनाए भी न्योछावर की जा सकती हैं ।

वीर सतसई की नारी तो कहती है मेरे पति युद्ध से भाग कर आ गये हैं जो मेरे लिए मरण तुल्य हैं ऐसी स्थिति मे मुझ जसी विधवाओ के लिए कसा शृगार ? पति युद्धस्थल म सदा के लिए सो जाए और मैं अग्नि की ज्वालाओ के गाढालिंगन हेतु उसके पास जाऊ तभी मेरा शृगार होता है, इसके पूव कसा शृ गार ?' कल्पना कीजिए ऐसी नारी की जो शृ गार भी मरण के अवसर पर ही करती हैं—

मणिहारी जा री सखी, अब न हवेली आव ।
पीव मुआ घर आविया, विधवा किसा बणाव ।

विधवा किसा बणाव' मे दु ख एव परिताप की एक सद आह है । पीव मुवा घर आविया जसी भावना तो शेक्सपियर ने भी लिखी है और बताया है कि कायर व्यक्ति अपनी मृत्यु से पूव जीवन मे कई बार मरत हैं परन्तु वीर पुरुष एक ही मृत्यु का आलिंगन करता है—

Cowards die many a time
before their deaths
The valient never taste of death
but once
—Shekeshpeare

श्री वियोगीहरि कृत वीर सतसई म भी इसी प्रकार का भाव मिलता है—

'कायर जीवित ही मरत दिन मे बार हजार।
प्राण पखेरू वीर के उडत एक ही बार।'

ठीक ऐसा ही भाव आर्यावर्त मे आया है

'कायरो की मृत्यु सास सास पर होती है।
कापता है मरण पराक्रमी की छाया से।'

'इला न देणी आपणी' की लोरी देने वाली वे नारिया पालने मे ही पुत्र को इस मरणोत्सव का महत्व सिखला दिया करती थी लेकिन आज वे नारिया कहा? आज के कवि को तो इसलिए करुणाजनक स्वर में कहना पडता है —

'याति मात्र रह गई मानवी
निज आत्मा का अपण।'

लेकिन कवि बाकीदास जी जो कह गये उसे आज कौन कहने वाला है —

सूर न पूछे टीपणौं सुकुन न देखे सूर।
मरणा नू मगल गिणै समर चढे मुख नूर॥

डा० कन्हैयालाल सहल के शब्दो मे किसी प्रबल वेगमयी बलवती एव स्फूर्तिमयी भावधारा से अनुप्राणित हुए बिना मृत्यु का निर्भीकतापूर्वक विराट आलिंगन कभी सभव नही हो सकता। यदि ऐसा न होता तो किसी को क्या पडी है जो मृत्यु की विभीषिकाओ से खेले। राजस्थान के अमर कवियो ने इस प्रकार के दिव्य चित्र उपस्थित किये हैं। क्यो नहीं देश के चित्रकार भी आज ऐसे चित्र प्रस्तुत करें, जिनसे देशवासियो को अनोखी प्रेरणा मिल सके। डा सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने यह यथार्थ ही लिखा है कि राजस्थान माता की मूर्ति यदि बनाई जाये तो उसके एक हाथ मे तलवार और दूसरे म वीणा देना ठीक होगा। राजस्थान अपने वीरों की शूरता से जितना गौरवान्वित है अपने साहित्य से भी उससे कम गौरवान्वित नही। आज ऐसी अनेक वीर सतसईयों की आवश्यकता है जो जनमन में जोश उमग और प्रेरणा भर दे।



वश भास्कर -- एक ऐतिहासिक कृति

डॉ० के एस गुप्ता

चारण-साहित्य की परम्परा मे जहाँ चन्द बरदाई कृत पृथ्वीराज रासो एक बिन्दु है तो दूसरा बिन्दु सूर्यमल्ल मिश्रण कृत 'वश भास्कर' है। डॉ० रघुवीरसिंह ने ठीक ही लिखा है कि 'मध्यकालीन राजस्थान मे भाषा वचित्र्यपूर्ण साहित्यिक तथा अध्ययनीय ऐतिहासिक काव्य ग्रन्थो की विशिष्ट परम्परा की महत्वपूर्ण अन्तिम कडी होने के कारण वश भास्कर का राजस्थान के और ऐतिहासिक आधार-सामग्री मे उल्लेखनीय स्थान है। वश भास्कर प्रणेता सूर्यमल्ल मिश्रण का जन्म १६ अक्टूबर सन् १८१५ ई० मे हुआ था। इनके पिता चण्डीदान स्वय भी एक प्रकाण्ड पडित और प्रभावशाली कवि थे। चण्डीदान ने अपने जीवन काल मे जो लिखा उसमे तीन कृतियाँ विशेष महत्व की हैं– (१) बल विग्रह (२) वशाभरण (३) सार सागर। इन ग्रन्थो मे जिस प्रकार देश भक्तो के शौर्य की गाथाओ का विवरण दिया उससे स्पष्ट है कि व उग्र काव्य प्रकृति के धनी थे। वस्तुत मिश्रण परिवार मे आत्मसम्मान और देश प्रेम की निरन्तर परम्परा रही है। उसी वातावरण मे सूर्यमल्ल बडे हुए। बाल्यकाल से ही सूर्यमल्ल कुशाग्र-बुद्धि और अपूर्व स्मरण शक्ति के धनी थे। उनकी विद्वता को तो इसी से ही समझा जा सकता है कि उन्होने दस वर्ष की अल्पायु मे ही 'राम रजाट' खण्ड काव्य की रचना करली थी। १२ वर्ष की अवस्था तक व्याकरण गत पद ज्ञान मे वे पारगत हो गये थे। जिन जिन विद्वानो से उन्होने ज्ञान प्राप्त किया उसका उल्लेख वश भास्कर मे किया है। दादु पथी साधु स्वरूप दास और आशानन्द नामक गुरु सूर्यमल्ल के विशेष श्रद्धा भाजन थे। स्वरूपानन्द से योग वेदान्त न्याय वशेषिक साहित्यादि

के ज्ञान की प्राप्ति की। आशानन्द ने उन्हें व्याकरण, कोश ज्योतिष, छन्द शास्त्र, काव्य, अश्ववैद्यक और चाणक्य शास्त्र की शिक्षा दी। मुहम्मद से सूयमल्ल ने फारसी और पवन से वीणा–वादन सीखा। सूयमल्ल मे विद्या, विवेक, और वीरत्व का सुन्दर सगम था। उसके जीवनकाल म ही उनकी कीर्ति का प्रसार भारत के सुदूरवर्ती क्षेत्रों तक हो गया था। तत्कालीन बुद्धिजीवी समाज म वे एक महाकवि एव सत्यवक्ता मानव के रूप मे प्रतिष्ठित थ। राजदरबार मे उनका गौरवपूर्ण स्थान था। उनकी गणना बून्दीके पाँच रत्नो मे थी। राजा महाराजा उनसे प्रेरणा प्राप्त करते थे और जनसाधारण उनके द्वारा रचित गीत गा गा कर वीरो के कार्यों का स्मरण करता हुआ गौरवान्वित होता था। बड बड भू पति प्रतिष्ठित कवि और विद्वान उनके सम्पक के लिए लालायित रहते थे। उन्होने अनेक रचनाओ की रचना की परन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण निम्नांकित हैं—

(१) वश भास्कर (२) वीर सतसई (३) बलवद् विलास। इनमे उनकी सर्वाधिक मान्य एव यशस्वी कृति वश भास्कर है। इस उनकी कीर्ति का मुख्य आधार स्तम्भ कहें तो कोई अतिशयोक्ति नही है।

कहा जाता है कि बून्दी नरेश रामसिह ने महाभारत के समान अपने वश के लिए एक ग्रन्थ प्रणयन की इच्छा व्यक्त की। अपने स्वामी की इच्छा पूर्ति हेतु सूयमल्ल ने वश भास्कर लिखने का निणय लिया। परन्तु उसने रामसिह से यह वचन लिया कि जो सही बात होगी उस लिखने को ही वह बाध्य होगा। महाराव के इस शत को स्वीकार कर लेने पर ग्रन्थ का निर्माण वैशाख शुक्ला तृतीया सवत् १८९७ क दिन प्रारम्भ हुआ। काव्य रचना तीव्र गति स प्रारम्भ हो गई। सूयमल्ल के साथ चार लेखको को आबद्ध किया लेखन के वेग का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि चारों लेखक अत्यन्त परिश्रम करके ही उसको लेख बद्ध कर पाते थे परन्तु आश्चय है कि रावराजा की तीव्र इच्छा तथा लेखन पूर्ण वेग से प्रारम्भ होने पर भी ग्रन्थ अपूर्ण रह गया। ग्रन्थ लेखन का काय सूयमल्ल न सवत् १९१३ मे रोक दिया। रामसिह ने इसे पूर्ण करने क लिए कवि से बार बार आग्रह भी किया और इस आग्रह ने १८६० ई म कतिपय अश जोडे भी। सूयमल्ल अगले आठ वष और जीवित रहे लेकिन इस पूर्ण करने की और बिलकुल ध्यान नही दिया। बाद मे उसके दत्तक पुत्र मुरारीदान ने पूरा किया। सूयमल्ल द्वारा ग्रन्थ को पूर्ण न करने के अनेक कारण बताये जाते हैं। एक मत यह है कि महाराव रामसिह के दोषो का वणन करने के फलस्वरूप दोनो म मन मुटाव हो गया और यह ग्रथ अधूरा ही रह गया। अग्रेजो के प्रति दृष्टिकोण को लेकर मत भेद का अन्य कारण भी बताया जाता है। रामसिह अग्रेजो के शासन का भक्त था जबकि सूयमल्ल अग्रेजो के शासन के कटु आलोचक। वे एक देश भक्त एव स्वतन्त्रता प्रेमी थे। जब कि उनका शासक अग्रेजी शासन मे शान्ति व सुरक्षा देख रहा था। अत दोनो मे गहन मतभेद हो जाने से ग्रन्थ का काय आगे नहीं बढ पाया। १८५७ की गतिविधियो का विश्लेषण करें तो मतभेद का कारण यह मत उपयुक्त नही प्रतीत होता। ये शासक जिसने स्वतन्त्रता सेनानी तात्याँ टोपे को बून्दी से सात लाख रुपया

लूट लेने दिया हो और जिसने सूयमल्ल को वीर सतसई अपने आश्रय मे लिखने दिया हो उसे अंग्रेज भक्त कहना उपयुक्त नहीं लगता। सम्भवत १८५६ के पश्चात अंग्रेजो के विरुद्ध वातावरण बनाने म लगने मे सूयमल्ल को यह काय रुचिकर न लगा हो। अत ऐसी अवस्था मे यह ग्रन्थ अपूर्ण छोड दिया हो। अत घटनाओ का विश्लेषण करें तो प्रथम कारण अधिक मान्य प्रतीत होता है। अपूर्ण होते हुए भी यह बहुत ही विस्तृत ग्रन्थ है। सम्भवत इससे बडा ग्रन्थ हिन्दी मे कोई नही है। अधूरा होते हुए भी यह लगभग तीन हजार मुद्रित पृष्ठो मे समाया हुआ है। कानूनगो के अनुसार तो यह ग्रन्थ ऐतिहासिक दृष्टि से पृथ्वीराज रासो से भी अधिक महत्वपूर्ण है और साहित्यिक दृष्टि से १ वी शताब्दी के महाभारत की गणना म रखा जा सकता है।

वश भास्कर मे वर्णित इतिहास का क्षेत्र विस्तृत है। नि सन्देह चौहान वश, मुख्यत बूदी के हाडा वश का ही इतिहास लिखना वश भास्कर का इतिहास रहा है फिर भी ऐतिहासिक कलेवर मे राजस्थान का ही नही वरन् समस्त भारतवष का इतिहास सम या हुआ है। अग्निवशीय क्षत्रियो को प्रतिहार चालुक्य परमार और चौहान चारो शाखाओ की अग्निकुड से उत्पत्ति वशावलियो सहित उनकी विभिन्न राज्यो की स्थापना आदि का विस्तृत विवरण चौहान वश की शाखाओ, उपशाखाओं के परिचय के बाद कवि बूदी के राजवश का चित्रण करता है। सन् १८५७ के स्वतत्रता सग्राम का सक्षिप्त कि तु सारगर्भित उपयोगी आखों देखा वणन भी है। यो एक वृहद् इतिहास की रचना कवि ने की है जिसमे सृष्टि रचना स लेकर भारत म अंग्रेजी राज की स्थापना तक का ऐतिहासिक ब्योरा आ गया है। बूदी राज्य क सस्थापक से लकर करीब अकेले हाडा वश क लगभग दो सौ नरेशो का चित्रण वश भास्कर मे मिलता है। राजस्थान के शासको के पारस्परिक सम्ब ध तथा चौहान वश के परिवेश म केन्द्रीय शक्तियो के इतिहास का भी इस ग्रन्थ मे समावेश किया है। इतना ही नही विदेशी जातियो का भारत मे आना उनके सघर्ष, दिल्ली सुल्तानो की समस्त भारत-गति विधिय [illegible] विस्तृत लेखा इस ग्रन्थ से ज्ञात होता है। दिल्ली के सुल्तान अलाउद्दीन की दक्षिण विजय मुगल कालीन भारत के विभिन्न क्षेत्रो की घटनाओ का विशद वणन भी वश भास्कर म मिलता है। राजनतिक घटनाओ क अलावा सामाजिक तथा सास्कृतिक दृष्टि से भी रीति रिवाज, मनोरजन साधनो नृत्य एव नाट्य उत्सव व त्योहारो का भी इसम विस्तृत विवरण है। डॉ० खान के अनुसार नागर जीवन और क्षयमान सामतकाल के जन जीवन का साकार चित्र जिस प्रकार वश भास्कर मे मिलता है अन्यत्र दुलभ है। सैन्य वणन म सैन्य सज्जा अभियान रीति युद्ध मे व्यूह रचना शस्त्रो आदि के बारे मे भी इस ग्रन्थ से अच्छा प्रकाश पडता है।

वश भास्कर मे इस व्यापक ऐतिहासिक सामग्री के सकलनाथ सूयमल्ल न अपने समय मे उपलब्ध कई ऐतिहासिक साधनो का उपयोग किया है। उसका क्षेत्र वेद, पुराण रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थो से लेकर सस्कृत भाषा के नाटक व अन्य कृतियों, बडवा भाटों की पोथियों, रास ख्यातो वातो एव विभिन्न राजघरानो की दफ्तर बहियो तथा फारसी तवारीखो तक व्यापक है। कानूनगो के शब्दो मे 'वश भास्कर का

सबसे अधिक महत्व एतिहासिक सामग्री का सकलन है।' परन्तु गहलोत का कहना है कि वंश भास्कर कर्नल टॉड के 'राजस्थान का इतिहास' के आधार पर और अंग्रेज सरकार की रिपोर्टो के सहारे लिखा गया है। उसमें भी आधुनिक खोज से काम लिया गया है। ओझा ने भी सूर्यमल्ल की ऐतिहासिक लेखन कला को भ्रान्तिमूलक माना है। उनका मानना है कि कवि का लक्ष्य केवल कविता की ओर ही रहा है न कि प्राचीन इतिहास की शुद्धि की ओर। यद्यपि वंश भास्कर का लक्ष्य कविता करना रहा किन्तु इतिहासकार के उत्तरदायित्व को उसने अवहेलना नहीं की है। जहाँ तक इतिहास शुद्धि का प्रश्न है उसमें जो इतिहास सामग्री दी है उसमें अधिक की आशा हम कर भी नहीं सकते हैं क्योंकि उस युग में इतिहास के साधन आज की तरह प्रचुर मात्रा में नहीं थे और न उस दिशा में विशेष शोध खोज हो पाई थी। उसने उपलब्ध सामग्री के अध्ययन के आधार पर ही मत निर्धारित करने का प्रयास किया। मिश्रण ने स्पष्ट लिखा है कि प्राप्त सामग्री में एक ही तथ्य के बीसों रूपान्तर मिलते हैं और उन्हें साधन उपलब्ध न होने के कारण उन्हीं को समावेश कर लिया। अत पाठकों को नीर-क्षीर विवेक से जो उसमें सार है उसे ही ग्रहण करना चाहिए। यों यह कहा जा सकता है कि यह कमी सूर्यमल्ल की कमी न होकर उनके युग की इतिहास लेखन प्रक्रिया की कमी है। वास्तव में इतिहासकार के रूप में मिश्रण के सम्बन्ध में दो प्रकार की धारणायें प्रचलित है- एक धारणा के अनुसार उनके जैसा इतिहासवेत्ता नहीं हुआ है। दूसरी धारणा के अनुसार वे कवि और प्रचण्ड विद्वान हैं लेकिन इतिहासवेत्ता नहीं। डा० आलमशाह खान के अनुसार इन दोनों धारणाओं में पुरानी और नई पीढ़ियों के साथ ही नये और पुराने दृष्टिकोण का अन्तर है। पुरानी पीढ़ी का इतिहास विषयक दृष्टिकोण परम्परागत पुराणों के इतिहास की शैली पर ही आधारित है। राजस्थान के लेखकों इतिहासकारों और विचारकों ने अधिकांशतः इसी का अनुसरण किया है। राजप्रशस्ति अमर काव्य आदि ग्रन्थ इसी प्रवृत्ति को लेकर लिखे गये हैं। इसके विपरीत नई पीढ़ी उसे ही इतिहास मानती है जिसमें वैज्ञानिक पद्धति से तथा तथ्य का विश्लेषण कर शुद्ध सत्य का प्रतिपादन किया हो।

जहां तक तथ्य कथन और सत्य प्रतिपादन का प्रश्न है सूर्यमल्ल पर हम अंगुली नहीं उठा सकते हैं। इसके लिये प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि उसने निष्पक्ष भाव से अपने आश्रयदाताओं के राजवंशीय दोषों का निर्देशन किया है। जैसे बुधसिंह को आलसी प्रमादी अधर्मी तक की निसंकोच संज्ञा दी तथा बून्दी के अधःपतन के लिए उत्तरदायी माना। सुजन के निर्बल पक्ष का भी उन्होंने खुलकर वर्णन किया। और तो और अपने स्वामी रामसिंह के वर्णन का जब अवसर आया तब भी सत्य तथ्य की ओर से विमुख नहीं हुवे। उन्होंने वंश भास्कर जैसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ की रचना छोड, उसे अपूर्ण रखना स्वीकार किया पर तथ्यों की हत्या कर रावराजा रामसिंह का/मात्र स्तुति-परक इतिहास लिखना स्वीकार नहीं किया। डा दशरथ शर्मा ने भी स्वीकार किया कि सूर्यमल्ल ने सभी घटनाओं का निष्पक्षता से वर्णन किया है। कवि की सत्य निष्ठा को देखकर ही बारहठ कृष्णसिंह ने उसे शपथपूर्वक इतिहासवेत्ता कहा है।

वंश भास्कर की ऐतिहासिक महत्ता इसी से स्पष्ट है कि आधुनिक इतिहासकारों ने अपनी कृतियों में इसका उपयोग किया है। डॉ मथुरालाल शर्मा ने इसके तृतीय एवं चतुर्थ भाग को ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत ही उपयोगी माना है। यह भाग बूंदी, कोटा अथवा राजस्थान के इतिहास के लिए ही नहीं अपितु भारतीय इतिहास के लिए भी उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। कानूनगो ने तो दुःख प्रगट किया कि अभी तक भी इतिहासकारों ने इस ग्रंथ का अब तक उचित मूल्य नहीं समझा। राजनीतिक इतिहास के साथ-साथ वंश भास्कर का महत्व सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास जानने के रूप में अत्यधिक है।

सारांश में हम यह कह सकते हैं कि सूर्यमल्ल के ग्रंथ में विश्लेषण प्रक्रिया का अभाव हो परन्तु उसने इस बात के प्रति बराबर सतर्कता बरती है कि उसकी रचना में असत्य और अतथ्य का मेल न हो और इसी आधार पर वंश भास्कर को एक ऐतिहासिक ग्रंथ कहें तो अनुचित नहीं होगा। वास्तव में यह राजस्थान का अत्यन्त ही मान्य और यशस्वी ग्रंथ है। आलमशाह खान ने ठीक ही लिखा है कि "वंश भास्कर' से जो रश्मियां विकीर्ण हुई, उनसे जहां एक ओर रण-धवल राजस्थान का अतीत आलोकित हुआ वहीं उसका बांका वीरत्व और पराक्रमी, शौर्य प्रदीप्त वाणी में मुखरित हो उठा जो राजस्थानी जन मानस को दूर तक प्रभावित करने में समर्थ हुआ।' वास्तव में देखा जाय तो १६वीं २०वीं शताब्दी के चारणी रचनाकारों में एक विशेषता यह भी है कि उनमें प्रतिबद्ध राष्ट्रीयता के दिग्दर्शन होते हैं। अंग्रेजों के विरुद्ध देश भक्ति की उग्र विचारधारा का प्रतिपादन उनकी लेखनी से होता है। अतः इतिहास लेखन में भारत में राष्ट्रीय परम्परा की विचारधारा को पोषित करने में राजस्थान का भी कम योगदान नहीं है और इसका सर्वाधिक श्रेय सूर्यमल्ल मिश्रण को जाता है।

अपूर्ण क्यो रहा वश भास्कर

घनश्याम वर्मा

वश भास्कर महाकवि सूयमल्ल मिश्रण की अक्षय कीर्ति की एक ऐसी आधार-स्तम्भ रचना है जो युगो युगों तक उनकी ख्याति को जीवन्त बनाये रखन मे समथ है। यह एक ऐसा काव्यमय इतिहास ग्रथ है जिसने उस काल म राजस्थानी जनमानस को प्रेरित एव प्रभावित किया। इस ग्रथ मे प्रसिद्ध चौहान शासको के वश के इतिहास का वणन विस्तार पूर्वक किया गया है। इसके अलावा वश भास्कर युद्ध कला कौशल, ज्योतिष, योग धर्म, आध्यात्म तथा अन्यान्य पुरातन कलाओं एव विज्ञानों के ज्ञान का समृद्ध कोष भी है। इस विशाल ग्रथ म हाडा चौहान वश के करीब दो सौ नरेशो का वत्तान्त जीवन चर्या, फौजी कारनामों एवं अन्य क्रिया कलापो का विशद् वणन महाकवि ने किया है।

वश भास्कर की रचना रावराजा रामसिह् के आदेश म उनके दरबारी कवि सूर्यमल्ल ने ज्योतिष शास्त्र की नितान्त सूक्ष्म गणना के आधार पर विक्रम सवत् १८९७ वमाख सुदी तृतीया सोमवार अर्थात् ४ मई १८४० म आरभ की। उस काल मे इस महाकाव्य के सृजन मे दस हजार रुपये व्यय हुए थे जिससे यह सिद्ध होता है कि नरेश रामसिह् ने इस महत्त्वाकाक्षी ग्रथ के निर्माण मे कितनी रुचि ली थी। दुर्भाग्य वश ग्रथ अपूर्ण ही रहा जिसके पाश्व मे रामसिह् की नाराजगी प्रमुख कारण था।

सूयमल्ल ने इस ग्रथ के निर्माण में श्रुति लेख पद्धति काम मे ली। सूयमल्ल के पौत्र ठाकुर कालूदान के पुत्र क कथनानुसार आठ व्यक्ति सूर्यमल्ल जी के दायें बायें

बैठकर बहुत कठिनाई से उनकी कविता को लिपिबद्ध कर पाते थे। कहा जाता है कि वे इन लेखकों को सुबह से शाम तक अपने साथ रखते। मद्यपान करने के बाद अथवा जब कभी उन्हें लहर आती कि अचानक 'हूँ' करते। 'हूँ' करते ही लेखक सावधान हो जाते और लिखने को तत्पर हो उठते। ज्यों ही कवि के मुख से वाणी फूटती कि वे लोग लिखने लग जाते। सरपट कलम दौड़ने लगती। एक का क्रम टूट गया तो दूसरा लेखक उसे पकड़ कर जोड़ देता। घंटों तक सरस्वती कवि की जिह्वा पर नृत्यरत रहती। अचानक क्रम टूटता तब वह कह उठते—बस ! सरस्वती माता ! कृपा करो ! अब मेरी क्षमता नहीं रही अधिक वाणी को वहन करने की ! उठ करो माँ ! लम्बी सांस लेकर सूर्यमल्ल माथा ऊँचा करते। इसी पद्धति से वंश भास्कर की रचना हुई। मद्योन्माद के कारण वंश भास्कर में यत्र तत्र ऐतिहासिक सन् संवत् की भूलें भी हुई हैं।

महाकवि ने महाभारत सदृश इस विशाल ग्रंथ की रचि के ग्रंथ अयनों बारह अंशों और सहस्र मयूखों में रचना की योजना बनाई थी परन्तु योजना पूर्ण रूप से क्रियान्वित नहीं हो सकी। दो अयनों में पूर्वायण तथा उत्तरायण में डेढ राशि (अंश) मात्र है। इसमें २१० मयूखों में छः राशियों की रचना के बाद पूर्वायण की समाप्ति तथा उत्तरायण में सातवीं राशि लिखकर आठवीं राशि पूरी भी नहीं कर पाया था कि महान कार्य को बीच में रोक देना पड़ा। यदि उत्तरायण भी पूर्वायण के समान योजनानुसार सृजित किया जाता तो वंश भास्कर की पूर्ति में साढ़े तीन राशियों के अन्तर्गत ६२७ मयूखों का निर्माण और होता तब इसका आकार तिगुना हो जाता और अनुमानतः यह ग्रंथ दस हजार मुद्रित पृष्ठों में पूर्ण हो पाता जबकि अभी यह अधूरा होते हुए भी ढाई हजार मुद्रित पृष्ठों में है। संक्षिप्त टीका सहित पृष्ठों की संख्या ४ हजार ३६८ तक पहुँची है।

ग्रंथ के प्रेरक रावराजा रामसिंह और प्रणेता सूर्यमल्ल के जीवित रहते हुए भी ग्रंथ का अपूर्ण रह जाना इतिहास की उल्लेखनीय घटना है। कहा जाता है कि जब रामसिंह ने सूर्यमल्ल से वंश का इतिहास लिखने को कहा था तब सूर्यमल्ल ने यह निवेदन कर दिया था कि वह जो भी बात लिखेगा वह सच ही लिखेगा। उसका नरेश बुरा न मानेंगे। रावराजा रामसिंह ने उनकी बात मान ली। तब उन्होंने ग्रंथ की रचना आरंभ की थी। सूर्यमल्ल रामसिंह के पूर्वज राजाओं के गुणावगुण विस्तार पूर्वक लिखाते रहे। जब रामसिंह की बारी आई तब उनके गुण दोष भी लिखे जाने लगे। यह बात किसी तरह रामसिंह तक पहुँची तब उसने कहा कि सूर्यमल्ल आपने मेरे बाप दादाओं के जो दोष लिखे हैं उन्हें पढ़कर तो मैंने सब्र किया लेकिन अपने दोषों के लिए नहीं कर सकता। सूर्यमल्ल ने स्पष्ट कहा कि जब सबके दोष लिखे गये हैं तो आपके भी लिखे जायेंगे। रामसिंह ने कहा कि ऐसा लिखने से तो नहीं लिखना ही अच्छा है। यह सुनकर सूर्यमल्ल ने उसी दिन से वंश भास्कर बनाना छोड़ दिया। संवत् १९१३ में पहली बार रचना स्थगित हुई। रामसिंह के आदेश से पुनः संवत् १९१५ में रचना आरंभ हुई लेकिन कवि का अब मन नहीं रम सका और रचना अंतिम रूप में बन्द हो गई।

इस ग्रंथ की रचना अवरुद्ध होने के समय रामसिंह के राज्यकाल का लगभग संवत् १८६० तक का इतिहास लिखा जा चुका था। यहाँ तक रामसिंह के चरित्र का उज्ज्वल पक्ष वर्णित है। जब उसके दूसरे पक्ष को जानने के पृष्ठ पलटते हैं तो सूर्यमल्लस्य काव्य समाप्तमिदम् हमारे सामने आता है और आगे उसके दत्तक पुत्र मुरारिदान द्वारा रचित निरा स्तुति परक 'राम चरित्र' प्रारंभ हो जाता है। और इसी के साथ वंश भास्कर समाप्त हो जाता है। रचना बंद करने के बाद सूर्यमल्ल ८–१० वर्ष तक जीवित रहा लेकिन ग्रंथ की ओर बिल्कुल उन्मुख नहीं हुआ। सूर्यमल्ल के मरणोपरान्त उनके दत्तक पुत्र मुरारिदान से रामसिंह ने आठवीं राशि की पूर्ति करवाई और पुरस्कार में उसे एक गाँव दिया। सूर्यमल्ल की मृत्यु के बाद उसकी छः विधवा पत्नियों को भी एक गाँव आजीवन दे दिया गया।

वंश भास्कर की रचना के महायज्ञ को बीच में रोक देने की घटना से यह सिद्ध होता है कि महाकवि कितना सत्य निष्ठ, दृढ़ प्रतिज्ञ, स्वाभिमानी और राष्ट्र प्रेमी था। राजस्थान के इतिहास में सूर्यमल्ल जैसा बहुगुणी व्यक्तित्व ढूँढने से नहीं मिलता जिसने जीते जी अपने स्वामी की गहरी भक्ति और अनिच्छा होने पर उतनी ही विमुक्ति भावना से सेवा की। सूर्यमल्ल को यह संस्कार पैतृक रूप में ही प्राप्त हुआ था। वह छः भाषाओं का प्रकाण्ड विद्वान और वीररसावतार था जिसकी अमर कृति वंश भास्कर युगों युगों तक राजस्थान की सभ्यता और संस्कृति के स्मारक ग्रंथ के रूप में ही नहीं भारतीय ज्ञान परम्परा का समृद्ध कोष के रूप में भी अक्षुण्ण बना रहेगा।



राष्ट्रीय चेतना और क्रांतिचेता महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण

डॉ लक्ष्मीनारायण नन्दवाना

महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण एक क्रांतिचेता और यशस्वी साहित्यकार थे। उनके काव्य का सम्यक मूल्यांकन तत्कालीन युग और परिवेश को ध्यान में रखकर ही किया जा सकता है। जब तक हम उस काल की सामाजिक सांस्कृतिक और राजनीतिक परिस्थितियों को ध्यान में नहीं रखेंगे तब तक उस रचनाकार के सृजन को भलीभांति नहीं समझ पायेंगे। सूर्यमल्ल का समय अंग्रेजों के वर्चस्व का काल था। अंग्रेजों का सम्पूर्ण भारत पर निरंकुश आधिपत्य था। उन्होंने स्थानीय फूट का भरपूर लाभ उठाया और भारत को छोटे छोटे टुकड़ों में बिखर दिया। अंग्रेजों की सत्ता का आधार ही राष्ट्र, समाज और जाति का विभाजन था। अंग्रेजों ने दर्प एवं दीनता से स्थानीय जनता में साम्प्रदायिक विद्वेष पैदा कर दिया था। अंग्रेजों की कूटनीति का सीधा अर्थ था भारतीय जनता को गुलामी के शिकंजे में अधिकाधिक कसना और उनका आर्थिक शोषण कर अपनी सत्ता को सशक्त करना। इस दमघोटू वातावरण को लेकर स्थानीय जनता में रोष एवं आक्रोश भी था लेकिन उन्हें कोई मार्ग दिखाई नहीं दे रहा था। अन्दर ही अन्दर अंग्रेजों के विरुद्ध जन-असंतोष भी बढ़ता जा रहा था लेकिन इसे एक दिशा नहीं मिल पा रही थी। संचार साधनों की न्यूनता जन-सम्पर्क का अभाव तथा सामन्तशाही के कारण इस समय इस आक्रोश को अंग्रेजों के विरुद्ध प्रहारक करने के लिए उचित नेतृत्व और संगठन की आवश्यकता थी। एक राष्ट्रीय चेतना और उसको एक दिशा देने हेतु धरातल तैयार किया जाना था। ऐसे ही समय राजस्थान में बूंदी

के महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने सम्पूर्ण राष्ट्रीय चेतना और जन-जागृति से अ जोड़ा। सूर्यमल्ल जी का व्यक्तित्व धीरे धीरे राष्ट्रीयता और जन चेतना का पर्याय जा रहा था। वे अंग्रेजो से मुक्ति और अपनी धरती को आजाद कराने के लिए प्रयत् हुए। अपनी रचनाधर्मिता का उन्होंने यही लक्ष्य रखा। उनका उद्देश्य और गतव् था। सूर्यमल्ल का काव्य ओजपूर्ण था। उन्होंने इस सांस्कृतिक जागरण के समय रा चेतना के लिए समूहबद्ध होने हेतु जगह-जगह से संदेशवाहक और पत्र भेजे और सूचन को संग्रहीत किया। सूर्यमल्ल जी एक स्वप्न देख रहे थे और वह स्वप्न राष् स्वाधीनता का था। अपनी भूमि की दासता से मुक्ति का था। उन्होंने अपने सृजन प्रतिष्ठा को और अपनी सम्पूर्ण सुख सुविधाओं को देश की स्वतन्त्रता के लिए सम कर दिया। उनके लिए राष्ट्रीय चेतना की जागृति व विस्तार सर्वोपरि था।

दरअसल राष्ट्रीयता के मूल मे देशभक्ति की भावना निहित होती है। भक्ति मे व्यक्ति का यह समग्र देश मे लीन होकर अपने रूप को विस्तारित कर और यही देशभक्ति इस व्यक्ति को समष्टि मे परिवर्तित करती है। फिर यही व्य जाति, समाज या राष्ट्र का पर्याय बन जाता है। राष्ट्रीय साहित्य मे किसी भी देश जाति का समूचा रागात्मक रूप मिलता है। विशाल जनचेतना की जागृति की दृष्टि इस साहित्य का बड़ा महत्व है। इस साहित्य मे केवल देश या राष्ट्र की प्रशस्ति नहीं है अपितु जन आकाक्षाए जन स्वप्न और जन रोष भी समाहित है। इस प्र जनता की भावना ही राष्ट्रीय साहित्य मे प्रतिध्वनित होती है। और सूर्यमल्ल साहित्य को देखें तो इसमे राष्ट्रीय चेतना और जन जागृति सर्वाधिक है।

सूर्यमल्ल जी बूंदी के शासक रावराजा रामसिंह के यहा थे। महाकवि ने अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए तैयार कर लिया था। इसका प्रमाण नामक ठाकुर बख्तावर सिंह को सवत् १९१४ मे लिखे एक पत्र का यह अंश द्रष्टव्य है— ' उधर की तरफ से पृथ्वी तथा अप्सराओ के आशिक लोगो मे राज्य और प्राणो की ब लगाने वाले वीर जो कुछ अपने साथी होते हुए दिखाई पड़ते हो तो गुप्त रूप से लिख सो अयत्र भी बीज नही डूबा है। इसलिए और भी कई साथी होने के लिए तयार और बाद मे भी कई साथी तैयार हो जावेंगे और साथी तैयार करने का दायित्व हम लोगों का कुल क्रमागत है। आप वहा से सूची भेजेंगे तो यहा से भी ब्योरेवार लि जायेगा। इस समय तो गुप्त ही ठीक है।' प्रस्तुत पत्र स्पष्ट करता है कि कवि शह या मरजीवो की टोली सगठित कर रहा था। कवि अंग्रेजो के विरुद्ध एक ऐसे सग की कल्पना को साकार करना चाहता था जो येन केन प्रकारेण संघर्ष करें और अ युद्ध कौशल से देश को आज़ाद करायें। सूर्यमल्ल जी जानते थे कि जन चेतना अ सगठन शक्ति से ही ये अंग्रेज हिंदुस्तान से जाएंगे अन्यथा इनकी दासता से मुक्ति और कोई साधन नहीं है। एकता और राज्य क्रांति मे कितनी रुचि थी यह इस पत्र स्पष्ट है जिसमे सूर्यमल्ल जी ठाकुर बख्तावर सिंह को लिखते हैं 'इसलिये राजपूतो जब कभी वीरत्व की भावना देखी या सुनी जाती है तब मन मे आनन्द आ जाने व्यसन है। लोभ अनेक तरह के होते हैं उनमे से रजपूत की रजपूती देखने का भी

लोभ है। इस लोभ का मुझ पर अधिक असर है और सुनते हैं कि साथी भी बहुत मिल जायेंगे पर हिन्दुस्तान के दिन अच्छे नही है इसलिए आपस मे एकता नहीं करते।' सूयमल्ल जी बूंदी मे बैठे हुए भारतीय स्वाधीनता सग्राम के दोनो ही पक्षो को देखते हैं वे जानते हैं कि सफलता का परिणाम क्या होगा और असफलता की स्थिति से भी व पूर्णतया परिचित हैं। इसलिए सूयमल्ल जी अपने पत्र और कविता के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना मे सनद्ध थे।

राष्ट्रीय कविता राष्ट्र की धडकन होती है। राष्ट्र या राष्ट्रीयता जस शब्द कई बार हमे सभ्रमित करते हैं क्योकि पाश्चात्य विचारको के अनुरूप राष्ट्र की परिकल्पना उस युग मे लागू नहीं होती। उस समय जो जातीय चेतना है उसे ही राष्ट्रीय चेतना का पर्याय माना जा सकता है। भूमि जन और वहा की सस्कृति का सम्मिलित रूप राष्ट्र कहा जा सकता है यानी कि भौगोलिक एकता, राजनतिक एकता और सास्कृतिक एकता का तात्पय ही राष्ट्र है। अग्रेजी मे जिसे नेशन कहा है वह राष्ट्र है और 'नेशनलिस्टिक कहा गया है उसे ही सामान्यतया राष्ट्रीय का पर्याय माना जाता है। नेशनलिज्म एण्ड गवनमेट पुस्तक मे श्री जिमरन ने लिखा है– मेरी दृष्टि मे राष्ट्रीयता का प्रश्न सामूहिक जीवन सामूहिक विकास और सामूहिक आत्म सम्मान से जुडा है।' जब किसी जन समूह मे धम भाषा, जाति सस्कृति इतिहास और भूगोल की एकता हो तो वह राष्ट्र बनता है। इसका स्पष्ट तात्पय यह है कि किसी जनसमूह की बुनियादी एकता ही उसे राष्ट्र बनाती है। इस प्रकार जब हम सूयमल्ल के साहित्य मे राष्ट्रीय साहित्य के सदभ मे विचार करते हैं तो स्पष्ट ही लक्षित होता है कि उनका साहित्य राष्ट्रीय एकता के लिए समर्पित साहित्य था। सूयमल्ल जी के लिखे ग्रथो मे सर्वाधिक महत्वपूर्ण वश भास्कर' और वीर सतसई है। वश भास्कर ऐतिहासिक एव सास्कृतिक वहद ग्रन्थ है तो वीर सतसई स्वतत्रता के अनुष्ठान का महत्वपूर्ण दस्तावेज। वश भास्कर एक प्रबध काव्य है और विशद वणन के अनुकूल ही लिखा गया है और वस्तु प्रधान है। वश भास्कर पाठको को आतकित करता है तो सतसई उसे सतुष्ट करती है। भारत के वीर–साहित्य मे इस वीर सतसई का शीष स्थान है। लोकप्रियता की दृष्टि से सूयमल्ल जी की वीर सतसई को सर्वाधिक महत्व प्राप्त है। यहा भावो की सकीर्णता नही है। वीरत्व की प्रेरणा मिलती है। यह वस्तु प्रधान नही भाव प्रधान है। इसमे भावो की सावजनीनता और सावकालिकता है। सतसई वीर रसात्मक रचना है। सूयमल्ल का रचनाकम सोद्देश्य रहा। वे स्वदेश स्वाभिमान और स्वाधीनता के लिए समर्पित रहे और यही उनकी कविता का अन्तरग रूप है। सूयमल्ल जी की कविता मे उत्कृष्ट राष्ट्र प्रेम मिलता है और जो स्वाधीनता के लिए सघष करने के लिए प्रेरित करता है। सूयमल्ल जी की कृति मे राष्ट्रीय चेतना का निखरा स्वरूप है। वीर सतसई की भूमिका मे सपादकगण लिखते हैं जिस समय सतसई का निर्माण हुआ उस समय देश मे सन् ५७ के विद्रोह की ज्वाला भडक रही थी। सारा देश विदेशी सत्ता का तख्ता पलटने के लिए व्यग्र हो उठा था। गदर कालीन परिस्थिति का कवि पर बडा स्फूर्ति दायक प्रभाव पडा था उनकी इच्छा थी कि वे प्रेरणा देकर बिखरी हुई राजपूत शक्ति

को एक सूत्र मे बाध कर विदेशियो के विरुद्ध मोर्चे के लिए खड़ी कर दें। लोगों को प्रेरणा देने के लिए जो कुछ उन्होने लिखा पढ़ो को, वह सब तात्कालिक परिस्थितियो के दबाव के कारण पोशीदा रूप म हुई। काव्य की व्यजना शक्ति का प्रयोग इस पोशी देगन को बनाये रखने के लिए प्रचुर मात्रा मे किया गया। इस उद्देश्य को लेकर सवत् १६१४ म सूयमल्ल जी न उस महान् कृति का निर्माण शुरू किया जिसका नाम है वीर सतसई।' [वीर सतसई भूमिका, पृ० ७२]

वीर सतसई सूयमल्ल जी द्वारा सतसई परम्परा मे लिखा गया मुक्तक काव्य ग्रन्थ है और इसमे कुल २८८ दोहे हैं। यह काव्य वीर रस का अद्वितीय उदाहरण है। इसम प्रयुक्त रजपूत वस्तुत एक प्रतीक है और उसके माध्यम से ही वीर रस की सरिता बहती

वीर सतसई मे राष्ट्र प्रेम और जनआकुलता का विशद चित्रण हुआ है। प्रारभ मे ही कवि कहता है कि समय न पलटा खाया है अर्थात् क्राति का पदार्पण होन वाला है। सूयमल्ल जी तत्कालीन राजपूतो की विलासिता स्वेच्छाचारिता और उनकी अकमण्यता के साथ साथ अग्रेजो के सहयागी होत देखकर विक्षुब्ध हो उठते हैं।

इक डडो गिण एक री भूल कुल सभाव।
सूरा आलस ऐस मैं, अकज गुमाई आव।

समय पलटने का प्रभाव राजपूतो पर पड़ने लगा था। कवि उन क्रातिकारियो का स्वागत करता है जो सन् ५७ मे देश की गुलामी को मुक्त करने के लिए कमर कस कर युद्ध क्षेत्र मे आ गए थे और जो नही आ पाये उनका आव्हान करता है।

'हूँ बलिहारी राणिया, थाल बजाणे दीह।
बीर जमी रा जँ जणी साकल हीटा सीह।।

जिस धरती पर मनुष्य रहता है और जो उसके अधिकार मे है उससे उसका प्रेम होना स्वाभाविक ही है। मां अपन बच्चे को पालने मे ही देशहित के लिए और अपनी धरती का अन्य किसी को नही देन के लिए सिखाती है। इस राष्ट्रीय भावना का मूतरूप कवि ने इस प्रकार किया है। यह दोहा राष्ट्रीय चेतना का मूलस्रोत है।

इला न देणी आपणी हालरिया हुलराय।
पूत सिखावै पालणं मरण बडाय माय।

जहा पर वीर निवास करते है उन झोपडियों का वभव राज–प्रासादो से किसी भी तरह कम नही है और उन पर कीमती राज प्रासाद समर्पित किय जा सकते हैं

टोटे मरका भीतडा धाते ऊपर धास।
वारी जँ मह झू पडा अधपतिया आवास।।

अपनी भूमि के लिए तो सर्वस्व समर्पित किया जा सकता है इसके समक्ष धन की क्या कीमत है ? यह तो वीर भोग्या वसुन्धरा है—

कायर घर ऊढा कहे को धन जोडे काम।
कण कण सचे कीडिया, जोवे तीतर जाम।।

सूयमल्ल जी ने जिस नारी को अपने काव्य का आधार बनाया है वह भी वीर समाज म उपयुक्त ही है। वह वीरांगना है और यह असम्भव है कि उसके शरीर को कोई उसकी जीवितावस्था म स्पश भी कर ले। अपने वीर पति की अनुपस्थिति म शत्रु सेना द्वारा अकेली घरने पर वह क्षत्राणी– सिंहपुत्री तलवार उठाकर शत्रु सेना का मुकाबला करती है न कि टसूबे बहाती है। वह रणचडी बन जाती है।

गाठ गया सब गहरा, बनो अचानक आय।
मींढ्रण आई सींह्णी लीधो सेल उठाय॥'

सूयमल्ल जी ने स्त्री के गौरवपूर्ण पक्ष का यशगान पूर्ण आस्था के साथ किया है। व जिस वीरागना की पूजा करते हैं वह कायर नहीं है और न उसे कायर पति या पुत्र की चाह है। व कहते है कि वीर स्त्री सब कुछ सह सकती है लेकिन दूध को लज्जित करने वाला पुत्र और वलय [चूड़ी] को लज्जित करने वाला पति उसके लिए असह्य है इसीलिए वह कायर पुत्र और पति की कटु भत्सना करती है—

सहणी सबरी हू सखी, दो उर उलटी दाह।
दूध लजाणू पूत सम वलय लजाणू नाह॥

सूयमल्ल जी को इस समय एसे वीरो की आवश्यकता है जो गुलामी की लौह शृखलाओ को तोडने वाले हो। एक वीर स्त्री शत्रुओ को सावधान करती है कि मेरे पति को निद्रावश जानकर छेडो मत और यहा से भाग जाओ। तुम्हारे भाग जाने से ही तुम्हारी स्त्रियो का चूडा सुरक्षित रहेगा अर्थात् तुम्हारी अब कुशल नहीं है देखें—

नींदाणौ गिण ठेकला, पुलो न छेडो जीव।
जाय पुजाओ पाव ही चूडो थरण चिरजीवी॥

क्रांतिचेता कवि का यह आठ वर्षीय बालक शत्रु के लिए काल है—

भोला जाणो भूलिया बरसा आठा बाल
एक घराण सीहणी कवर जण सो काल।

कत्तव्य व प्रेम मे से किसी एक का चयन करना बडा कठिन कम है। ऐसी परीक्षा की घडी मे वीरो के समक्ष किसी प्रकार का अन्तसघष नहीं है। प्रेम की अपेक्षा कत्तव्य यहा सर्वोपरि है। व्यक्ति हित की अपेक्षा राष्ट्र हित प्रमुख है। वह कत्तव्य पालन व अपनी धरती के लिए सवस्व न्यौछावर करता है—

बब सुणायो बींद नू पैसता घर आय।
चवल साम्है चालियो अचल वध छुडाय।

विवाह मडप स आते हुए वर को युद्ध के नगाडे की आवाज सुनाई देते ही वह मदमस्त वीर योद्धा एक झटके स अपने का वचन छुडाकर समर क्षेत्र को उद्धत हो जाता है। वह क्षण भर के लिए भी नहीं विचलता। शत्रु–सना समक्ष है और ऐसे समय मे अपनी भूमि की रक्षा करना उसका प्रथम कत्त य है। यही कत्तव्य चेतना कवि जन जन मे चाहता था।

वीर पुरुष समय की प्रतीक्षा नहीं करता है। उसकी वीरता छुपी नहीं रह सकती है। वीरत्व उसका स्वभाव है और क्रांतियज्ञ में आहूति के लिए सदैव तत्पर रहता है। कवि कहता है—

नागण जाया चीटला सीहण जाया साव।
राणी जाया नह रूक सो कुम वाट सुभाव॥

नागिन से उत्पन्न सर्प शिशु, सिंहनी पुत्र और राजपूतों का स्वभाव है कि किसी के भी रोके नहीं रुकते। ये अपने स्वभावानुसार अपने कर्मक्षेत्र में सक्रिय होंगे ही और यह स्वाभाविक क्रिया है।

शूरवीर के लिए उत्साह और स्फूर्ति स्वाभाविक है। वह पैदा होते ही वीरोचित क्रियाएं करता है। यह उसका कर्म है। कवि कहते हैं—

थाल बजता ह मसी दीठो नण फुलाय।
बाजा रै सिर चेतनो भूणो कवण मिलाय॥

बलिदान और त्याग की भावना यहां के रक्त में घुलीमिली हुई है। चाहे पिता हो या पुत्र उनके लिए तो प्राणोत्सर्ग एक महत्ती कर्म है। वीर पुत्र अपने वीर पिता का स्थान ग्रहण करता है। यह एक दृष्टान्त द्वारा कवि स्पष्ट करता है—

धुर सूती मरियो धमन मकट हुचक्का खाय।
तिण रो बालो बाछडो तडे मथ लगाय॥

अपनी धरती की रक्षा बहादुर ही कर सकता है। संघर्षरत रहने वाला ही जीवित रहता है। वीर भोग्या वसुन्धरा है। अश्वारूढ़ होकर निरन्तर संघर्ष करने वाला ही अपने राज्य की रक्षा करता है। दृष्टव्य है—

घोडा घर ढाला पटल भाला थभ बणाय।
जे ठाकुर भोगे जमी और किसो अपणाय॥

ऐसा ही एक चित्र और दृष्टव्य है। वीर अपने ठाकुर या स्वामी के प्रति पूर्णत समर्पित होता है वह उससे विमुख होने की कल्पना भी नहीं कर सकता। अपने सशक्त स्वामी के ऋण की खुमारी उसकी मृत्यु पर ही उतर सकती है। यह धरती हमारी है और इसका नशा उतरना संभव नहीं है। अपने स्वामी के लिए प्राणोत्सर्ग करने के लिए वीर हमेशा तैयार रहता है—

डाकी ठाकर री रिजक ताखा री विष एक।
गहल मुवा ही उतरै सुणिया सूर अनेक॥

प्रकाश का महत्व अंधकार की तुलना से ज्ञात होता है। कायर व्यक्ति कहीं भी प्रशंसा अर्पित नहीं करता ह उसे सम्मान नहीं मिलता। वीर पत्नी भी उसे प्रताड़ित करती है। व्यंग्यात्मक उक्ति देखिये।

कत घरे किम आविया तेगा री घण त्राण।
लहगे मुझ लुकीजिये वरी रो न विसास॥

× × ×

कत मर्ता घर धाविया पहरीजै मा थग।
धब धण साजो घूम्पिया भव जै भटेन।।

कायर के पड़ोस में भी रहना कोई पसन्द नहीं करता। जहाँ प्राणों का बलिदान होता है सिर कटवाने को वीरवर तत्पर रहते हैं उस देश पर न्योछावर होने का आह्वान यह कवि करता है—

नह पड़ोस कायर नरां हसो वास सुहाय।
बलिहारी जिण देसड़े माथा मोल बिकाय।।

सूर्यमल्ल जी का यही आशय है कि बहादुरी और त्याग से ही देश का नाम ऊँचा होगा और यदि साहस, क्षमता, वीरता और मातृभूमि पर बलिदान की शक्ति है तो वह देश कभी गुलाम नहीं रह सकता है।

वीर सतसई के दोहे तथा अपनी अन्य स्फुट रचनाओं के माध्यम से सूर्यमल्ल जी ने अंग्रेजों के विरुद्ध युगीन जन चेतना जाग्रत की और आशा की कि संगठित होकर एक साथ प्रतिरोध किया जाय तो ये विदेशी सात समन्दर पार चले जायेंगे। कवि को समय की प्रतीक्षा थी और वह धीरे धीरे आ रहा था। वह प्रतीक्षा पूर्ण हुई। वे समय को पहचान गये। समय की अनुकूलता जानकर उन्होंने अपनी काव्य प्रतिभा का उपयोग किया और वीर सतसई का निर्माण किया जिसे सुन कर कायरों में भी उत्साह व शक्ति संचार हो जाय तथा वे अंग्रेजों का सामना कर सकें।

सतसई दोहामयी मीसण सूरज मास।
जपै भडाणी जठ सुन कायर सास।।

नयी रजागुण ज्या नरा का पूरी न उपांग।
व भी सुणता ऊफणै पूरा वीर प्रमाण।।

जै दोही पख ऊजला जूझण पूरा जोध।
सुणता वे भड सौ गुणा वीर प्रकासण बोध।

स्पष्ट है कि इस वीर सतसई का उद्देश्य राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम में राजपूतों का जूझ मरने के लिए संगठित शक्ति को जाग्रत करने हेतु किया गया था। यह हमारा दुर्भाग्य रहा कि पारस्परिक फूट, घात प्रतिघात, अपूर्ण तैयारी और संगठन शक्ति के अभाव से इस शक्ति का सम्यक विकास न हो सका और यह विद्रोह या स्वाधीनता संग्राम कुचल दिया गया। सर्वत्र गहन अंधकार छा गया और सभी स्वप्न भंग हो गये। ऐसे समय में सूर्यमल्ल जी का व्यथित हृदय निराशा से चीत्कार कर उठा—

जिण बन भूल न जावता गद गिवल गिडराज।
तिण वन जंबुक ताखडा ऊधम मंडै आज।।

जिस वन में हाथी, गैंडे और सूअर भूल कर नहीं जाते थे वनराज (सिंह) के निधन पर उसी वन में गीदड़ ऊधम मचा रहे हैं और इसी स्थान पर आकर महाकवि की वाणी मौन हो गई। यह देश का दुर्भाग्य था कि स्थानीय राजा नहीं जाग्रत हुए और क्रांति असफल हो गई। इस असफलता से वे व्यथित हो गये।

सूयमल्ल जी ने ठा० फूलसिंह जी पिपल्या को पत्र लिखा था। उसका अंश दृष्टव्य है– 'परन्तु मेरी यह बात आप याद रखिये कि जो इस बार अंग्रेज रह गया तो वही सर्वशक्तिमान हो जायेगा। पृथ्वी का मालिक कोई न रह सकेगा।' समय ने देखा है कि १८५७ की क्रांति की असफलता के पश्चात् अंग्रेज अधिक नृशंस अत्याचारी और बर्बर हो गये और उन्होंने दमन व प्रतिशोध के नये मार्ग तलाशे। लेकिन यह भी सत्य है कि अंग्रेजों पर किया गया यह प्रहार व्यर्थ नहीं हुआ और क्रांति का सूत्रपात हो गया जो आगे चलकर भारत की स्वाधीनता का आधार स्तम्भ बना।

महाकवि सूर्यमल्ल जन्मजात कवि थे व साधना से कवि नहीं बने। उनकी प्रतिभा उनका काव्य–कौशल, उनका रचना कर्म अद्वितीय है। वे वीररसात्मक रचना के लिए ही नहीं राष्ट्रीय चेतना और जन–जागति की दृष्टि से हिन्दी साहित्य के दीप रचनाकार हैं।



